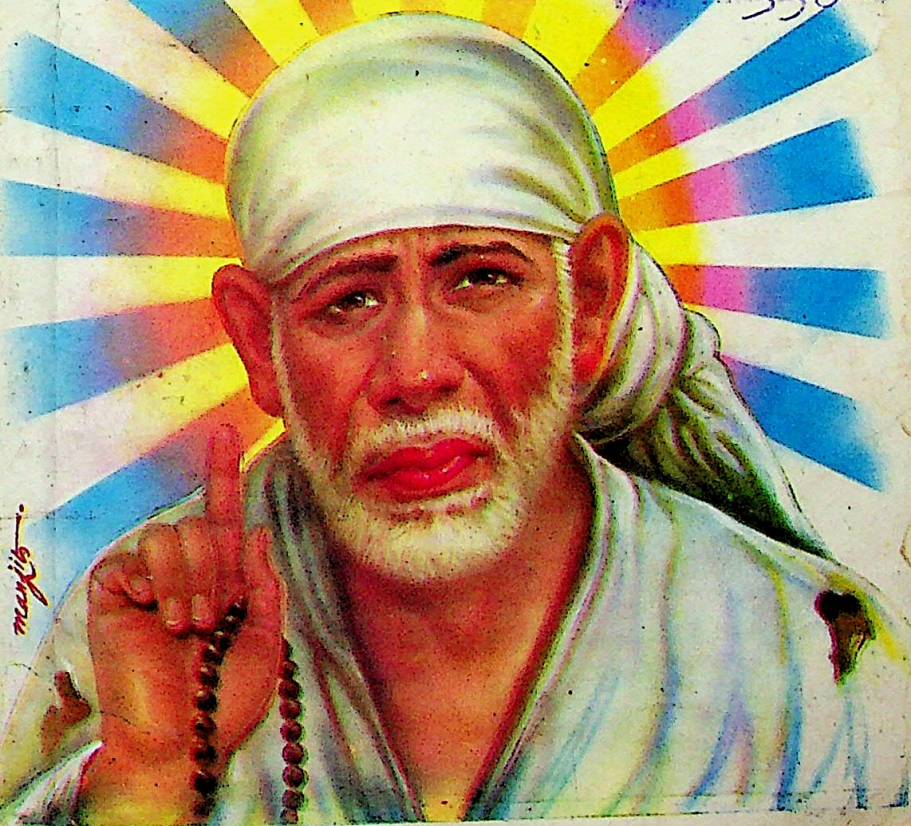
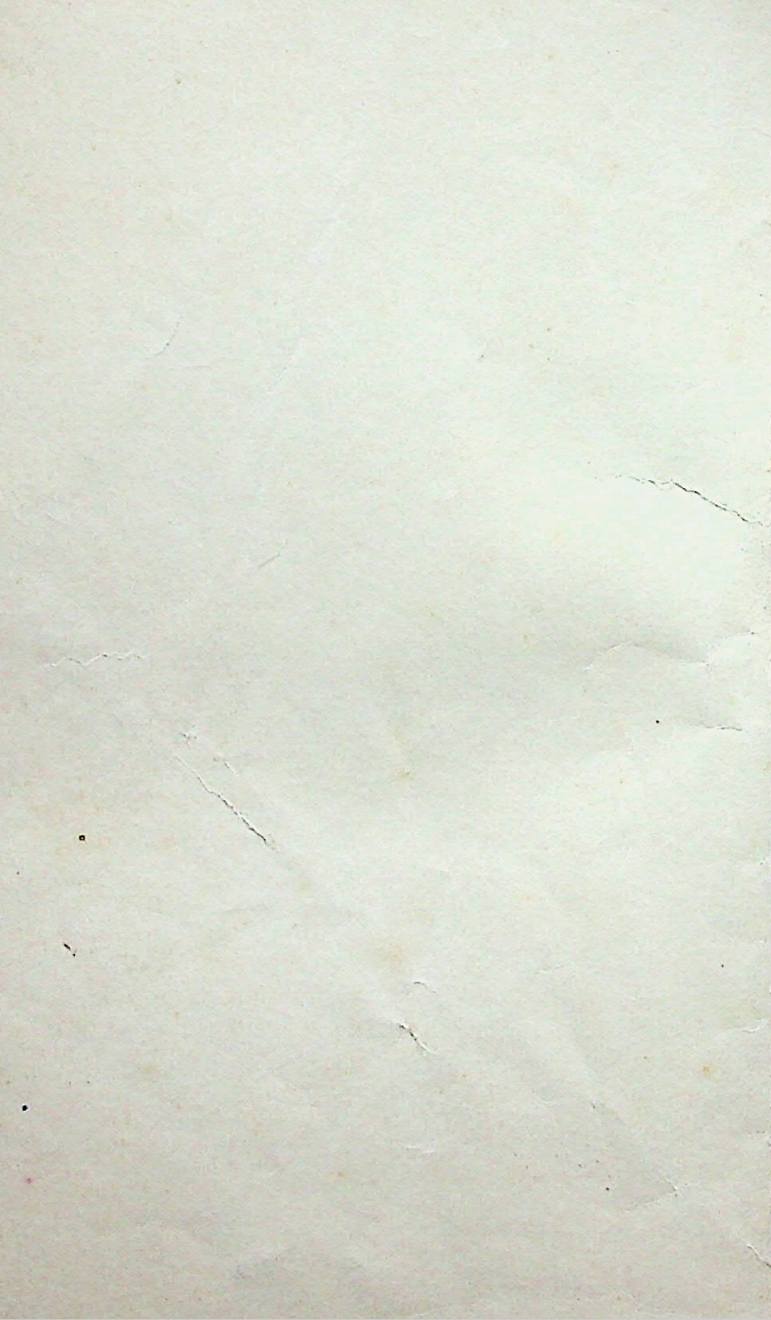


शिरडी के साई बाबा





अब तक जो भी हिन्दू, मुसलमान सन्त हुए हैं, उनमें शिरडी के साईं बाबा का स्थान सबसे भिन्न है। उन्होंने हिन्दू परिवार में जन्म लिया पर अपनी साधना का केन्द्र शिरडी की एक टूटी-फूटी मस्जिद को बनाया, जिसके कारण लोगों को आज भी यह विश्वास है कि वह जन्म से हिन्दू नहीं, मुसलमान थे। फिर भी वह मन्दिर में जाकर हिन्दुओं की मूर्ति पूजा भी करते थे, तब मस्जिद में जाकर नमाज पढ़ते थे। हिन्दू त्यौहारों को भी उसी धूमधाम से मनाते थे, जिस उल्लास के साथ वह मुस्लिम त्यौहारों को मनाया करते थे। उनकी दृष्टि में हिन्दू और इस्लाम धर्म मिलकर एक हो गए थे।

शिरडी के साईं बाबा का जन्म कब और कहाँ हुआ था? उनके माता-पिता कौन थे? वह किस जाति और धर्म के थे? इस सम्बन्ध में आज तक कोई प्रमाणित विवरण नहीं मिला है। साईं बाबा के भक्तों ने उनके सम्बन्ध में काफी खोज की है, फिर भी आज तक ये प्रश्न, प्रश्न ही बने हुए हैं। अतएव लोक-आधार पर जीवन-चरित प्रस्तुत है।

हमारे अन्य महत्त्वपूर्ण प्रकाशन

ज्योतिष सीरीज

भारतीय अंक ज्योतिष
ज्योतिष और काल निर्णय
रत्न ज्योतिष
फलित दर्पण
जन्म पत्रिका दर्पण
हस्त रेखा विज्ञान
पंचांगुली साधना
यंत्र विज्ञान
तन्त्र विज्ञान
मन्त्र विज्ञान
आइये ज्योतिष सीखें
आइये ज्योतिष सीखें
आइये ज्योतिष सीखें III
ज्योतिष रहस्य
यन्त्र सिद्धि रहस्य
तंत्र सिद्धि रहस्य
मंत्र सिद्धि रहस्य
मंत्र और ज्योतिष
शकुन और स्वप्न
भूत बाधा देह रक्षा
चाणक्य-सूत्र
दुर्गा सप्तशती (सचित्र)
गायत्री उपासना
विवाह और ज्योतिष
बृहत् हस्त रेखा विज्ञान

धार्मिक सीरीज

लक्ष्मी उपासना
गणेश उपासना
दुर्गा उपासना
शिव उपासना
हनुमान उपासना
सरस्वती उपासना
मारकण्डेय पुराण
सूर्योपासना
हरिवंश पुराण
श्रीमद्भागवत पुराण
शिव पुराण
श्रीमद्देवी भागवत पुराण
श्री विष्णु पुराण
गरुड पुराण
श्रीमद्भगवद् गीता
व्रत और त्योहार

खेल-कूद सीरीज

जूडो-कराटे
क्रिकेट कैसे खेलें

योग स्वास्थ्य सीरीज

सम्पूर्ण योगासन
योगासन और रोग निवारण
योगासन और महिलाएं
एक सौ एक वर्ष कैसे जियें
घरेलू इलाज

साधना पॉकेट बुक्स

३६ यू० ए० बैंगलो रोड, दिल्ली-११०००७

शिरडी के साई बाबा

[शिरडी के महान संत की सच्ची कहानी]

प्रस्तुति
पं० राकेश शास्त्री

शिरडी पुस्तकालय

(संज्ञावना शिरडी केन्द्र)

क्रमांक.....

336



साधना पॉकेट बुक्स

प्रकाशक : साधना पॉकेट बुक्स

39 यू० ए० बंग्लो रोड

दिल्ली-110007

दूरभाष : 2914161

2516715

© प्रकाशकाधीन

संस्करण : 1998

मूल्य : 20/-

मुद्रक : जी० आर० प्रिंटर्स,
गांधी नगर, दिल्ली-110031

साहसी मल्लाह

ब्राज का आंध्रप्रदेश उस समय हैदराबाद रियासत के नाम से प्रसिद्ध था।

इसी रियासत में पन्नी गांव था। इसी पन्नी गांव में एक ब्राह्मण परिवार रहता था। इस परिवार के पूर्वज उत्तरप्रदेश के निवासी थे, पर जीविका के लिये पन्नी गांव में आकर बस गये थे। कान्यकुब्ज वर्ग का यह भारद्वाज गोत्रीय ब्राह्मण परिवार कथा वाचन और पूजापाठ के द्वारा अपनी जीविका चलाता था। गरीबी में दिन कटते थे। कोई स्थायी सम्पत्ति नहीं थी। रोज कमाना और रोज खाना। यह ब्राह्मण परिवार मिट्टी और फूस से बनी एक झोपड़ी में रहता था। रूखा-सूखा खाकर कठिनाई से जीवन यापन करता था।

पन्नी गांव नदी के किनारे बसा हुआ था। इसी गांव में गंगा भाव-डिया नाम का एक मल्लाह भी रहता था। वह प्रायः इस ब्राह्मण परिवार की आर्थिक सहायता कर दिया करता था। गंगा भावडिया की पत्नी का नाम देवगिरि यम्मा था। वह दोनों बहुत ही सीधे-साधे और धार्मिक विचारों के थे। उनकी जीविका का साधन उनकी नाव थी, जिससे दिन में गंगा भावडिया नदी पर आने-जाने वाले यात्रियों को नाव द्वारा नदी पार करा कर पैसा पैदा कर लेता था। पति-पत्नी दोनों का ही बड़े आराम से गुजारा हो जाता था। पति-पत्नी दोनों ही सन्तोषी और धर्म परायण थे।

जो कुछ मिल जाता था, उसी को खाकर सन्तोष कर लेते थे और फुसंत के समय भगवान की आराधना करते थे ।

वैसे विवाह को कई साल बीत चुके थे । देवगिरि यम्मा की गोद सूनी ही थी । पति-पत्नी भगवान से यही प्रार्थना करते थे कि उन्हें वह एक पुत्र दे दे ताकि उनका वंश चल सके । घर पर जो भी साधु-संन्यासी या भिखारी आ जाता था, उसकी यथाशक्ति खूब सेवा और सत्कार करना अपना धर्म मानते थे । उनका विश्वास था कि प्रत्येक प्राणी में भगवान का वास है । अतिथि को तो वह भगवान का साक्षात् स्वरूप ही मानते थे । उसकी सेवा भगवान की सेवा है । उसका सत्कार भगवान का सत्कार है । वह यह भी सोचा करते थे कि न जाने कब कौन साधु या संन्यासी अथवा भिखारी आशीर्वाद दे दे और उनके जीवन की यह एकमात्र साध शायद पूरी हो जाए ।

कई साल बीत गए । उनकी यह कामना अधूरी की अधूरी ही रही ।

एक दिन शाम से ही आकाश पर काले-काले बादल घुमड़ रहे थे । नदी पार आने-जाने वाले यात्रियों ने अपनी यात्रा स्थगित कर आस-पास के गांवों में शरण ले ली । तब घाट सूना हो गया था । गंगा भावड़िया अपनी नाव नदी के किनारे के पीपल के एक पेड़ के तने से बांधकर शाम होने से पहले ही घर वापस चला आया !

संध्या समय पति-पत्नी ने भगवान की पूजा की । फिर खाना खाकर बिस्तर पर जा लेटे । कुछ देर तक गंगा भावड़िया घाट पर आने वाले साधु-सन्तों से सुनी हुई भगवान और उनके भक्तों की कहानियां अपनी पत्नी को सुनाता रहा और फिर दिन भर के थके हारे पति-पत्नी नींद की गोद में चले गये । रात अधिक बीत चुकी थी । बादल जोर से गरजने लगे । बिजली कड़कने लगी । हवा में तेज़ी आ गई और फिर बहुत ही तेज मूसलाधार बारिश भी होने लगी । बादलों की गरज और बिजली की कड़क से गंगा भावड़िया देवगिरि यम्मा की आंखें खुल गई । देवगिरि यम्मा उठकर आंगन में चली गई और वहां बिखरी चीजें ठीक-ठाक करने लगी ।

गंगा भावड़िया को अपनी नाव की याद आ गई । एक पीपल के पेड़ के तने से बांध आया है । जिस रस्सी से नाव बांधकर आया था, वह तो पुरानी और बहुत ही कमजोर थी । वर्षा इतने जोर से होगी आशा न थी ।

जब भी वर्षा होती थी, गांव के पास बहने वाली वह छोटी-सी पहाड़ी नदी उफन जाती थी। अगर वर्षा इसी तरह होती रही, तो नदी विकराल रूप धारण कर लेगी और उसकी फुंफकारती लहरें पेड़-पौधों, खेत-खलिहानों और कई गांवों को अपनी विनाशकारी बांहों में समेट उनका नाम-निशान ही मिटा देंगी।

अगर नाव वह गई या डूब गई तो क्या होगा? यही नाव उसकी जीविका का एकमात्र साधन है। इसीसे वह गुजारा करता है। कई वर्ष पहले किसी महाजन से कर्ज लेकर उसने नाव बनवाई थी। एक वक्त भूखे पेट रहकर न जाने कितनी कठिनाइयों का सामना कर वह कर्ज किसी प्रकार चुकाया था।

वह तेजी से विस्तर से उठा। अपनी पत्नी से बोला, "तुम चलकर दरवाजा बन्द कर लो। मैं घाट जा रहा हूं। नाव को किसी ऊंची जगह पर मजबूत रस्सी से बांध आऊं।"—देवगिरि यम्मा उसका मुंह ताकने लगी।

"रात आधी से अधिक बीत चुकी है। मूसलाधार बारिश हो रही है। रास्ते में कीचड़ और पानी भरा होगा। ऐसे समय में तुम ना जाओ, नाव को कुछ नहीं होगा। भगवान पर भरोसा रखो।"

"तू तो पगली है देवयम्मा, भगवान, उन्हीं की सहायता और रक्षा करता है, जो अपनी सहायता और रक्षा करते हैं। कोठरी में से नई रस्सी लाओ।"

गंगा भावड़िया ने कोने में रखी अपनी लाठी उठाते हुए कहा, फिर अपनी पत्नी को तसल्ली देते हुए कहा, "घाट है ही कितनी दूर और फिर घाट तक जाने वाले रास्ते को मेरे पांव खूब पहचानते हैं। मुझे कोई भी परेशानी नहीं होगी। तू फिकर ना कर।"

तब देवगिरि यम्मा ने कोठरी से लाकर नई रस्सी पति को दे दी।

और गंगा भावड़िया रस्सी कन्धे पर रख हाथ लाठी ले उस अंधेरी बरसाती रात में नदी की ओर चल पड़ा।

तब देवगिरि यम्मा अपने पति को छोड़ने दरवाजे तक गयी। चौखट पर खड़ी होकर वह उस आंधी-पानी भरी अंधेरी रात में नदी के घाट की ओर जाते हुए अपने पति को देखती रही। रात इतनी अंधेरी थी कि दो कदम दूर जाते ही गंगा भावड़िया उसकी आंखों से ओझल हो गया। वह

अपने पति की रक्षा के लिए मन ही मन भगवान से प्रार्थना करने लगी । साथ ही वह अपनी गरीबी और बेवसी के बारे में सोच रही थी । उसकी आंखें गीली हो गयी थीं ।

अभी गंगा भावड़िया को गये कुछ ही समय बीता था कि चबूतरे की सीढ़ियों पर किसी के पैरों की आहट सुनकर देवगिरि यम्मा चौंक पड़ी, “इतनी रात गए कौन है ?”

उसने अंधेरे में डूबी चबूतरे की सीढ़ियों की ओर आंखें फाड़-फाड़ कर देखा । वहां कोई न था ।

बहुत अंधेरी रात थी । वह अपने घर में अकेली थी । उसने उठकर जल्दी से दरवाजा बन्द किया और फिर अपने बिस्तर पर आकर चुपचाप लेट गई । नींद न आ रही थी ।

उसने घर के बाहर होने वाली आहट पर ध्यान ही नहीं दिया । वह अपने पति के लिये चिंतित थी । वह बड़ी बेकरारी से उसके वापस आने का इन्तजार कर रही थी ।

विचित्र अतिथि

देवगिरि यम्मा की आंखों में नींद न थी । उसे बिस्तर पर लेटे थोड़ी-सी देर हुई थी कि किसी ने फिर दरवाजा खटखटाया ।

देवगिरि यम्मा उठकर बैठ गई । एक पल के लिए उसे डर महसूस हुआ । फिर सोचा, हो सकता है इस आंधी-पानी में भटका हुआ कोई बेसहारा यात्री आ गया हो । गांव के लोग लोग तो अर्पने-अपने घर में आराम से सोए पड़े हैं । यह सोचकर उठी । बुझा हुआ दीया फिर से जलाया और दरवाजे की ओर बढ़ गई । दरवाजा खोला तो देखा दरवाजे पर साठ-सत्तर साल का एक बूढ़ा खड़ा था । सिर पर लम्बे-लम्बे सफेद बाल; लम्बी सफेद दाढ़ी । बड़ी-बड़ी बूढ़ी आंखों से निराशा टपक रही थी । सारे कपड़े भीगे हुए थे और उसके पांव कीचड़-सने हुए थे ।

उसने देवगिरि यम्मा से गिड़गिड़ा कर कहा, “बेटी, रात को सिर छिपाने के लिए थोड़ी-सी जगह दे दो ? कई घरों के दरवाजे खटखटाए लेकिन किसी ने दरवाजा नहीं खोला । निराश होकर मैं तुम्हारे दरवाजे पर आया हूँ । बेटी, तुम मुझे जरूर सहारा दोगी ।”

उसकी प्रार्थना सुनकर देवगिरि यम्मा का दिल भर आया । उसने कहा, “बाबा आप यहाँ बरामदे में सो जाइए । इधर पानी नहीं आयेगा ।”

और उसने जलता हुआ दीपक वहाँ पर रख दिया ताकि अन्धकार के कारण उस बूढ़े को किसी प्रकार का कष्ट न हो । बूढ़े की हालत देखकर बड़ा तरस आ रहा था । बोली, “आपके तो सारे कपड़े भी भींग गए हैं । आपके लिए मैं कपड़े लाती हूँ । आप मेरे पति के कपड़े पहिन लें ।”

“नहीं बेटी, मेरे पास कपड़े हैं । बिस्तर की भी जरूरत नहीं पड़ेगी । यहीं कोने में अपना कम्बल बिछाकर सो जाऊँगा ।”

“मैं आपके लिए चारपाई और बिस्तर ला देती हूँ, बाबा । आराम से लेटिए । शायद आपने खाना भी नहीं खाया है । मैं रोटियाँ बना देती हूँ ।

देवगिरि यम्मा तेज़ी से अन्दर चली गई ।

चारपाई लाकर बिछा दी और फिर बिस्तर भी लगा दिया ।

जल्दी-जल्दी चुल्हा सुलगाया । फिर बूढ़े अतिथि के लिए वह खाना बनाने लगी । थोड़ी देर में खाना बन गया, तो बूढ़े अतिथि को भोजन परोस दिया ।

खा-पीकर बूढ़ा बोला, “भगवान तुम्हारी मनोकामना पूरी करे बेटी । तुमने एक भूखे को भोजन और आश्रय देकर पुण्य का काम किया है । भगवान इसका फल जरूर देंगे । जाओ, अब सो जाओ । रात बहुत हो गयी है, सो रहो ।”

देवगिरि यम्मा ने दरवाजा बन्द कर लिया, फिर बिस्तर पर आकर लेट गई । अतिथि के आ जाने के कारण वह थोड़ी देर के लिये अपने पति को भूल गई थी ।

देवगिरि यम्मा को फिर अपने पति का स्मरण आ गया । वह उठकर बैठ गयी । उसका पति अभी तक न आया था ।

तभी बाहर फिर कोई दरवाजा खटखटाने लगा ।

देवगिरि ने सोचा उसका पति लौट आया है ।

रवाजा खोल दिया उसने ।

दरवाजे पर उसका पति नहीं, वरन् वही बूढ़ा खड़ा था ।

“क्या बात है बाबा ?”—देवगिरि ने पूछा ।

“कैसे बताऊँ बेटी, सुबह से ही चल रहा हूँ । बुढ़ापे का शरीर और इतना लम्बा सफर, मैं बुरी तरह थक गया हूँ । मेरे दोनों पाँव बेतरह दर्द कर रहे हैं । तुमने मुझे भोजन दिया, जगह दी, लेकिन बेटी, मेरे पैरों में तो बड़ा दर्द हो रहा है कि नींद ही नहीं आ रही है ।”—उस बूढ़े की आंखों में आंसू आ गये । शायद वह अपनी पीड़ा बरदाश्त न कर पा रहा था ।

देवगिरि असमंजस में पड़ गयी ।

“कहते हुए अच्छा तो नहीं लगता है बेटी, पर मजबूरी है । मैंने तुम्हें बेटी भी कहा है । भला एक बाप को अपनी बेटी के सामने अपना दुख बतलाने में शर्म कैसी ! अगर मेरे पाँव दबा दो तो मुझे नींद आ जाए । नहीं तो सुबह-सुबह होते-होते मैं बीमार पड़ जाऊंगा ।”

बूढ़े की बात सुनकर देवगिरि गहरे सोच में पड़ गई । अपने पति के अतिरिक्त पराये पुरुष के पैर दबाना अनुचित था, पर अतिथि तो भगवान ही है । फिर यह बूढ़ा तो पिता से भी अधिक उम्र का है । यदि मेरे पिता बीमार होते तो क्या मैं उनकी सेवा न करती ? यही सोचकर देवगिरि यम्मा तैयार हो गयी । उसे बुरा न लगा ।

वह चुपचाप उस वृद्ध अतिथि के पैरों को प्रसन्न भाव से दवाने लगी । अतिथि सेवा करना पाप नहीं है । अभी वह पूरी तीर पर पैर दबा भी न पायी थीं, कि यकायक फिर किसी के कदमों की आहट सुनाई पड़ी । देवगिरि यम्मा ने देखा, एक बुढ़िया सामने आ गयी थी ।

“अरे तुम आ गईं भगवती ?”—अतिथि उस बुढ़िया को देखते ही बोला, “तुम अंधेरे में न जाने कहां भटक गईं थीं । बहुत खोजा । तुम दिखाई नहीं दीं । हारकर मैं इधर चला आया । बड़ी अच्छी बेटी है यह । भरपेट खाना खिलाया है । सोने के लिए इस बरामदे में चारपाई और बिस्तर दिये । फिर भी मेरे पैरों में बड़ा दर्द हो रहा था । नींद ही नहीं आ रही थी । तब मैंने कहा, बेटी, मेरे पैर दबा दो । बेचारी मेरी सेवा कर रही है । अच्छा हुआ । तुम आ गयीं ।”

बूढ़े की बात सुनकर बुढ़िया और पास आ गयी । उसने बगल में दबी

पोटली बरामदे के एक कोने में रख दी और अपने भीगे कपड़ों को निचोड़ने लगी। वह पति को देखकर संतुष्ट थी।

“यह मेरी पत्नी है बेटी। अंधेरी रात में हम एक-दूसरे से बिछुड़ गए थे। अब तुम जाकर सो जाओ। भगवती आ गई है। वही दवा देगी।”

देवगिरि यम्मा उसके पास से उठ गयी। दरवाजा बन्द किया और अपने बिस्तर पर आकर लेट गयी।

वह पति के आने की प्रतीक्षा कर रही थी। उसका पति अभी तक वापस न आया था। मन चिन्ता से भर गया था। वह बहुत कोशिश कर रही थी जागने की, पर नींद आ गयी। जाने कब वह सो गयी? उसे पता ही न लगा। बाहर बारिश जारी थी। वैसा ही अंधकार छाया हुआ था। सारा गांव मुरदों के समान खामोश था।

देव-दर्शन

रात का घना अन्धकार चारों ओर फैला था। पूरा गांव सन्नाटे में डूबा था।

तब सवेरा नहीं हुआ था। आकाश पर काली घटाएं मंडरा रही थीं। इस कारण लग रहा था कि जैसे अभी मात्र आधी रात ही बीती है।

यकायक दरवाजे पर फिर आहट सुनकर देवगिरि यम्मा जाग उठी। दरवाजा खोला।

जैसे ही दरवाजे के बाहर नज़र डाली, वह आश्चर्य चकित रह गयी। एकटक देखती रह गयी। उसे विश्वास न हो रहा था—सामने भगवान शंकर और पार्वती...

“आ...आ...आप...?” देवगिरि यम्मा ने लड़खड़ाकर कुछ कहना चाहा, पर आगे न बोल सकी।

“हां बेटी, मैं शिव हूं। यह पार्वती। जिनकी तुम और तुम्हारे पति रात दिन पूजा करते हैं। हम तुम्हारी भक्ति और सेवा भावना से प्रसन्न

हुए हैं।"—भगवान शंकर ने अपना दायां हाथ देवगिरि यम्मा के सिर पर रखते हुए कहा।

तब देवगिरि यम्मा की आंखों से प्रसन्नता की गंगा-जमुना बहने लगी। वह भगवान शिव और पार्वती के चरणों में गिर गई और बेतरह फूट-फूटकर रो पड़ी।

"मत रो प्यारी बेटी। आज से तुम्हारे सारे दुखों का अन्त हो गया है। सन्तान न होने के कारण तुम बहुत दुखी हो। तुम्हारी यह मनोकामना अवश्य ही पूरी होगी। तुम बहुत शीघ्र मां बनोगी। दो सन्तानों के बाद तीसरी सन्तान के रूप में मैं स्वयं तुम्हारे घर पुत्र रूप में जन्म लूंगा।" भगवान शिव ने देवगिरि यम्मा को उठाते हुए कहा, "तुम बिल्कुल चिन्ता न करो। थोड़ी देर में तुम्हारा पति भी आने वाला है। तुम्हारा जीवन आनन्दपूर्वक बीतेगा।"

देवगिरि यम्मा के सुख और आनन्द की कोई सीमा न रही तब। वह आश्चर्य में डूबी भगवान शिव और पार्वती को देखती ही रह गयी। उनकी अमृत वाणी सुनकर जैसे वह अपनी चेतना ही खो बैठी थी। उसके मुँह से एक भी शब्द नहीं निकला। आंखों से बराबर आंसू बह रहे थे।

भगवान शिव और पार्वती ने देवगिरि यम्मा के सिर पर हाथ रख उन्हें आशीर्वाद दिया और यकायक अन्तर्ध्यान हो गए।

देवगिरि यम्मा चकित रह गयी। उसको अपनी आंखों पर विश्वास न हो रहा था। लग रहा था, मानो उसने सपना देखा है। वह बड़ी देर तक ठगी-सी खड़ी रह गयी।

भगवान शिव और पार्वती के अन्तर्ध्यान हो जाने के काफी देर के बाद देवगिरि यम्मा सामान्य स्थिति में आ सकी। जब वह पूरी तरह सामान्य स्थिति में आ गई, तब सोचने लगी कि अभी थोड़ी देर पहले जो कुछ उसने देखा था, क्या वह स्वप्न था? क्या भगवान शिव और पार्वती ने उसे सच-मुच दर्शन दिए हैं? पति के जाने के बाद वह अतिथि आया था। उसके लिए खाना बनाया, बरामदे में चारपाई और विस्तर बिछाकर लिटा दिया, बिस्तर बरामदे में पड़ी चारपाई ज्यों-का-त्यों बिछी हुई है। फिर यह अभी भी स्वप्न कैसे हो सकता है? अभी सब इन्हीं विचारों और रात बीतने को आ गयी।

आकाश पर घटाएँ छँटने लगी थी और वर्षा भी थम चली थी।

तब पौ फटने पर भावड़िया घर वापस आया।

वह रात को ही नदी के घाट पर न जाता, तो उसकी नाव अवश्य ही डूब जाती। घर से घाट तक आते-आते वह वर्षा से बहुत भींग गया था। रास्ते में पानी कीचड़ खूब भर गया था। घाट तक पहुँचने में बड़ी कठिनाई हुई थी। इसलिए वह घाट पर ही अपनी नाव एक ऊँची जगह पर एक पेड़ से बांधकर घाट पर बने मन्दिर के बरामदे में थककर लेट गया था।

घर पहुँचा तो यह सोचकर चिन्तित था कि उसकी पत्नी सारी रात उसकी प्रतीक्षा करती रही होगी। पता नहीं डर के मारे बेचारी रात भर सो भी पाई होगी या नहीं? वह यही सब सोचता हुआ जब घर पहुँचा, तो देवगिरि के मुस्कुराते चेहरे को देखकर हैरान रह गया।

“क्या बात है देवगिरि, आज तुम बहुत प्रसन्न हो?”—गंगा भावड़िया ने पत्नी को ध्यान से देखते हुए पूछा—“तुम मेरे चले जाने के बाद रात भर अकेली रहने के कारण नाराज रही होगी। शायद तुम्हें रात भर नींद भी न आई होगी। लेकिन तुम तो इस समय बहुत खुश दिखाई दे रही हो। बात क्या है?”

तब देवगिरि यम्मा ने अतिथि के आने, भोजन कराने की पूरी कहानी बतलाने के बाद बताया कि वह साक्षात् शिव और पार्वती थे। फिर उसने शिव-पार्वती द्वारा दिए गए वरदान के बारे में भी बता दिया।

“भगवान शिव और मां पार्वती मेरे घर आये और मैं अभाग्य उस टूटी-फूटी नाव के लालच में घाट पर ही पड़ा रहा। गंगा भावड़िया ने पश्चात्ताप के स्वर में कहा—“मैं भी भगवान के दर्शन करूँगा। मैं इस सारी मोह माया, घर-बार को छोड़कर जंगल में चला जाऊँगा और तपस्या करूँगा। जब तक भगवान के दर्शन न होंगे, मेरी आत्मा को हरगिज चैन नहीं मिलेगा।”

“भला घर-बार छोड़ने की जरूरत क्या है। भक्ति में शक्ति होगी तो भगवान हमें फिर घर आकर जरूर दर्शन देंगे।”—देवगिरि यम्मा ने पति से कहा, “फिर जब भगवान स्वयं हमारे घर जन्म लेने वाले हैं, तो उन्हें खोजने के लिए भेटकने या तपस्या करने के लिए घर छोड़कर जाने की जरूरत क्या है? आप अब घर में ही रहिए। भगवान की कृपा से हमारी

सभी मनोकामनाएं अब पूरी हो जायेगी ।”

गंगा भावड़िया की समझ में देवगिरि यम्मा की बात नहीं आई। वह उठते-बैठते बस यही रट लगाए रहता, “मैं अभागा हूं। भगवान मेरे घर आए और मैं उस टूटी-फूटी नाव के मोह में सारी रात घाट पर पड़ा रह गया ।”

समय बीतता गया। देवगिरि यम्मा यथासमय गर्भवती हुई। उसने एक साथ दो शिशुओं को जन्म दिया।

वर्षों से सूने पड़े घर का आंगन नन्हें-नन्हें शिशुओं की किलकारियों से गूँजने लगा। गंगा भावड़िया को कोई खुशी न हुई। बच्चों के प्रति उसके मन में रक्ती भर भी मोह-ममता न थी।

सुबह ही नदी घाट पर चला जाता। शाम होने तक वहीं रहा करता था। सारे दिन जो मजदूरी मिलती, देवगिरि यम्मा को दे देता था।

दो बच्चों को जन्म देने के बाद देवगिरि यम्मा, जब फिर गर्भवती हुई। तब गंगा घरबार छोड़कर चला गया।

देवगिरि बहुत परेशान हुई। वह जीवन भर पति को परमेश्वर समझ कर पूजती आई थी। जब से विवाह हुआ था, पति-पत्नी एक दिन के लिए भी एक दूसरे से अलग नहीं हुए थे। दो बच्चों की मां देवगिरि यम्मा पर जिसके गर्भ में तीसरा शिशु पल रहा था, तब विपत्तियों का पहाड़ टूट पड़ा था। उसे पूरा विश्वास था कि भगवान शिव और पार्वती का दिया हुआ वरदान व्यर्थ नहीं होगा। तीसरे शिशु के रूप में स्वयं भगवान शिव उसके गर्भ से जन्म ले रहे हैं।

ब्राह्मण परिवार ने देवगिरि यम्मा को बहुत सांत्वना दी और उसके दोनों बच्चों की देखभाल भी यह करते थे। देवगिरि यम्मा अपने दोनों बच्चों को ब्राह्मण परिवार को सौंपकर निश्चिन्त थी।

देवगिरि यम्मा कई दिनों तक सोचती रही। अन्त में यही निश्चय किया कि पति की तलाश करेगी वह।

अपने दोनों बच्चों को उसी परिवार को सौंपकर वह अपने पति की खोज में घर से निकल गई।

भगवान के दर्शनों के लिए गंगा भावड़िया गांव के पास बहने वाली नदी के किनारे के एक घने वन में तपस्या कर रहा था। उसने खाना-पीन

सब छोड़ दिया था। एक पेड़ के नीचे बैठकर भगवान का नाम स्मरण करने लगा था।

देवगिरि यम्मा ने अपने पति को खोज लिया और रात-दिन सेवा करने लगी। घास-फूस की एक झोपड़ी बना ली और पति की यथाशक्ति सेवा करते हुए उस दिन की प्रतीक्षा करने लगी, जब भगवान शंकर शिशु के रूप में जन्म लेने वाले थे। गंगा भावड़िया को इतना वैराग्य हो गया था कि वह अपनी पत्नी को अपने साथ रखने के लिए तैयार नहीं था। वह पत्नी को सबसे बड़ी बाधा समझता था। एक दिन वह रात के अन्धेरे में चुपचाप वहां से भाग गया। जब देवगिरि यम्मा की आंख खुली, तो वह पति को अपने स्थान पर न देखकर घबरा गयी। पहले तो उन्होंने सोचा कि शायद वह नदी किनारे होगा। वह नदी किनारे पहुंची। गंगा भावड़िया का कुछ भी पता न था।

देवगिरि यम्मा समझ गई। पति फिर छोड़कर चला गया। वह पति के निशानों को खोजकर निशानों के सहारे आगे बढ़ने लगी।

तभी उसे प्रसव पीड़ा होने लगी। उसका बुरा हाल था। पेट में धीमी-धीमी दर्द की लहरें उठ रही थीं। अपने पति को खोजने की धुन लगी थी। वह भूल गई कि इस तीसरे शिशु के रूप में स्वयं भगवान शिव जन्म लेने वाले हैं।

उस घने जंगल में भटकते-भटकते दोपहर चढ़ गई। यकायक देवगिरि ने जोर की प्रसव पीड़ा महसूस की। वह दर्द से तड़पती हुई वह एक पेड़ का सहारा लेकर वहीं पर बैठ गई।

सूना जंगल... दूर तक कहीं भी इन्सान का नाम-निशान नहीं। कुछ देर तक देवगिरि यम्मा प्रसव पीड़ा से छटपटाती रही। फिर एक नन्हें शिशु को जन्म दे दिया। पास ही पड़े पत्थर उठाए। एक पत्थर पर शिशु की नाल रखकर दूसरे पत्थर की एक ही चोट से उसे काट दिया। तब नवजात शिशु को लेकर घिसटती हुई, वह थोड़ी दूर पर नदी किनारे पहुंच गई। नदी के जल से शिशु को स्नान कराया और फिर शिशु को गोद में लेकर एक पेड़ के नीचे बैठ गयी।

सूर्यास्त नहीं हुआ था। कई दिनों से पति के साथ निराहार रहकर भगवान की पूजा करते रहने के कारण उसने स्वयं भी कुछ नहीं खाया

था। फिर भी एकशिशु को जन्म दिया था। वह बहुत कमजोर हो गई थी। चलना दूभर हो रहा था। इस पर भी किसी प्रकार पुनः पति की खोज में चल पड़ी। उसे पति नाम की ही रट लगी थी। कुछ देर बाद वह एक ऐसे रास्ते पर पहुंच गई, जहां बैलगाड़ी के पहियों के निशान थे। बैलगाड़ी के निशानों को देखकर मन को तसल्ली हुई। विश्वास हो गया कि अब वह इस रास्ते के सहारे चलती हुई किसी-न-किसी गांव तक जरूर पहुंचेगी। इस शिशु के साथ उसको कहीं न कहीं आश्रय मिल जायेगा। अब पति के स्थान पर शिशु की चिन्ता अधिक सताने लगी थी। मन को तसल्ली मिल जाने के कारण कुछ राहत की सांस ली और वहीं पर बैठ गई। शिशु छटपटा रहा था, रो रहा था। तभी थकान और कमजोरी के कारण चक्कर आ गया। संभलने की बहुत कोशिश की लेकिन वह स्वयं को संभाल न पायी। वह एक ओर लुढ़क गई। शिशु हाथों से छूट गया और वह उस रास्ते पर जा गिरा, जहां बैलगाड़ी के पहियों के निशान बने थे।

किस्मत का खेल

सूर्य आकाश के पश्चिमी छोर पर पहुंच गया था। एक किसान युवक बैलों को भागने लगा। वह अपनी युवा पत्नी को ससुराल से लेकर आ रहा था। रात घिरने से पहले ही वह इस घने जंगल से निकल जाना चाहता था। उसने अपनी बैलगाड़ी जोर-जोर से हांकना शुरू कर दी। बैलगाड़ी सरपट भागी जा रही थी। चट्टानों के बीच उस ऊबड़-खाबड़ पथरीले रास्ते पर बैलगाड़ी दौड़ती चली जा रही थी।

अचानक बैलों को उसने रोक दिया। भागते हुए बैल लड़खड़ाकर यकायक रुक गए। युवक गाड़ी से नीचे कूदा और उस नन्हें से शिशु को उठा लिया, जो बीचोंबीच पड़ा था। अगर वह ध्यान न देता तो शायद उसकी नजर उस बच्चे पर न पड़ती और वह नन्हा-सा शिशु बैलों और पहिए के नीचे कुचलकर मर जाता, पर अचानक उसने देख लिया था।

इसी कारण उसने एक झटके से बैलगाड़ी रोक दी थी।

उस युवक ने बच्चे को उठाया और अपनी पत्नी की गोद में डाल दिया। शिशु वेहोश था। युवक की पत्नी ने शिशु को देखा। बहुत ही सुन्दर और प्यारा-प्यारा बच्चा। उसने बच्चे को सीने से लगा लिया। उसके मन में ममता जाग उठी थी। वह अभी तक मां नहीं बन पाई थी। उस शिशु को सीने से लगाते ही उसका मातृत्व जाग उठा। यकायक जंगल में इस प्रकार असहाय शिशु को पाकर वह चकित थी। युवक को भी बड़ा आश्चर्य हो रहा था। दोनों एक दूसरे की ओर देख रहे थे। पत्नी बोली—“जाने कौन इसे जंगल में छोड़ गया है।”

“इसे भगवान का वरदान मानो।”—युवक बोला, “हमें मिल गया। अब हम इसका पालन-पोषण करेंगे।”

नवजात शिशु को पाकर पति-पत्नी प्रसन्न हुए थे। किसान की युवा पत्नी उस शिशु को अपने बच्चे की तरह ही बड़े स्नेह से पालने लगी। पति-पत्नी इसे भगवान का दिया हुआ शिशु मानकर बड़े स्नेह और लगन से उसका पालन-पोषण कर रहे थे कि अचानक एक दिन वह युवक किसान बीमार पड़ गया और दो-तीन दिन के मामूली-से ही बुखार में वह चल बसा। किसान की युवा पत्नी पर दुःखों का पहाड़ टूट पड़ा।

विवाह के कुछ वर्ष के बाद ही क्रूर विधाता ने उसकी मांग का सिन्दूर पोंछ दिया। उसने अपने कलेजे पर पत्थर रख लिया। वह उस बच्चे का का मुंह देखकर ही अपना जीवन व्यतीत करने लगी थी। शिशु को ईश्वर का वरदान मानकर वह उसका पालन-पोषण कर रही थी। पति के छोड़े हुए कुछ थोड़े-से खेत थे, जिनकी आमदनी से बड़े आराम से गुजारा हो जाता था। समय बीतता गया।

बच्चा धीरे-धीरे बड़ा हो गया। पड़ोस के बच्चों के साथ खेलने-कूदने लगा। वह बहुत ऊधमी हो गया था। सारे दिन ऊधम मचाकर वह अपने पड़ोसियों को भी परेशान कर देता था। हर दिन कोई-न-कोई शिकायत आती ही रहती थी। मां उसे समझाती-बुझाती थी, लेकिन वह बालक ऊधम करने से बाज नहीं नहीं आता था।

उसका नाम रखा गया था, “बाबू”। सब लोग इसी नाम से उसे पुकारते थे। यह सोचकर कि हर बालक बचपन में चंचल और शरारती

होता ही है, मां ने उसकी ओर विशेष ध्यान नहीं दिया, पर धीरे-धीरे बाबू की शरारतें बढ़ती ही चली गईं। इससे मां परेशान हो गई। उसने मार-पीटकर बाबू को सुधारने की कोशिश की, पर यह कोशिश बेकार गयी। बाबू उसके सामने कान पकड़कर कह दिया करता था कि अब कोई शरारत नहीं करेगा, पर जैसे ही वह घर से बाहर कदम रखता, उसकी शरारतें फिर शुरू हो जाती थीं।

बाबू पड़ोसी लड़कों के साथ गोलियों का खेल रहा था। वह गोलियां खेलने में बहुत तेज था। उसे जीत पाना लड़कों के लिए साधारण बात नहीं थी। खेल-खेल में उसने सभी बच्चों की गोलियां जीत लीं।

उन बच्चों में गांव के एक साहूकार का लड़का भी था। उसकी सारी गोलियां बाबू ने जीत ली थीं। हार जाने के बाद वह लड़का अपने घर चला गया। उसने घर में और गोलियां तलाश की, लेकिन उसे एक भी गोली नहीं मिली। गोलियां खेलने में वह लड़का भी बहुत तेज था। उसे विश्वास था कि अगर उसे कुछ गोलियां मिल जाएं, तो वह बाबू की सारी गोलियां जीत लेगा पर उसे एक भी गोली घर में दिखलायी न पड़ी।

यकायक उसकी नजर शालिग्राम पर पड़ी। उसने शालिग्राम उठाकर देखा। काले पत्थर की यह गोली तो कांच की गोलियों से कहीं बड़ी और मजबूत भी है। इसकी सहायता से तो वह बाबू की न केवल गोलियां जीत ही लेगा बल्कि चोट से उसकी और गोलियों को जरूर तोड़ भी डालेगा। उसने शालिग्राम को उठा लिया और चुपचाप घर से खिसक आया।

वह उस स्थान पर पहुंचा, जहां बाबू अन्य बालकों के साथ खेल रहा था। उस लड़के ने बाबू से गोलियां खेलने का आग्रह किया। इस समय गुल्ली डंडा खेलने में मगन था, इसलिए उसने गोलियां खेलने से इनकार कर दिया। लेकिन वह लड़का ज़िद ही पकड़ गया, तो मजबूर होकर बाबू ने गुल्ली डंडा एक ओर रख दिया और गोलियां खेलने लगा।

“देखता हूं। अब तुम कैसे जीतोगे?”—उसने बाबू को चुनौती दी। बाबू मुस्करा पड़ा। वह उसके साथ गोलियां खेलने लगा।

उस दिन शायद भाग्य उस लड़के के विपरीत था। वह पहले दांव में ही चुराकर लाए गये शालिग्राम को हार गया।

शालिग्राम हार जाने के बाद ख्याल आया कि अब थोड़ी देर के बाद

उसकी मां पूजा करेंगी और अगर उन्होंने शालिग्राम को न देखा तो घर में हंगामा हो जाएगा और फिर उस पर बुरी तरह मार पड़ेगी। डर के मारे वह कांप उठा और फिर रोते हुए बाबू से आग्रह करने लगा कि वह शालिग्राम उसे लौटा दे।

“बाबू ! तुम मेरी गोली दे दो। वह गोली नहीं शालिग्राम है।” — उसने बाबू से कहा।

“मैं तो नहीं दूंगा !” — बाबू बोला।

वह लड़का बहुत अनुनय-विनय करता रहा, पर बाबू ने उसे शालिग्राम वापस नहीं किया। शालिग्राम जेब में रखकर वह चलता बना।

विश्व-दर्शन

निराश होकर वह लड़का रोता हुआ अपनी मां के पास गया। रोते-रोते उसने कहा, “मां, बाबू ने तुम्हारा शालिग्राम ले लिया है और अब दे नहीं रहा है।”

“मेरे शालिग्राम !” — मां दौड़ती हुई पूजा घर में गयीं। देखा सचमुच शालिग्राम वहां नहीं था।

लड़के की मां दौड़कर बाबू के पास गयी और उसे धमकाती हुई बोली, “शालिग्राम वापस दे दे, वरना मैं तेरी चमड़ी उधेड़ डालूंगी।”

बाबू ने शालिग्राम देने से इनकार कर दिया — “मैंने तो उसे जीता है। मैं वापस नहीं करूंगा।”

इस पर वह गुस्से से चिढ़ गई। उसने बाबू से सारी गोलियां छीन लीं पर बाबू ने शालिग्राम को पहले से ही अपनी जेब में से निकालकर चुपके से अपने मुंह में रख लिया था। साहूकार की पत्नी ने सारी गोलियां देख डालीं। उनमें शालिग्राम नहीं था।

तभी लड़के ने कहा — “मां, शालिग्राम तो बाबू ने अपने मुंह में रख लिया है।”

साहूकार की पत्नी ने बाबू से कहा,—“तू अपना मुंह तो खोल।”

बाबू ने सिर हिलाकर इनकार कर दिया।

साहूकार की पत्नी ने बाबू को पकड़ लिया और जबर्दस्ती उसका मुंह खोलने लगी।

आखिर मजबूर होकर बाबू ने अपना मुंह खोल दिया।

जब साहूकार की पत्नी ने बाबू के मुंह में झांककर देखा तो वह चकित रह गई। उसे बाबू के मुख में भगवान् कृष्ण का वही विराट् स्वरूप दिखाई दिया, जो महाभारत युद्ध का आरम्भ होने से पहले गीता का उपदेश देते समय उन्होंने अर्जुन को दिखलाया था। बाबू के मुख में एक ओर सृष्टि की रचना हो रही थी, दूसरी ओर सृष्टि का विनाश हो रहा था। घबराकर साहूकार की पत्नी ने अपनी आंखें मूंद लीं। फिर जब वह सामान्य हो गई तो उसने बाबू के पांव पकड़ लिए और फूट-फूटकर रोने लगी।

सारे गांव में बाबू की इस अद्भुत लीला का समाचार फैल गया। लोग कहने लगे बाबू तो भगवान् हैं। शालिग्राम वाली घटना के बाद बाबू ने बालकों के साथ खेलना बन्द कर दिया। वह एकदम शांत पड़ गया और एकान्त प्रिय हो गया। उसने बातचीत करना बन्द कर दिया। वह चुपचाप कहीं एकांत में चला जाता। शाम को वापस आता। लोग उसको देखने के लिए तरस जाया करते थे। उसके सम्बन्ध में गांव में नाना प्रकार की अफवाहें फैलने लगी थीं। सबके लिए वह एक रहस्यमय व्यक्ति हो गया था।

समय बीतता गया।

वह गांव की मस्जिद में जाने लगा और मस्जिद के बीचों-बीच पालथी मारकर बैठ जाता था। वह अपने मुंह से शिर्वालिग निकालकर मस्जिद के बीचों-बीच स्थापित कर देता। फिर न जाने कहां से उसके पास फूल, विल्व पत्र और पूजन की सामग्री आ जाती और तब वह पूजा करने लगता था। मस्जिद में नमाज पढ़ने वाले नमाजी परेशान हो जाते, वह बाबू को उठाकर मस्जिद के बाहर निकाल देते थे।

इसी तरह जब मन्दिर में आरती होती, तो बाबू वहां पहुंच जाता और नमाज पढ़ने लगता जोर-जोर से कुरान शरीफ की आयतों को बोलना शुरू कर देता। मन्दिर में पूजा कर रहे हिन्दुओं को बाबू की इस हरकत पर

बहुत गुस्सा आता और वह बाबू को मन्दिर से निकाल देते थे ।

इन हरकतों से हिन्दू और मुसलमान दोनों ही नाराज हो गए । बाबू की मां के पास जाकर उसकी शिकायतें करने लगे । तरह-तरह की धमकियां देने लगे ।

बाबू की मां दोनों धर्मावलम्बियों की धमकियां सुनकर डर गई । उसे आशंका होने लगी कि किसी दिन हिन्दू या मुसलमान उस लड़के की जान ले लेंगे । उसका प्यारा बच्चा खतरे में है । वह चिन्ता में पड़ गयी ।

बाबू अपनी हरकत से वाज न आ रहा था । मस्जिद में शिवपूजन और मन्दिर में कुरान-पाठ चालू था । रोज हंगामा होने लगा । लोगों ने बाबू के साथ मारपीट करना शुरू कर दी, पर बाबू पर इन सबका कुछ भी प्रभाव न हो रहा था । लोग उसके इस पागलपन पर बेहद नाराज थे । हिन्दू और मुसलमान दोनों सम्प्रदाय क्षुब्ध थे । उसका यह व्यवहार एकदम नागवार था ।

अनंत में विलीन

देवगिरि यम्मा को होश आया तो उसने अपने को चट्टानों के पास पड़े पाया । बड़ी कठिनाई से वह अपनी आंखें खोल सकी थी । वह एकदम कमजोर पड़ गयी थी । कठिनाई से आंखें खुली रख पा रही थी । फिर यकायक उसको अपने नवजात शिशु का ध्यान आया । वह धबकाकर चारों ओर देखने लगी । शिशु कहीं न दीखा । उसे अब याद आ गया । वह तो स्वयं भगवान शिव उसकी सन्तान बनकर आये थे । कहां चले गये ? क्या अन्तर्धान हो गये ? वह उठकर खड़ी हो गयी । आसपास देखा उसे शिशु कहीं न दीखा । वह व्याकुल हो उठी । अचानक सामने एक गहरी खाई देखकर वह उसमें कूद पड़ी । स्वयं शिवत्व में विलीन हो गयी ।

उधर गंगा भावड़िया निरन्तर तपस्या कर रहा था । लगातार निराहार रहने के कारण वह बेहोश हो गया था । तभी जंगल से एक भयानक

शेर आया और वह गंगा भावड़िया को चीर-फाड़कर खा गया। इस प्रकार भावड़िया भी शिवत्व में मिल गया।

दोनों की जीवन लीला समाप्त हो गयी।

वेंकुश महाराज

अपने बच्चे के जीवन की रक्षा के लिए उसने अपने कलेजे पर पत्थर रख लिया। अपनी ममता का गला घोट डाला और यह निश्चय कर लिया कि वह बाबू को वेंकुश महाराज के आश्रम छोड़ आयेगी।

वेंकुश एक सन्यासी थे। उन्होंने पास ही के एक गांव में अनाथ आश्रम की स्थापना की थी, जहां पर अनाथ बच्चे रहते थे। उनकी शिक्षा, भोजन-वस्त्र आदि सभी की व्यवस्था आश्रम की ओर से ही की जाती थी।

वेंकुश महाराज का आश्रम थोड़ी दूर पर था। वह एक दिन बाबू को अपने साथ लेकर उस आश्रम की ओर चल दी।

एक रात पहले वेंकुश महाराज ने सपना देखा। उन्होंने देखा, भगवान शिव उनके पास आए हैं। कह रहे हैं—“वेंकुश, मैं कल सुबह दस बजे तुम्हारे पास आ रहा हूँ और अब तुम्हारे पास ही रहूँगा।” फिर वहीं भगवान शिव अन्तर्ध्यान हो गए थे। वेंकुश महाराज चौंककर उठ बैठे। वह पूरी रात सो नहीं पाए। वह विस्तर पर करवटें बदलते हुए सुबह होने की प्रतीक्षा करने लगे।

अपने इस स्वप्न पर स्वयं उनको बड़ा आश्चर्य हो रहा था। इस प्रकार का स्वप्न कभी न देखा था। वह बहुत हैरान थे। उनके लिये यह तो बहुत ही आश्चर्यजनक बात थी।

एक-एक पल युग के समान बीत रहा था। ठीक समय पर बाबू की मां ने बाबू के साथ आश्रम में प्रवेश किया। वेंकुश महाराज को बाबू की पूरी कहानी सुनते हुए कहा, “महाराज इस बच्चे को आप अपने आश्रम में ही रख लीजिए, वरना गांव के हिन्दू मुसलमान किसी दिन इसे मार डालेंगे।

मैंने इस अपने सगे बेटे की तरह पाला है, लेकिन इसका कोई नुकसान न हो, भले ही यह मुझसे दूर रहे, लेकिन ठीक रहे। मेरे लिए यही बहुत है और फिर आपके आश्रम में रहकर दो अक्षर भी पढ़ जाएगा। गांव में रहकर तो बच्चों के साथ गोलियां और गुल्ली-डंडा खेलने या शरारतें करने के सिवाय यह और कुछ करेगा ही नहीं।”

वेंकुश महाराज को रात का सपना तब याद आ गया। उन्होंने ध्यान से भोलेभाले बाबू के मासूम चेहरे को देखा। तब लगा जैसे भगवान शिव ही उस बालक के रूप में सामने हैं। वेंकुश महाराज का मन अपार श्रद्धा से भर गया। वह गद्गद् होकर बोले—“तुम घर जाओ मां। आज से यह बालक आश्रम में ही रहेगा। इसे रत्ती-भर भी कष्ट नहीं होने दूंगा।” वेंकुश महाराज ने बालक का हाथ थामकर उसे अपने सीने से लगा लिया। उनकी आंखों में आंसू आ गये।

मां ने बाबू को समझाया—“बेटा, गांव में रहकर तुम पढ़-लिख नहीं सकोगे। गांव के शैतान बच्चे तुम्हें पढ़ने ही नहीं देंगे। मैं तुम्हें यहां लेकर आई हूं। आखिर ब्राह्मण के बेटे हो। नहीं पढ़ोगे तो कैसे काम चलेगा। मैं बीच-बीच में आकर तुम्हें देख जाया करूंगी।”

बाबू ने मां की बात मान ली।

बाबू की मां आंसू बहा और सीने में ममता को दवा आश्रम से चली गयी।

उसका मन दर्द से भर गया था। वह बाबू को अपने से अलग नहीं रखना चाहती थी, पर इस समय विवशता थी। बाबू को गांव से अलग रखना जरूरी हो गया था। वह गांव में हिन्दू मुसलमानों के बीच झगड़े की जड़ बन गया था। दोनों सम्प्रदायों में तनाव बढ़ने लगा था। भला इस दशा में उसे कैसे रखा जा सकता था !

बाबू को वेंकुश महाराज के अनाथ आश्रम में रखकर वह वापस लौट गयी। उसे विश्वास था कि बाबू वेंकुश के आश्रम में रहकर सुधर जायेगा और एक दिन उसकी वृद्धावस्था का सहारा बनेगा।

अनिश्चित दिशा की ओर

बाबू अपनी धर्म माता का घर छोड़कर वेंकुश महाराज के अनाथाश्रम में आ गया। आश्रम में और भी कई अनाथ लड़के रहते थे। उन्हीं के बीच बाबू के दिन बीतने लगे।

वेंकुश महाराज बाबू को शिव रूप में जानते थे। बाबू के प्रति उनका व्यवहार बहुत ही स्नेह और सम्मानपूर्ण होता था। इस बात को देखकर आश्रम में रहने वाले दूसरे लड़के बाबू से जलने लगे। वेंकुश महाराज की उपस्थिति में तो बाबू के साथ अच्छा व्यवहार करते, लेकिन जब वेंकुश महाराज आश्रम से कहीं चले जाते, तो सब लड़के मिलकर बाबू को बहुत बुरा-भला कहते और पीट भी देते थे। बाबू चुपचाप सब अत्याचार सहन कर लेता था। वह वेंकुश-महाराज से उन लड़कों के इस दुर्व्यवहार की कभी शिकायत नहीं करता था।

वेंकुश महाराज ने बाबू को जंगल से बिल्वपत्र लाने के लिए भेजा। बाबू गुरु के आदेश के अनुसार एक टोकरी लेकर बिल्वपत्र लाने के लिए जंगल की ओर चल दिया।

आश्रम के लड़कों को अच्छा मौका मिल गया। उन्होंने निश्चय किया कि बाबू को जंगल में मारकर फेंक दिया जाए। कोई-न-कोई जंगली जानवर उसकी लाश को ठिकाने लगा देगा। जब बाबू नहीं लौटेगा, तो यही समझ लिया जाएगा कि उसे कोई जंगली जानवर मारकर खा गया और चलता बना। बाबू की हत्या की योजना बनाकर कुछ लड़के चुपके से आश्रम से बाहर निकल गए। बाबू के पीछे-पीछे जंगल में पहुंच गए।

वहां जंगल में पहुंचकर बाबू बिल्व-पत्र तोड़-तोड़कर इकट्ठा करने में लगा था।

लड़कों ने एक साथ उस पर धावा बोल दिया। लाठियों से बाबू को खूब मारा। जब बाबू बेहोश होकर जमीन पर गिर गया, तो लड़कों ने यही समझा कि बाबू मर गया है। उसे पूरी तरह मार डालने के इरादे से उन्होंने पास ही के एक खंडहर से एक ईंट निकाली और धरती पर बेहोश पड़े बाबू के सिर पर अपनी पूरी ताकत से दे मारी। तब बाबू के सिर से खून की धार फूट पड़ी तो लड़कों ने समझ लिया कि अब बाबू से हमेशा के लिए

छुटकारा मिल गया। अपने दुश्मन को हमेशा के लिए खत्म कर दिया। सब खुशी-खुशी आश्रम चल दिए। आश्रम आकर अपने-अपने काम में लग गए।

सारा दिन बीत गया। बिल्व-पत्र लेकर बाबू जंगल से वापस नहीं लौटा।

वेंकुश महाराज चिन्तित हो उठे।

शाम होने में कुछ ही समय रह गया था। उन्होंने आश्रम के कुछ लड़कों को साथ लिया और उस ओर चल दिए, जहां बिल्व-वृक्ष थे, जहां से आश्रम के लड़के रोजाना भगवान की पूजा करने के लिए बिल्वपत्र तोड़कर ले आया करते थे।

वेंकुश महाराज जंगल में पहुंचे तो उन्होंने एक पेड़ के नीचे बाबू को देखा। बाबू के सारे कपड़े फटे थे। सारा बदन लाठियों की मार से नीला पड़ गया था। सिर से थोड़ा-थोड़ा खून रिस रहा था। बाबू बिल्कुल बेहोश था। उसके पास ही टोकरी पड़ी थी।

वेंकुश महाराज ने बेहोश बाबू को उठाया। पास बहती नदी के किनारे ले गए। बाबू के घावों को साफ किया। उसी की फटी हुई धोती में से पट्टियां फाड़कर उसके घावों पर बांधी।

थोड़ी देर के बाद बाबू को होश आ गया।

“क्या हुआ था बेटा, तुम्हें किसने मारा है?”—वेंकुश महाराज ने बड़े स्नेह भरे स्वर में पूछा।

“पता नहीं गुरुजी। मैं तो बिल्व-पत्र तोड़ रहा था। तभी किसी ने पीछे से मेरे सिर में कोई ईंट दे मारी। उसकी चोट से मुझे चक्कर आ गया और मैं में बेहोश होकर गिर पड़ा। इसके बाद का तो पता नहीं कि क्या हुआ?”

“कम्बख्तों ने बहुत बुरी तरह मारा है,”—वेंकुश महाराज ने कहा—“लगता है तुम्हारे गांव के ही कुछ आदमी थे, जो तुमसे चिढ़े हुए थे। चलो आश्रम में चलो।”

बाबू वेंकुश महाराज के साथ-साथ आश्रम की ओर चल पड़ा। वह ईंट भी उठा ली, जो आश्रम के लड़कों ने उसके सिर में मारी थी और जिस पर लगा खून जमकर सूख गया था।

बाबू को वापस आया देखकर सब लड़के डर गये। उन्हें इस बात पर भी आश्चर्य था कि बाबू इतनी मार खाने के बाद भी बच कैसे गया ? इसके बाद से वह सब बाबू से बहुत डरने लगे। फिर किसी ने बाबू को न छेड़ा। बाबू निश्चिन्त होकर आश्रम में रहने लगा।

कुछ समय बाद वैकुश महाराज यकायक बीमार पड़ गये। एक ही दिन की बीमारी ने यकायक उनको तोड़ दिया था। बाबू उनके ही पास था। बाबू उसी ईंट का सिरहाना बनाकर लेटा था। आधी रात के समय वैकुश महाराज ने बाबू का हाथ पकड़ा। श्रद्धा से उसकी ओर देखा और एक हिचकी लेकर दम तोड़ दिया। एक छोटा सा ज्योति पुंज दिखलायी पड़ा। वैकुश महाराज की आत्मा अनन्त में विलीन हो गयी।

वैकुश महाराज का देहान्त हो गया।

तब उनका अन्तिम संस्कार कर दिया गया। उनका आश्रम अनाथ हो गया। बाबू अपनी वही ईंट लेकर आश्रम से निकल गया। उसके सामने कोई लक्ष्य न था।

शायद वह अनन्त की यात्रा पर चल पड़ा था। बाबू ईंट को साथ लिये चलता ही गया। वह एकदम अकेला था।

○

सुबह का समय था। शिरडी गांव के निवासी अपने-अपने काम में थे।

कुछ लोग गांव के पुराने मन्दिर की ओर जा रहे थे। अचानक उनकी नजर मन्दिर के टूटे हुए द्वार के पास बैठे सोलह-सत्रह वर्ष के एक लड़के पर गयी। उसके बदन पर अंगरखा और धोती थी। सिर पर एक कपड़ा बंधा हुआ था। एक छोटा-सा दुपट्टा भी कमर में बंधा हुआ था। उसके हाथ में कपड़े में लिपटी कोई चौकोर चीज थी। वह नीम के नीचे के पत्थर पर विचित्र मुद्रा में बैठा था। उसका बायां पांव पत्थर से नीचे धरती पर टिका हुआ था और दायां पांव मुड़ा हुआ उसके बायें पांव के घुटने पर रखा हुआ था। उसके बैठने का ढंग महात्माओं, सिद्ध पुरुषों के समान था। सब आश्चर्य से भर गये।

“तुम कौन हो !”—एक आदमी ने उससे पूछा।

“कहां से आए हो ?”—दूसरे ने पूछा।

सब आश्चर्य से युवक के चेहरे को देखने लगे, चेहरे पर एक विचित्र-

सा तेज था, एक अपूर्व आभा, बड़ी-बड़ी आंखें बहुत ही चमकीली थीं। उन्हें देखकर ऐसा लग रहा था, जैसे वह सब कोई सुन्दर सपना देख रहे हों।

उसका मुक्त अट्टहास सुनकर कुछ यही समझे कि यह कोई पागल है। कहीं से घूमता-फिरता यहां इस गांव में आ निकला है।

वह अट्टहास किसी अवोध शिशु की मोहक मुस्कान में बदल गया। युवक चेहरे पर मासूमियत झलकने लगी। सब एकटक उसके चेहरे की ओर देखने लगे, जो कभी तो उन्हें अस्सी साल के बूढ़े के झुर्रियों भरे चेहरे की तरह दिखाई देता था और कभी सुकुमार शिशु जैसा, जिस में मन को मोह लेने वाला भोलापन था। सब यह चमत्कार देखकर तो हैरान थे।

प्रत्येक व्यक्ति को वह युवक अलग-अलग रूप में दिखाई पड़ रहा था।

“लगता है कोई महात्मा है।”—एक आदमी ने धीरे से कहा। सब उसके पास खड़े एकटक देख रहे थे। और भी लोग आते जा रहे थे। इसी समय शाही वेशभूषा में एक व्यक्ति उधर से गुजरा। उसके पीछे-पीछे कुछ सैनिक भी थे। वह शिरडी के निकट ही एक जागीर का जागीरदार था। सरकार ने उसकी अंग्रेज भक्ति पर खुश होकर उसे नवाब का खिताब दिया था।

नवाब ने मन्दिर के पास भीड़ देखी तो वह उस ओर आ गया।

नवाब ने पूछा, “आप लोगों में से किसी ने मेरा घोड़ा तो नहीं देखा। पूरा बदन काला है। माथे पर चन्दन के टीके की तरह एक सफेद निशान है। शायद इधर आया हो।”

“जी नहीं, हमने किसी घोड़े को नहीं देखा।”—कई आदमी बोले।

“तुम्हारा घोड़ा!”—यकायक यह युवक बोल उठा।

“हां न जाने किधर भाग निकला है। हम लोग बहुत देर से उसे खोज रहे हैं—” नवाब ने उसकी ओर देखते हुए कहा।

“इसमें घबराने की क्या बात है। यहीं कहीं चर रहा होगा। कहिए तो यहां बुला दूं।”—युवक ने कहा।

नवाब ने चकित होकर कहा—“बुला दो। बड़ी मेहरबानी होगी।” नवाब की इस बात पर उस युवक ने आकाश की ओर देखा। कुछ बुद-

बाबू को वापस आया देखकर सब लड़के डर गये। उन्हें इस बात पर भी आश्चर्य था कि बाबू इतनी मार खाने के बाद भी वच कैसे गया ? इसके बाद से वह सब बाबू से बहुत डरने लगे। फिर किसी ने बाबू को न छेड़ा। बाबू निश्चिन्त होकर आश्रम में रहने लगा।

कुछ समय बाद वेंकुश महाराज यकायक बीमार पड़ गये। एक ही दिन की बीमारी ने यकायक उनको तोड़ दिया था। बाबू उनके ही पास था। बाबू उसी ईंट का सिरहाना बनाकर लेटा था। आधी रात के समय वेंकुश महाराज ने बाबू का हाथ पकड़ा। श्रद्धा से उसकी ओर देखा और एक हिचकी लेकर दम तोड़ दिया। एक छोटा सा ज्योति पुंज दिखलायी पड़ा। वेंकुश महाराज की आत्मा अनन्त में विलीन हो गयी।

वेंकुश महाराज का देहान्त हो गया।

तब उनका अन्तिम संस्कार कर दिया गया। उनका आश्रम अनाथ हो गया। बाबू अपनी वही ईंट लेकर आश्रम से निकल गया। उसके सामने कोई लक्ष्य न था।

शायद वह अनन्त की यात्रा पर चल पड़ा था। बाबू ईंट को साथ लिये चलता ही गया। वह एकदम अकेला था।

○

सुबह का समय था। शिरडी गांव के निवासी अपने-अपने काम में थे।

कुछ लोग गांव के पुराने मन्दिर की ओर जा रहे थे। अचानक उनकी नजर मन्दिर के टूटे हुए द्वार के पास बैठे सोलह-सत्रह वर्ष के एक लड़के पर गयी। उसके बदन पर अंगरखा और धोती थी। सिर पर एक कपड़ा बंधा हुआ था। एक छोटा-सा दुपट्टा भी कमर में बंधा हुआ था। उसके हाथ में कपड़े में लिपटी कोई चौकोर चीज थी। वह नीम के नीचे के पत्थर पर विचित्र मुद्रा में बैठा था। उसका बायां पांव पत्थर से नीचे धरती पर टिका हुआ था और दायां पांव मुड़ा हुआ उसके बायें पांव के घुटने पर रखा हुआ था। उसके बैठने का ढंग महात्माओं, सिद्ध पुरुषों के समान था। सब आश्चर्य से भर गये।

“तुम कौन हो !” — एक आदमी ने उससे पूछा।

“कहां से आए हो ?” — दूसरे ने पूछा।

सब आश्चर्य से युवक के चेहरे को देखने लगे, चेहरे पर एक विचित्र-

सा तेज था, एक अपूर्व आभा, बड़ी-बड़ी आंखें बहुत ही चमकीली थीं। उन्हें देखकर ऐसा लग रहा था, जैसे वह सब कोई सुन्दर सपना देख रहे हों।

उसका मुक्त अट्टहास सुनकर कुछ यही समझे कि यह कोई पागल है। कहीं से घूमता-फिरता यहां इस गांव में आ निकला है।

वह अट्टहास किसी अवोध शिशु की मोहक मुस्कान में बदल गया। युवक चेहरे पर मासूमियत झलकने लगी। सब एकटक उसके चेहरे की ओर देखने लगे, जो कभी तो उन्हें अस्सी साल के बूढ़े के झुर्रियों भरे चेहरे की तरह दिखाई देता था और कभी सुकुमार शिशु जैसा, जिस में मन को मोह लेने वाला भोलापन था। सब यह चमत्कार देखकर तो हैरान थे।

प्रत्येक व्यक्ति को वह युवक अलग-अलग रूप में दिखाई पड़ रहा था।

“लगता है कोई महात्मा है।”—एक आदमी ने धीरे से कहा। सब उसके पास खड़े एकटक देख रहे थे। और भी लोग आते जा रहे थे। इसी समय शाही वेशभूषा में एक व्यक्ति उधर से गुजरा। उसके पीछे-पीछे कुछ सैनिक भी थे। वह शिरडी के निकट ही एक जागीर का जागीरदार था। सरकार ने उसकी अंग्रेज भक्ति पर खुश होकर उसे नवाब का खिताब दिया था।

नवाब ने मन्दिर के पास भीड़ देखी तो वह उस ओर आ गया।

नवाब ने पूछा, “आप लोगों में से किसी ने मेरा घोड़ा तो नहीं देखा। पूरा बदन काला है। माथे पर चन्दन के टीके की तरह एक सफेद निशान है। शायद इधर आया हो।”

“जी नहीं, हमने किसी घोड़े को नहीं देखा।”—कई आदमी बोले।

“तुम्हारा घोड़ा!”—यकायक यह युवक बोल उठा।

“हां न जाने किधर भाग निकला है। हम लोग बहुत देर से उसे खोज रहे हैं—” नवाब ने उसकी ओर देखते हुए कहा।

“इसमें घबराने की क्या बात है। यहीं कहीं चर रहा होगा। कहिए तो यहां बुला दूं।”—युवक ने कहा।

नवाब ने चकित होकर कहा—“बुला दो। बड़ी मेहरबानी होगी।” नवाब की इस बात पर उस युवक ने आकाश की ओर देखा। कुछ बुद-

बुदाया तभी उसके सामने खड़ी भीड़, नवाब और उसके सैनिक सभी चौंक पड़े। उस युवक के फैले हुए हाथ की हथेली गुलाब के फूल की तरह सुन्दर और गुलाबी थी। नन्हीं-नन्हीं सी थीं। बड़ा अलौकिक दृश्य था। उस समय तो उनके आश्चर्य की उस समय सीमा न रही, जब एक घोड़ा हिन-हिनाता हुआ आ गया। उसके माथे पर एक गोल सफेद निशान था।

“यही है तुम्हारा घोड़ा ?”—युवक ने नवाब से पूछा।

नवाब और आसपास खड़ी भीड़ आश्चर्य से कभी घोड़े की ओर कभी नीम के पेड़ के नीचे पत्थर पर बैठे उस युवक की ओर देखने लगी।

“जी हां, यही है मेरा घोड़ा !”—नवाब ने आश्चर्य में डूबे स्वर में कहा, और पूछा,—“मगर आप कौन हैं ?”

“तुम जानते हो कि तुम कौन हो ?”—युवक ने हल्की हंसी के साथ पूछा।

“क्यों नहीं जानता !”—नवाब ने बड़े गर्व से कहा, “मैं पास ही की जागीर का जागीरदार हूं।”

“और क्या जानते हो अपने बारे में ?”—युवक ने उसी तरह हंसते हुए पूछा।

“अपने बारे में मैं सब कुछ जानता हूं।”—नवाब ने उसी गर्व से उत्तर दिया।

“नहीं, तुम कुछ नहीं जानते। यहां खड़ा कोई भी आदमी नहीं जानता कि वह कौन है ? कहां से आया है और अन्त में कहां जाएगा। इस दुनिया में करोड़ों आदमी हैं। उनमें से बिरला ही कोई इस बात को जानता होगा।”—युवक ने नवाब और सामने खड़ी भीड़ पर गहरी नजर डालते हुए कहा।

लोगों को लगा जैसे युवक की नजरें किसी गोली की तरह उनके सीने में उतरती चली जा रही हैं।

सब आश्चर्य में डूबे उस युवक की ओर देख रहे थे। उसके चेहरे पर शिशु जैसी मुस्कान बराबर थिरक रही थी।

“आप सच कहते हैं साईं बाबा। हम लोग सचमुच अज्ञानी हैं, कुछ नहीं जानते।”—नवाब ने बड़ी विनम्रता से युवक के सामने सिर झुकाया और निवेदन किया—“आप मेरी कोठी पर पधारें।”

युवक हंसकर बोला, “धन्यवाद। मेरे लिए यहीं ठीक है। तुम जा सकते हो।”

तब नवाब अपने घोड़े पर सवार होकर अपने सिपाहियों के साथ चला गया।

इस घटना से पूरे गांव में जैसे तूफान आ गया था। शिरडी छोटा-सा गांव था। सभी जगह उस युवक के चमत्कार की चर्चा होने लगी। लोग नाना प्रकार से उसके संबंध में अपना मत व्यक्त कर रहे थे। वह युवक उसी मंदिर के टूटे द्वार पर पड़ा था।

दोपहर को उठा और मन्दिर के पास वाले एक मकान के दरवाजे के पास जाकर खड़ा हो गया।

“माई एक रोटी देना?” युवक ने घर के आंगन में काम करने वाली एक स्त्री को सम्बोधित करते हुए कहा।

“अभी लाई।”—स्त्री ने जल्दी से हाथ का काम छोड़ा और वह भीतर चली गई।

वह लौटी तो एक थाली में चार-पांच रोटियां एक कटोरे में सब्जी लेकर आ गयी।

“लो बेटा, यहीं बैठ कर खाओ।”—स्त्री ने थाली बरामदे में पड़ी चीकी पर रखते हुए कहा, “तुम खाना खाओ, मैं तुम्हारे लिए पानी लाती हूँ।”

“नहीं मां, इतना कष्ट करने की जरूरत नहीं है। मुझे रोटियां योंही दे दो। एक रोटी पर यह सब्जी रख दो, मैं यहीं बैठकर खा लूंगा।”

स्त्री ने उसकी बात मान ली। एक रोटी पर सब्जी रखी और फिर थाली में रखी रोटियों के साथ उठाकर युवक की ओर बढ़ा दीं।

युवक रोटियां लेकर फिर उसी नीम के पेड़ के नीचे उसी पत्थर पर आ बैठा। आसपास घूमते कुत्तों की नजर भी उन रोटियों पर पड़ गई। वे भी नीम के पेड़ के पास आ गए।

“आओ, बैठो-बैठो। आज हम सब मिलकर खाना खाएंगे।”—युवक ने कहा। और वह रोटी का एक टुकड़ा स्वयं खाता था और एक-एक टुकड़ा उन कुत्तों को भी खिलाता जा रहा था।

सारी रोटियां समाप्त हो गईं। युवक ने कुएं पर जाकर पानी पिया

और फिर मन्दिर के दालान में जैसी जमीन पर लेट गया। कपड़े में बंधी चौकोर चीज अपने सिरहाने लगा ली। वह वही ईंट थी, जिससे वेंकुश महाराज के आश्रम के लड़कों ने उसका सिर फोड़ा था। फिर कुत्तों की ओर देखते हुए वह बोला—“तुम भी सो जाओ।”

कुत्ते जैसे उसकी बात समझ गए। कुत्तों ने अपने अगले पैरों पर मुंह टिकाकर आंखें मूंद लीं। उसके साथ वह भी सो गये।

शाम को कोई आवाज सुनकर युवक चौंककर उठ बैठा। उसके पास ही सोए कुत्ते भी जाग गए।

“मस्जिद में अज्ञान दी जा रही है। चलो नमाज पढ़ें।”—युवक ने कुत्तों की ओर देखते हुए कहा।

और उन कुत्तों के साथ वह मस्जिद में चला गया। नमाज पढ़ने लगा। कुत्ते चुपचाप एकटक उसकी ओर देखते रह गये। वह एकदम कट्टर मुसलमान की तरह नमाज अदा कर रहा था।

हंगामा

दूसरे दिन गांव में हंगामा हो गया।

एक आदमी ने कहा, “यह मुसलमान है। मैंने उसे मस्जिद में नमाज पढ़ते हुए अपनी आंखों से देखा है।”

“अरे, गांव में नया-नया आया है। धूमता-धामता वह मस्जिद में चला गया होगा। हम लोग भी तो कभी-कभी मस्जिद में जाकर बैठ जाते हैं, तो क्या इतने में हम मुसलमान हो गये हैं?”

“हम लोग वहां जाकर बैठते हैं। नमाज तो नहीं पढ़ते। नमाज पढ़ना वही जानता है, जो मुसलमान होता है।”

“तुम लोग बेकार झगड़ा कर रहे हो। इस समय वह पुराने मन्दिर में है। मैं अभी देखकर आ रहा हूं। मन्दिर की सफाई कर रहा था।”

“चलो, उसीसे चल कर पूछ लेते हैं कि वह किस जाति का है? हिन्दू

है या मुसलमान ?”

“ठीक है चलो !” — एक साथ सब बोल उठे फिर वह सब पुराने मंदिर की ओर चल दिए।

वह लोग दूर भी न गए थे कि सामने से मुल्ला और कुछ मुसलमान आते हुए दिखाई पड़े।

“कहां जा रहे हैं आप सब लोग इकट्ठे होकर !” — मुल्ला ने पूछा।

“मन्दिर जा रहे हैं। सुबह जो नौजवान हमारे गांव में आया था, शाम को आप लोगों के साथ मस्जिद में नमाज पढ़ते हुए देखा गया था।”

“हां, तुम्हारी बात ठीक है।” — मुल्ला जी बोले।

“वह मुसलमान है और यह तो आप जानते ही हैं कि किसी मन्दिर में मुसलमान नहीं जा सकता है।”

मुल्ला जोर से हंसने लगा।

“लेकिन भाई, वह मुसलमान नहीं है। हम लोग अभी-अभी उधर से ही आ रहे हैं। उस नौजवान ने मन्दिर के बरामदे में शिवजी की एक मूर्ति ताक में रख दी है। उसकी पूजा कर रहा है। संस्कृत के श्लोकों का पाठ कर रहा है। इतनी तेजी और इतनी सफाई से तो श्लोक कोई पंडित भी नहीं पढ़ पाता। श्लोक उसे शायद जबानी याद हैं।” — मुल्ला बोले — “वह नौजवान हिन्दू भी है और मुसलमान भी। मुझे सूफी सन्त मालूम होता है।”

“कुछ भी हो, हम उसे उस मन्दिर में नहीं रहने देंगे।”

“अब वह मन्दिर है कहां। उसकी मूर्तियां हटाकर नये मन्दिर में स्थापित कर दी गई हैं। वहां तो खाली खंडहर पड़ा है। उसके वहां रहने से आपका क्या नुकसान होगा पंडितजी।” — दूसरे व्यक्ति ने कहा।

“आज न सही लेकिन पहले तो मूर्तियां थीं, उस मन्दिर में। आज भी सब लोग उसे मन्दिर ही कहते हैं। हम लोग किसी भी ऐसे आदमी को मन्दिर में नहीं रहने देंगे जो नमाज भी पढ़ता हो।” — पंडितजी ने कहा।

पंडितजी गांव में पुरोहिती का काम भी करते थे। मन्दिर के पुजारी भी थे। उन्होंने मुल्ला जी के मुंह से यह सुना कि वह नौजवान मन्दिर में शिवजी की मूर्ति रखकर पूजा कर रहा था। संस्कृत श्लोकों का पाठ कर रहा है, तो उसके मन में यह शक हो गया कि किसी दिन वह शिवजी की मूर्ति की स्थापना उस पुराने मन्दिर में न कर दे। अगर मूर्ति की स्थापना

कर दी तो गांव वाले भी उसी पुराने मन्दिर में जाने लगे। पुराने मन्दिर की प्रतिष्ठा नये मन्दिर से कहीं अधिक थी। ऐसा होने पर उनकी आमदनी भी कम हो जायेगी। वह मन्दिर की आय से तब अपने परिवार का खर्च चला न सकेंगे। इस कारण पंडितजी के मन में हलचल होने लगी। यह नौजवान तो उसके लिये सिरदर्द बन गया था। पंडित ने यही निश्चय किया था कि इस छोकरे को गांव से निकाल बाहर करेंगे, वरना उनका सारा धन्धा चौपट हो जाएगा।

तब सब लोग पुराने मन्दिर की ओर चल दिए। मुल्ला और गांव के अन्य मुसलमान भी उनके साथ ही मन्दिर की ओर चल पड़े। युवक ने खंडहर को झाड़-पोंछ साफ कर दिया था। मकड़ी के जाले भी साफ कर दिए गए थे। मन्दिर का फर्श एकदम साफ सुथरा दिखाई दे रहा था। बरामदे के बीचोंबीच एक छोटा-सा शिवलिंग स्थापित था। पास ही बिल्व-पत्र, फूल रखे थे। नये धड़े में जल था। वह युवक शिवस्तोत्र का सस्वर पाठ करता हुआ भगवान् शिव की पूजा कर रहा था।

“लो पंडितजी, देख लो इस नौजवान को भला मुसलमान कौन कहेगा।”—मुल्ला ने कहा।

लोगों की भीड़ देखकर नौजवान के पास बैठे कुत्ते खड़े हो गए और भौंकने लगे। युवक ने शिवस्तोत्र रोक दिया।

वह प्रश्न भरी नजरों से तब भीड़ की ओर देखने लगा।

“कौन हो तुम।”—पंडित ने आगे बढ़ कर उससे पूछा।

“मैं साईं हूं।”—युवक ने उत्तर दिया।

“साईं—?”—पंडित को आश्चर्य लगा।

“हां।”—युवक मुस्कराता।

“हम तुम्हारा नाम नहीं पूछ रहे हैं। तुम हिन्दू हो या मुसलमान?”—पंडित ने कड़ककर पूछा।

“आपको क्या दिखाई देता है?—युवक ने मुस्कराते हुए पूछा।

“इस समय तो तुम हिन्दुओं की तरह भगवान् शिव की पूजा कर रहे हो। कल शाम तुम मस्जिद में नमाज पढ़ रहे थे।”

“पढ़ रहे थे ना?”—एक ने भी पूछा।

“हां पढ़ रहा था। इससे क्या?”

“इसका मतलब है तुम हिन्दू नहीं, मुसलमान हो।”

वह चुप रह गया। उसने कोई जवाब नहीं दिया।

“साफ-साफ क्यों नहीं बताते कि तुम हो कौन?”

“मैं इन्सान हूँ, न हिन्दू हूँ न मुसलमान।”—युवक ने कहा दृढ़ता से
“मैं हिन्दू भी हूँ और मुसलमान भी।”

“मतलब तुम्हारा कोई धर्म नहीं है?”

“सब धर्म लिये एक बराबर हैं।”

“हम इस मन्दिर में तुम्हें नहीं रहने देंगे। जिस आदमी का कोई धर्म नहीं, वह इन्सान नहीं है।”—पंडित गुस्से से बोले।

“परमात्मा के जिस घर पर इन्सान अपना अधिकार समझता हो, मैं वहां रह ही नहीं सकता। यह सारी दुनिया मेरे परमात्मा का ही घर है। आप संभालिए अपना मन्दिर। मैं तो कहीं भी जाकर रह लूंगा।”—युवक ने कहा और पूजा की सामग्री तथा शिर्वाला एक कपड़े से बांधकर खड़ा हो गया।

“आप हमारे साथ चलिए। यहां एक ऐसी मस्जिद है, जो एक हिन्दू औरत ने बनवाई थी। द्वारिका माई मस्जिद। वह हिन्दू थी, लेकिन उसने खुदा का घर बनवाया था। दरअसल न वह हिन्दू थी और न मुसलमान थी। क्यों भाई, तुम्हारा क्या ख्याल है?”—मुल्ला ने पास खड़े व्यक्ति से पूछा।

“आप ठीक कहते हैं। हम साईबाबा को अपने गांव से नहीं जाने देंगे। यह मामूली इन्सान नहीं हैं। हमारे गांव में रहेंगे तो हमारे गांव का भी कल्याण हो जायेगा। फिर युवक की ओर देखते हुए बोला, “चलो साईबाबा, इस मन्दिर को पंडितजी के लिए छोड़ दो।”

वहां के लोगों ने उस युवक को गांव में ही रखने का निर्णय कर लिया। कुछ लोगों को उसके चमत्कार का पता था। अतएव उसे नहीं आने देना चाहते थे। वह भी उन सबकी बात मान गया। सबके सब उसे द्वारिका माई मस्जिद की ओर ले गये।

बहुत साल पहले शिरडी के एक-सम्पन्न किसान की पत्नी जिसे लोग आदर से द्वारिकामाई कहते थे, ने गांव में एक मस्जिद बनवा दी थी। उस गांव में रहने वाले मुसलमानों की इबादत के लिए कोई मस्जिद न थी। गांव में रहने वाले मुसलमान इतने गरीब थे कि मस्जिद नहीं बनवा सकते थे। उसने मस्जिद बनवायी। मस्जिद का नाम द्वारिकामाई मस्जिद पड़ गया। उसे लोग हिन्दू मस्जिद भी कहते थे। किसी कारणवश अधिकांश मुसलमान गांव से चले गये। फलतः वह मस्जिद भी वीरान हो गयी। वह इतनी टूट-फूट गई थी कि उसकी मरम्मत में जितना पैसा खर्च होता, उससे बहुत कम पैसों में नई मस्जिद बनवाई जा सकती थी। गांव के मुसलमानों ने उस पुरानी मस्जिद का जीर्णोद्धार न कर गांव में एक नई मस्जिद बनवा ली। वह हिन्दू मस्जिद वीरान ही पड़ी रह गयी।

गोविन्द, रघुनाथ और कुछ युवक साथियों ने उस युवक को पुरानी मस्जिद में ठहरा दिया। सबने उसका साथ दिया। वर्षों से जमी घास और झाड़ियां काट दी गईं। मस्जिद की मेहराबों को झाड़-पोंछ दिया गया। टूटे-फूटे फर्श को भी ठीक कर दिया गया।

“साईं बाबा”—गोविन्द ने बड़े सम्मान से कहा, “अब आप जहां अपना आसन जमा लीजिए। हम कल से इस मस्जिद की थोड़ी-थोड़ी मरम्मत शुरू कर देंगे। आपका आशीर्वाद हमारे साथ रहा, तो हम इसे नई मस्जिद से भी अधिक सुन्दर बना देंगे।”

उसे साईंबाबा कहने वाले पहले आदमी गोविन्द रघुनाथ ही थे। वह महाराष्ट्रियन थे, पर सुलझे विचारों के युवक थे। उनके प्रेम भरे अनुरोध पर उस युवक ने वहां पर अपना आसन जमा लिया। कुछ देर बाद वह फटी-बोरियां ले आया। साईंबाबा ने मस्जिद की एक मेहराब के नीचे बोरियों को बिछाकर अपना आसन बना लिया।

“आप खाने-पीने की चिन्ता बिल्कुल न करें। साईंबाबा आपके लिए खाना दोनों समय हमारे घर से आ जायेगा।” गोविन्द रघुनाथ ने दोनों कहा।

“नहीं रघुनाथ भाई। मैं किसी पर बोझ बनना नहीं चाहता हूं। मैं जानता हूं कि तुम्हारे पास काफी जमीन-जायदाद है। जमीन जायदाद हाल

ही में मिलने वाली भी है। तुम्हें कोई कठिनाई न होगी। फिर भी मैं किसी व्यक्ति पर बोझ बनकर रहना नहीं चाहता हूँ। मेरे खाने-पीने को चिन्ता मत करो। इस गांव में बहुत घर हैं। जिस दरवाजे पर जाकर खड़ा हो जाऊंगा, कुछ-न-मिल ही जाएगा। जो भी मिल जाया करेगा, पेट उसी से भर जाया करेगा।”

साईबाबा ने गोविन्द का प्रस्ताव ठुकरा दिया। उन्होंने उसे स्वीकार ही न किया। उसके इस विनम्रतापूर्ण व्यवहार पर सब दंग रह गये। उसके प्रति श्रद्धा और बढ़ गयी। गोविन्द और रघुनाथ दमोलकर सम्पन्न परिवार के थे। इस कारण उनके साथ बहुत युवक थे। उन सबकी मदद से दूसरे दिन से ही द्वारिकामाई मस्जिद में मरम्मत का काम शुरू हो गया। यह काम आपसी सहयोग से था। साईबाबा ने मना भी किया। कहा—“मेरे लिए इतनी तकलीफ सहने की क्या जरूरत है! मैं तो किसी पेड़ के नीचे भी रह सकता हूँ।”

वह दोनों न माने।

साईबाबा ने तब गोविन्द और रघुनाथ को बड़े प्यार से अपना शिष्य बना लिया। उसका नामकरण भी कर दिया। बोले—“यह बात है कि तुम्हारा नाम इतना लम्बा है कि लेने में काफी समय लग जाता है। इसलिए मैंने तुम्हारा यह छोटा-सा नाम रख दिया है। क्या तुम्हें यह नाम पसन्द नहीं आया है।”

“बाबा—!” दमोलकर ने साईबाबा के पैर पकड़ लिए—“आज मुझे सचमुच नये नाम की जरूरत है। आज मेरा नया जन्म हुआ है। मैं तो आपकी कृपा पाकर अपनी पिछली सारी जिन्दगी भूल गया। आज सुबह ही निश्चय किया था कि आज से मैं नई जिन्दगी की शुरुआत करूंगा। आज से मानव धर्म मेरा धर्म होगा। मानव जाति की सेवा ही मेरा एक मात्र ध्येय होगा। मानव कल्याण ही मेरे जीवन का उद्देश्य होगा। आपने मेरा जीवन बदलकर बड़ी कृपा की है।”

“व्यक्ति को जब ज्ञान मिल जाता है, तो वह वर्तमान इन्सान के बदले एक नया इन्सान बन जाता है।”—साईबाबा ने बड़े स्नेह से सिर पर हाथ फेरते हुए कहा—“एक ही जन्म में इन्सान न जाने कितनी बार मरता और न जाने कितनी बार जीता है।”

अभी वह कुछ कहने ही जा रहे थे कि अचानक मस्जिद के दूसरे छोर पर शोर मचा—“काट लिया ! काट लिया ! नाग है नाग !”

“क्या हुआ ?”—साईबाबा चौंककर खड़े हो गये। वह लपककर वहां गये।

“दामोदर को नाग ने काट लिया साईबाबा।”—एक युवक ने दामोदर को सहारा देकर उठाते हुए कहा। दामोदर की हालत खराब हो गयी थी। शरीर नीला पड़ गया था। मुंह से झाग आने लगा था।

“मत चढ़... मत चढ़...” — बाबा यकायक बोल उठे।

“कहां गया नाग ?”

“इस बिल में घुस गया है।”—एक युवक ने मस्जिद के एक कोने के एक बिल की ओर इशारा किया। उस बिल को देखकर बाबा कहकहा लगाकर हंस पड़े “वाह रे लीलाधर, विचित्र है तेरी लीला। यह तो नेवले का बिल है। नेवला इस नाग के टुकड़े-टुकड़े कर देगा।” सभी आश्चर्य से साईबाबा की ओर देख रहे थे। साईबाबा दामोदर के पास आ गये। और आगे आये उसके पास बैठकर उसके पांव पर ऊपर से नीचे की ओर हाथ फेरने लगे।

“उतर जा... उतर... जा,” — बाबा ने फिर कहा। तभी अंगूठे से नीले-नीले रंग की बूंदें गिरने लगीं। यह समझते देर नहीं लगी कि बूंदें उसी नाग का जहर है। सबको आश्चर्य हो रहा था कि नाग का जहर तो हमेशा बड़ी तेजी के साथ ऊपर की ओर चढ़ता है। उन्होंने सांप के काटने की अनेक घटनाएं देखी थीं। उन्होंने ऐसा कभी न देखा था कि जहर बदन में फैलने के वजाय बूंद-बूंद कर इन्सान के बदन से ही टपकने लगा हो। बाबा दामोदर के डंसे हुए पैर पर हाथ फेरते रहे और जहर बूंद-बूंद कर टपकता जा रहा था। थोड़ी देर बाद बूंदों का नीला रंग लाली में धीरे-धीरे बदल गया।

“दामोदर के शरीर से सारा जहर निकल गया है। जितने खून में जहर मिला था, वह खून भी निकल गया। अब खतरे की कोई बात नहीं रही।”—साईबाबा ने कहा और—पूछा, “कैसी तबीयत है दामोदर ? कैसा लग रहा है ?”

“मेरी तबीयत तो ठीक है बाबा।”—दामोदर कहा और साईबाबा के

पैरों से लिपटकर फूट-फूटकर रोने लगा—“आपने मुझे बचा लिया साईबाबा।—“वह पैरों से लिपटा विलाप करता जा रहा था। देखते-देखते वह विप के प्रभाव से एकदम मुक्त हो गया। सबके लिए यह महान आश्चर्य का विषय था। अपनी आंखों से प्रत्यक्ष देखा यह चमत्कार हैरत-अंगेज था।

साईबाबा के होंठों पर मुस्कराहट थी।

शोहरत

दामोदर को सांप के काटने और तब साईबाबा के यह कहते ही कि उतर जा, जहर का बूंद-बूंद टपक जाने की बात देखते ही देखते गांव भर में फैल गयी। लोग पुरानी मस्जिद की ओर चल पड़े। लोगों ने साईबाबा को अपने कंधों पर उठा लिया और जय-जयकार करने लगे।

“हम साईबाबा को सारे गांव में घुमायेंगे।”—नई मस्जिद के मुल्ला ने कहा, “मैंने तो पहले ही कह दिया था कि साईबाबा मामूली इन्सान नहीं हैं। इन्सान नहीं फरिश्ते हैं। यह तो शिरडी गांव की तकदीर है कि साईबाबा यहां आ गए।”

“हां साईबाबा का जुलूस हम ले जायेंगे।”—और सब लोग जुलूस की व्यवस्था में लग गए।

पंडितजी को बहुत दुख हुआ। शिरडी गांव में वही एक ऐसे व्यक्ति थे जिनके और लोगों की अपेक्षा कई पद अधिक थे। वह गांव के पुरोहित और नये मन्दिर के पुजारी के साथ-साथ वैद्य भी थे। यह बात उनकी समझ से परे थी कि साईबाबा के मंत्र मात्र से जहर उतर सकता है। इस बात को वह ढोंग मान रहे थे। उनको इसमें कुछ चाल नजर आ रही थी। वह गांव के लोगों का इलाज भी करते थे। यह सब सुनकर उनका मन जलन से भर गया था। साईबाबा चमत्कारी पुरुष हैं, वह इस बात को मानने के लिए तैयार न था। वह साईबाबा के खिलाफ अनाप-शनाप बकने लगा।

सारे गांव शिरडी में साईबाबा की चर्चा थी। पंडितजी की ईर्ष्या का ठिकाना न था।

शिरडी के तमाम स्त्री पुरुष, बड़े बूढ़े इस घटना पर चकित थे। यका-यक सांप को नेवले ने टुकड़े-टुकड़े भी कर डाला था।

“जरूर कोई महात्मा है।”

“सिद्ध पुरुष हैं।”

“देखो न ! कैसे-कैसे चमत्कार करता है !”

और अब साईबाबा के दर्शन करने लोग जा रहे थे। उधर पंडितजी ने साईबाबा द्वारा नाग के जहर को शरीर से बूंद-बूंद कर निकाल देने की बात सुनी तो आगबबूला हो गये थे और फिर उनके जी में जो भी आया साईबाबा के विरुद्ध अनाप-शनाप बकने लगे थे।

“यह गांव ही मूर्खों का है।”—पंडितजी ने क्रोध से कांपते हुए कहा, “वह छोकरा है। सिद्ध पुरुष कहां से हैं। अरे कई-कई जनम बीत जाते हैं साधना करते, तब कहीं जाकर सिद्धि प्राप्त होती है। नाग का जहर तो संपेरे भी उतार देते हैं। मुझे तो पहले ही दिन दिखाई दे गया था कि वह संपेरा है। संपेरों की ही ऐसी कौम है, जो हिन्दुओं का और मुसलमानों का जूठन भी खा लेती है। उसे जात-पात का ध्यान नहीं रहता है। वह भला सिद्ध हो ही कैसे सकता है !”

“आप बिल्कुल ठीक कहते हैं पंडितजी।”—एक आदमी ने कहा, “पन्द्रह सोलह साल का छोकरा है और गांव वालों ने उसका नाम रख दिया साईबाबा। यह साईबाबा का क्या मतलब होता है, पंडितजी।”

“इसका मतलब तो उन्हीं लोगों से जाकर पूछो, जिन्होंने उसका यह नाम रखा है।”—पंडितजी ने कहा—“पुरानी मस्जिद में देखकर आ। क्या हो रहा है वहां पर ?”

अचानक झांझ, मृदंग, ढोल और अन्य वाद्यों की आवाज-आदमियों का शोर सुनकर पंडितजी चौंक गये। बाजों की आवाज के साथ-साथ जय-जय के नारे भी सुनायी पड़ रहे थे।

सामने से जुलूस आ रहा था।

“पंडित जी, बाहर आइए। जुलूस आ रहा है।”—एक आदमी ने जोर से चिल्लाकर कहा।

पंडितजी बाहर से निकले और अपने घर के एक कोने पर आ खड़े हुए।

पंडित ने अश्चर्य से देखा। आगे-आगे गांव के कुछ लोग झांझ बजाते हुए आ रहे थे। उनके पीछे एक पालकी पर साईबाबा बैठे थे। दमोलकर उसके साथियों ने पालकी कंधों पर उठा रखी थी। पालकी के पीछे गांव के प्रतिष्ठित लोगों की भीड़ चल रही थी। गांव के पटेल भी थे। नई मस्जिद के मुल्ला जी भी। साथ ही जुलूस में बहुत सी महिलाएं भी थीं। गांव के लगभग सभी लोग साईबाबा की जय-जयकार कर रहे थे। यह जुलूस देखकर पंडितजी का पारा आठवें आसमान पर आ गया। वह चिल्लाकर बोले—
“सत्यानाश ये ब्राह्मणों के लड़के इस संपेरे के बहकावे में आ गए। बड़ा जादूगर है यह। नौजवानों को इसने जादू से अपने वश में कर रखा है। देख लेना एक दिन सब इसी की तरह शैतान बन जायेंगे। हे भगवान कैसा जमाना आ गया है।”

जुलूस बढ़ता जा रहा था और लोगों की भीड़ भी बढ़ती जा रही थी। साईबाबा की पालकी के आगे-आगे लोग नाचते गाते और साईबाबा की जय-जयकार करते जा रहे थे।

राह में घर के दरवाजों पर खड़ी स्त्रियां फूल बरसाकर जुलूस का स्वागत कर रहीं थीं।

पंडित जी साईबाबा का जुलूम न देख सके। गुस्से से पांव पटक घर में चले गये। उन्होंने घर का दरवाजा बन्द किया और कमरे में जाकर लेट गए। वह मन ही मन साईबाबा को कोस रहे थे। कैसा जमाना आ गया है! इस छोकरे ने तो गांव की हवा ही खराब कर दी है। वह उनको अपना दुश्मन दिखलायी पड़ रहा था। जुलूस गांव भर में घूमता रहा और साईबाबा की चर्चा हर जुबान पर होती रही।

जुलूस सारे गांव की परिक्रमा कर वापस लौट गया। साईबाबा के पास केवल कुछ ही लोग रह गये। साईबाबा चुपचाप आंखें बंद किए बैठे थे।

“बाबा, जब आप पहले-पहले इस गांव में आए थे और लोगों ने आप से पूछा था कि आप कौन हैं तो आपने कहा था मैं साईबाबा हूं। साईबाबा का क्या अर्थ है?”—दमोलकर ने पूछा। दमोलकर के इस प्रश्न पर साईबाबा मुस्कराए।

“देखो, दो अक्षर का शब्द है। सा और ई। सा का अर्थ है देवी और ई का अर्थ होता है मां। बाबा का अर्थ पिता है। इस प्रकार साईबाबा का अर्थ देवी, माता-पिता होता है। जन्म देने वाले माता-पिता के प्रेम में स्वार्थ छिपा हुआ है। देवी माता-पिता के स्नेह में रत्ती भर भी स्वार्थ नहीं होता है। वह तुम्हारा मार्गदर्शन करता है और तुम्हें प्रेरणा देता है, आत्मदर्शन आत्मज्ञान की प्राप्ति की सीधी और सहज राह दिखाता है।”—साईबाबा ने समझाते हुए कहा—“वैसे साई शब्द का प्रयोग परम पिता परमेश्वर अल्ला ताला और मालिक के लिए भी किया जाता है।”

“आप सचमुच साईबाबा हैं।”—एक ने बाबा की धूनी में लकड़ी डालते हुए कहा, “आपने नौजवानों को रास्ता दिखाया है। हम सबको आपने ईश्वर की भक्ति के मार्ग पर लगाया है।”

“यह मानव शरीर न जाने कितने पिछले जन्मों के भले कामों के बदले में मिलता है। संसार में जितने भी शरीरधारी हैं, उन सबमें मनुष्य ही सबसे अधिक बुद्धिमान प्राणी है। वह इस जन्म में और अधिक अच्छे काम कर सकता है। उसके पास बुद्धि और ज्ञान होता है और हम मानव शरीर पाकर मोह-माया और वासना के दलदल में फंस जाते हैं। इससे छुटकारा पाना असम्भव हो जाता है। मन रात-दिन वासना और स्वार्थ में डूबा रहता है। धनसंपत्ति के लिये वह क्यों-क्या नहीं करता है। मनुष्य को इस दलदल से कोई यदि छुटकारा दिला सकता है, तो वह है गुरु...केवल गुरु। लेकिन आजकल सच्चा गुरु कहां मिलता है! सच्चे इंसान ही बड़ी मुश्किल से मिलते हैं। सच्चे गुरु का मिलना तो और भी कठिन है।”

“सच्चे गुरु की पहचान क्या है साईबाबा?”—एक ने प्रश्न किया।

“सच्चा गुरु वही है, जो शिष्य को अच्छाई-बुराई का भेद बता सके। उचित और अनुचित का अन्तर बता सके। आत्म-प्रकाश आत्म-ज्ञान दे सके। मन में रत्ती-भर स्वार्थ की भावना न हो। शिष्य को अपना ही अंश मानता हो, वही सच्चा गुरु है।”—साईबाबा ने कहा और फिर जैसे कुछ याद आ गया—“आज तात्या नहीं दिखलायी पड़ रहा है।”

“मैं आपको बताना ही भूल गया था। तात्या को बहुत तेज बुखार है। बहुत ही कमजोर हो गया है, वह।”

“तो फिर चलो तात्या को देख आएं।”—साईबाबा ने उठते हुए कहा।

अपनी धूनी में से एक चुटकी भभूति अपने सिर के दुपट्टे के छोर में बांधकर वह चल पड़े ।

साईबाबा दामोदर तथा अपने कुछ अन्य शिष्यों के साथ तात्या के घर पहुंचे, तो तात्या बेहोशी में न जाने क्या बक रहा था । उसकी मां वाइजा बाई उसके सिरहाने बैठी उसका माथा सहला रही थी । तात्या एकदम कमजोर पड़ गया था ।

साईबाबा को देखते ही वाइजा उठकर खड़ी हो गई । चेहरा उतरा हुआ था । चिन्ता गहरी थी । शायद वह रात-भर सो नहीं पाई थी । उसका बेटा बेतरह कमजोर पड़ गया था । ऐसा था वह बुखार जो उसका शरीर एकदम तोड़ चुका था ।

“साईबाबा—!” वाइजा कहते-कहते रो पड़ी ।

“क्या बात है मां, तुम क्यों रो रही हो ?”—साईबाबा तात्या के पास जाकर बैठ गये ।

“जबसे आपके पास से आया है तभी से बुखार में तप रहा है । और इसे बराबर बेहोशी के दौरों पड़ रहे हैं । न जाने क्या बड़बड़ाता है ।”—वाइजा ने कहा ।

“देखूँ कैसे क्या हो गया है ? दुपट्टे के छोर में बंधी भभूति निकाली और तात्या के माथे पर मलने लगे ।”

वाइजा दामोदर और साईबाबा के अन्य शिष्य बड़े ध्यान से देख रहे थे । तात्या के होंठ धीरे-धीरे हिल रहे थे । कुछ बड़बड़ा-सा रहा था । वह इतना अस्पष्ट था कि कुछ समझ में ही नहीं आ रहा था ।

“साईबाबा—!” अचानक तात्या के होंठों से निकला और उसने एकदम आंखें खोल दीं ।

“क्या बात है तात्या ? मैं कब से तुम्हारा इन्तजार कर रहा था ? जब तुम न आए तो मैं चला आया ।”—साईबाबा ने स्नेह-भरे स्वर में कहा । साईबाबा के होंठों पर हलकी सी मुस्कान थी । आंखों में एक अजब-सी चमक थी ।

“मुझे न जाने क्या हो गया है बाबा ! आपके पास से आया । खाना खाकर सो गया । ऐसा सोया कि अब आंख खुली है ।”—तात्या ने कहा ।

“कल से बुखार में तप रहा है । वाइजा ने अपने बेटे की ओर देखते हुए

कहा—“मैंने सारी रात इसके सिरहाने बैठकर काटी है।”

“बुखार...! मुझे बुखार कहाँ है। मेरा बदन तो बर्फ जैसा ठंडा है,”—
तात्या ने अपना दायाँ हाथ बढ़ा दिया और फिर दूसरा हाथ दामोदर की ओर बढ़ाते हुए बोला—“लो भाई, तुम भी देखो, मुझे बुखार है क्या?”

वाइजा और दामोदर ने तात्या का हाथ देखा। उसे बुखार नहीं था। वाइजा ने जल्दी से तात्या के माथे पर हथेली रखी। थोड़ी देर पहले उसका माथा तबे की तरह जल रहा था पर अब तो बर्फ जैसा ठंडा था। वाइजा और दामोदर आश्चर्य से साईबाबा की ओर देखने लगे। वह मन्द-मन्द मुस्कुरा रहे थे।

वाइजा यह चमत्कार देखकर हैरान हो रही थी। तभी साईबाबा यकायक बोल उठे—

“मां, भूख लगी है, रोटी नहीं खिलाओगी।”

वाइजा ने तुरन्त हड़बड़ाकर कहा—“क्यों नहीं। अभी लाई।”—
और वह तेजी से चली गई।

थोड़ी देर बाद जब वह लौटी, तो उसके हाथ में थाली थी। कुछ रोटियाँ और दाल से भरा कटोरा।

साईबाबा ने दुपट्टे के कोने में रोटियाँ बांध लीं और तात्या की ओर देखकर बोले—“चलो तात्या आज तुम भी मेरे ही साथ भोजन करना।”

तात्या बिस्तर से उठकर खड़ा हो गया। अब उसको देखकर इस बात का विश्वास न था कि कुछ देर पहले वह बहुत तेज बुखार में तप रहा था। लगभग बेहोशी की सी हालत में था।

“ठहरो बाबा, मैं और रोटियाँ ले आऊँ।”—वाइजा ने कहा।

“नहीं मां, बहुत हैं। हम सबका पेट भर जाएगा।”—साईबाबा ने कहा। फिर वह अपने शिष्यों को साथ लेकर द्वारिका माई मस्जिद की ओर चल दिए।

उन के जाने के बाद वाइजा चिंता में पड़ गयी। उसने कुल चार ही रोटियाँ दी हैं। इतने में कैसे सबका पेट भर जायेगा। अतएव उसने जल्दी-जल्दी और रोटियाँ बना डालीं। फिर वह भी मस्जिद की ओर लपक गयी।

जब वाइजा खाना लेकर द्वारिकामाई मस्जिद पहुँची तो साईबाबा अपने शिष्यों के साथ रोटियाँ खा रहे थे। पाँचों कुत्ते भी उनके पास बैठे थे।

वाइजा ने रोटियों की टोकरी साईबाबा के सामने रख दी ।

“तुमने बेकार ही तकलीफ की मां । मेरा तो पेट भर गया । इन लोगों से पूछ लो । जरूरत हो तो दे दो ।”—साईबाबा ने रोटी का आखिरी टुकड़ा खाकर डकार लेते हुए कहा ।

वाइजा ने एक-एक कर पूछा । सबने यही कहा कि उनका पेट भर चुका है । उन्हें और रोटी की जरूरत नहीं । वाइजा ने रोटी के टुकड़े कुत्तों के सामने डाले लेकिन कुत्तों ने उन टुकड़ों की ओर देखा भी नहीं । वाइजा के आश्चर्य का ठिकाना न था । साईबाबा को कुल चार रोटियां दी थीं । उन चार रोटियों से भला इतने आदमियों और कुत्तों का पेट कैसे भर गया ?

वह समझ न पा रही थी ।

उसे साईबाबा के चमत्कार का पता न था । एक प्रकार से यह उनका एक चमत्कार था, जो वह देख और अनुभव कर रही थी । शाम तक तात्या के बुखार उतरने की बात गांव के एक छोर से दूसरे छोर तक सब जगह पहुंच गई ।

धूनी की भभूति माथे से लगाते ही तात्या का बुखार से जलता बर्फ जैसा ठंडा पड़ गया ।”—एक आदमी ने पंडित जी से कहा ।

“अरे जा जा, बर्फ जैसा ठंडा पड़ गया बुखार से तपता बदन । सुबह दमोलकर खुद तात्या को देखकर आया था । उसका बदन भट्टी की तरह दहक रहा था । वह तो रात से ही बुखार के मारे बेहोश पड़ा था । बेहोशी में न जाने क्या-क्या बड़बड़ा रहा था ! इतना तेज बुखार और सन्निपात चुटकी-भर धूनी की राख से छूमन्तर हो जाये तो फिर दुनिया ही न पलट जाये ।”—पंडित जी ने अविश्वास भरे स्वर से कहा ।

“यह सच है पंडितजी !”—उस आदमी ने कहा—“और इससे भी ज्यादा अचम्भे की बात और भी हो गयी है । पंडितजी ! उसे तो सुनिए ।”

“वह क्या !”

“साई बाबा ने तात्या के घर जाकर वाइजा से खाने के लिए रोटियां मांगीं । कुल चार रोटियां थीं । उस समय साईबाबा के साथ दामोदर और लड़के भी थे । वाइजा ने सोचा कि चार रोटियों में इतने आदमियों का पेट कैसे भरेगा ! फिर साई बाबा के कुत्ते भी तो साथ खाना खाते हैं । वाइजा ने रोटियां बनाईं । लेकर मस्जिद गईं । सब ने यही कहा कि उनका

पेट तो भर चुका है। बाइजा ने एक रोटी तोड़कर कुत्तों के आगे डाली, लेकिन कुत्तों ने रोटी सूंघी भी नहीं। अब आप ही बताइए सब लोगों के हिस्से में मुश्किल से चौथाई रोटी आई थी। फिर उन सबका पेट भर कैसे गया? एक-एक आदमी आठ-आठ रोटी से कम तो नहीं खाता है। लेकिन उसका एक टुकड़े में ही कैसा पेट भर गया। चमत्कार है न!” उस आदमी ने पूरी घटना बतला दी।

उसकी बात पर पंडित जी बोले, “बेकार की बकवास मत कर। यह सब झूठ प्रचार है। वैसे तुम्हारा नाम दादू है न। जैसा तुम्हारा नाम है, वैसी ही तुम्हारी अकल है। मैं एक बात को भी मानने के लिए तैयार नहीं। सब उन छोकरो की मनगढ़न्त कहानी है, जो रात दिन गांजे के लालच में चिपटे रहते हैं। तुमको पता है। साईबाबा गांजे की दम लगाता है। सब छोकरो को गांजेडी बना कर रख देगा।”—पंडितजी ने कहा।

पंडितजी की बात पर दादू को गुस्सा आया, लेकिन कुछ सोचकर चुप रह गया। उसकी पत्नी पिछले कई महीने से बीमार थी। उसका इलाज पंडितजी कर रहे थे। दादू अपनी पत्नी के इलाज पर बहुत रुपया खर्च कर चुका था, पर कोई लाभ न हो रहा था। पंडितजी दवा के नाम पर बराबर उससे पैसे ले रहे थे।

दादू की बातों से पंडितजी की ईर्ष्या और द्वेष भड़क गयी। साई बाबा पर गुस्सा उतारना तो असम्भव था। दादू पर ही गुस्सा उतारने लगे।

उन्होंने गुस्से में दादू की ओर देखते हुए कहा—“अगर तुझे यही विश्वास है कि धूनी की राख लगते ही तात्या का बुखार छूमन्तर हो गया तो अपनी घर वाली को क्यों नहीं ले जाता उस ढोंगी साई के पास। आज से तेरी घरवाली का इलाज बन्द। जा, अपने साई बाबा के पास जा और धूनी की सारी राख लाकर अपनी घर वाली के बदन पर मल दे। टी०बी० ने मुट्ठी-भर हड्डियां छोड़ दी हैं। धूनी की राख मलते ही पल में छूमन्तर हो जायेगी।”

“ऐसा मत करो पंडितजी। मैं गरीब आदमी हूँ।”—दादू ने हाथ जोड़कर प्रार्थना की। पंडित का गुस्सा कम न हुआ।

दादू ने नम्रता से कहा—“पंडितजी मैं साई बाबा की तारीफ कहां कर रहा था। मैंने तो आपको बात बतलायी।”

“चुप रह। आज से तेरा इलाज वही करेगा।”—दादू पंडित जी का क्रोध देखकर हैरान था। साईबाबा के नाम पर इतनी जिद ! पंडितजी पर प्रार्थना का कुछ भी प्रभाव न पड़ा। उल्टे दादू पर पंडितजी का क्रोध बराबर बढ़ता ही चला जा रहा था। दादू का हाथ पकड़कर और एक झटका देते हुए कहा; “मैं ब्राह्मण हूं और ब्राह्मण एक बार जो कुछ कहता है, वह अटल होता है। मैंने जो कह दिया, सो कह दिया। अब पत्थर की लकीर समझो।”

“नहीं पंडितजी, ऐसा मत कीजिए। मेरी घरवाली को कुछ हो गया तो मैं बे-मौत ही मर जाऊंगा। मेरी हालत पर रहम कीजिये। मेहरबानी करके ऐसा मत करिये। मैं बड़ा गरीब आदमी हूं। बे-मौत मारा जाऊंगा।” दादू ने गिड़गिड़ाते हुए कहा।

चबूतरे पर मौजूद और लोगों ने भी दादू की सिफारिश की, लेकिन पंडित टस से मस नहीं हुआ।

गुस्से में भरकर बोला—“मेरी खुशामद करने की कोई जरूरत नहीं है। चला जा, अपने साईबाबा के पास। उन्हीं से ले आ चुटकी भर धूनी की राख। अपनी अन्धी मां की आंखों में लगा दे। दिखाई देने लगेगा। उसे मल देना। अपनी अपाहिज बहिन के हाथ-पैरों पर, वह दौड़ने लगेगी। अपनी घरवाली को लगा देना रोग छूमन्तर। जां भाग यहां से ! खबरदार जो फिर कभी मेरे चबूतरे पर पांव भी रखा। हाथ पैर तोड़ दूंगा।—“जिस बुरी तरह पंडित ने दादू को फटकारा उससे उसकी आंखों में आंसू भर गये। वह फूट-फूटकर रोने लगा, पर पंडित पर कुछ भी प्रभाव न पड़ा। वह दुःखी मन से घर लौट गया।

एक और चमत्कार

दादू की आंखों के आगे अपनी मां, बहिन और पत्नी के बीमार और मुरझाए चेहरे घूम रहे थे।

दादू ने घर के आंगन में कदम रखा था कि पत्नी के खांसने की आवाज

सुनाई दी। वह लपककर कोठरी में पहुंचा। पिछले कई वर्ष से उसकी पत्नी बीमार पड़ी हुई थी।

“क्या बात है सीता !” — दादू ने पूछा।

सीता का शरीर एकदम जर्जर हो गया था। शरीर के नाम पर वह हड्डियों का ढांचा मात्र रह गयी थी। उसकी हालत दिन पर दिन गिरती ही जा रही थी।

दादू को आया देख उसकी अपंग बहिन सामने आ गयी। बोली—“तुम कहां चले गए थे मैया ?” भाभी की हालत बहुत खराब है। पहले जोरों की खांसी उठती है और फिर खांसते-खांसते खून भी फेंकने लगती हैं। वैद्यजी को बुला लाओ। भाभी की हालत अच्छी नहीं मालूम होती है।”—उसका स्वर घबराया सा था।

दादू ने मुड़कर अपनी पत्नी की ओर देखा। उसकी पत्नी सीता दोनों हाथों से अपना सीना पकड़े खांस रही थी। शायद बलगम गले की नली में अटक गया था, जिसके कारण उसे सांस लेने में बहुत ही कठिनाई हो रही थी। दादू ने उसे सहारा देकर लिटा दिया। दोनों हाथों से वह उसकी पीठ मलने लगा।

“बेटा, जा वैद्यजी को बुला ला, बहू की हालत ठीक नहीं है।”—दादू की अन्धी मां ने रुंधे गले से कहा—“मुझे दिखाई भी नहीं देता, लेकिन बहू की सांस से ही मैं समझ गई हूं। जा वैद्यजी को ले आ।”

दादू जानता था कि पंडितजी बहुत ही जिद्दी आदमी हैं। वह किसी भी हालत में नहीं आयेंगे। वह एक पल कुछ सोचता रहा। तब तेजी से घर से निकला और द्वारिकामाई मस्जिद की ओर दौड़ता गया।

उसका मन बेहद घबरा गया था। साईबाबा के अलावा अब दूसरा कोई उसे नजर न आ रहा था। पंडित ने तो खड़ा जवाब दे दिया था। यह सीधा द्वारिकामाई मस्जिद गया। यहां साईबाबा के पास कई लोग बैठे थे।

“साई बाबा—!”—अचानक दादू की घबराई हुई आवाज सुनकर सब लोग चौंक गये। उन्होंने पलटकर दादू की ओर देखा। उसके चेहरे पर घबराहट, पीड़ा झलक रही थी। आंखों में आंसू थे।

“क्या बात है दादू ! तुम इतने घबराए हुए क्यों हो ?”—साई बाबा ने पास आने का इशारा करते हुए कहा, दादू पास आ गया। उसने रो-रोकर

पंडितजी की सारी बातें साईबाबा को बतला दीं। साईबाबा मुस्कुरा उठे बोले—“जरा-सी बात से ही तुम इतने घबरा गए। तुम्हें तो उनका अहसान मानना चाहिए। उन्होंने तुम्हें सही सलाह दी है।”—और वह खिल-खिलाकर हंसने लगे। सब चुपचाप बैठे दाढ़ की बातें सुन रहे थे। अपनी धूनी में से एक-एक करके तीन चुटकी भभूति उसकी हथेली पर रख दी और बोले, भभूति ले जाओ और उन्होंने जिस-जिस तरह बताया है, उसी तरह प्रयोग करो। तुम्हारी सारी चिन्ताएं दूर हो जायेंगी।”

साईबाबा ने बड़े सहज भाव से सारी बात कही। सब आश्चर्य से देख रहे थे।

दाढ़ ने साईबाबा के चरण छुए और अपने घर की ओर चल दिया।

पंडितजी ने साईबाबा ने जो कुछ कहा था, उसे सुनकर वहां बैठे लोगों के मन में हैरानी हो गयी। साईबाबा जिस दिन से इस गांव में आए हैं, पंडितजी उसी दिन से साईबाबा के पीछे पड़े हैं। रात-दिन साईबाबा के बारे में जहर उगलते रहने के अलावा उनके पास और जैसे कुछ नहीं रह गया था। सब खामोश रह गये। साईबाबा ने दाढ़ को भभूति देकर विदा कर दिया। फिर वह ईश्वर सम्बन्धी चर्चा करने में चले गये।

द्वारिकामाई मस्जिद में अब साईबाबा का डेरा स्थायी हो गया था। मस्जिद के एक कोने में साईबाबा ने अपनी धूनी रमा ली थी। जमीन ही उसका बिस्तर था। वेंकुश महाराज के आश्रम के लड़कों के द्वारा मारी गयी ईंट को हमेशा सिरहाने रखा करते थे। उनको जाने उस ईंट से क्या लगाव हो गया था ! उस ईंट को एक पल को भी अपने से अलग न करते थे। अपने स्थान से उठकर कहीं जाया करते थे, तो उस ईंट को अंगोछे में बांध लिया करते थे। लोग उनका ईंट से इतना लगाव देखकर हैरान थे पर कोई इस सम्बन्ध में उनसे कुछ न पूछता था।

साईबाबा को अपने खानपान की कुछ चिन्ता न रहती थी। जो कुछ मिल जाता था, खा लेते थे। दो चार घर से आ गयी कुछ रोटियां ही उनके लिए काफी हुआ करती थीं।

वह तेजी के साथ अपने घर आया।

चिन्ता बहुत थी, पर साईबाबा की बात पर उसे पूरा विश्वास था। उसने वैसा ही करने का निश्चय किया, जैसा कि साईबाबा ने उससे कहा था।

मन ही मन उसको बड़ी सांत्वना भी मिल रही रही । उसको पूरा विश्वास था कि सभी संकट दूर हो जायेंगे ।

दादू को न जाने क्यों साईं बाबा पर इतना विश्वास हो गया था कि उसने घर पहुंचते ही पत्नी को भभूति चटाने से पहले अपनी अन्धी मां की आंखों में सुर्मे की तरह लगा दी और फिर थोड़ी-सी भभूति अपनी अपाहिज बहिन को देकर बोला, “यह बाबा की भभूति है । इसे अपने हाथ पैरों पर लगा ले ठीक से ।”

उसने बेहोश पड़ी पत्नी का मुंह खोलकर थोड़ी-सी भभूति उनके मुंह में डाल दी । बाकी एक कपड़े में बांध कर पूजाघर में रख दी । फिर अपनी पत्नी के सिरहाने आकर बैठ गया । कुछ देर के बाद उसने महसूस किया कि सीता की उखड़ी हुई सांसें धीरे-धीरे ठीक होती जा रही हैं । उसके गले में गड़गड़ाहट नहीं हो रही । चेहरे का तनाव और पीड़ा भी पहले की अपेक्षा काफी कम होने लगे थे ।

कुछ देर के बाद सहसा सीता ने आंखें खोल दीं और फिर बिना किसी सहारे के उठकर बैठ गई ।

“कैसी तबीयत है सीता ?”—दादू ने पूछा ।

“जी मिचला रहा है । उल्टी आएगी ।”—सीता ने कहा ।

“ठहरो ! मैं कोई बर्तन तुम्हारी चारपाई के पास रख देता हूं । उसी में उल्टी कर लेना । बिस्तर से उठो मत ।”—दादू ने कहा और उठकर बाहर चला गया ।

सीता को हिचकियां आ रही थीं । उसने अपने आपको बहुत रोकने की कोशिश की, लेकिन रोक नहीं पाई । वह तेजी से उठने लगी ।

“यह क्या कर रही हो भाभी, तुम उठो मत । लेटी रहो । चार-पाई के नीचे उल्टी कर दो । मैं सब साफ कर दूंगी ।”—सावित्री ने कहा ।

लेकिन सीता ने अपने पैरों पर पड़ी चादर हटा दी और दोनों पैर बिस्तर से उठाकर कोठरी के फर्श पर रख लिए ।

“नहीं भाभी, नहीं । उठने की कोशिश मत करो ।”—और धीरे-धीरे उसकी चारपाई की ओर बढ़ने लगी ।

सीता हिम्मत कर बिस्तर से उठकर खड़ी तो हो गई, लेकिन उठते ही उसे चक्कर से आने लगे । उसने धबकाकर दीवार का सहारा लेने की

कोशिश की, लेकिन दीवार काफी दूरी पर थी। वह दीवार का सहारा नहीं ले पायी और घड़ाम से गिर पड़ी।

“भाभी—!” सावित्री के मुँह से एक चीख निकली और उसने झपटकर सीता को अपनी दोनों बांहों में भर लिया और फिर उसे दोनों हाथों से उठाकर बिस्तर पर लिटा दिया।

और जैसे ही उसने सीता को बिस्तर पर लिटाया, आश्चर्य भरी एक चीख होठों से निकल गई।

“क्या हुआ बेटी ?”—अचानक मां ने सीता के बिस्तर की ओर बढ़ते हुए पूछा और फिर झुककर बेहोश सीता के चेहरे पर बिखरे बालों की लट्टें बड़े प्यार से हटाते हुए दर्द भरे स्वर में बोली,—“कितनी कमजोर हो गई है। कितना पीला पड़ गया है चेहरा। लगता है जैसे किसी ने चेहरे पर हल्दी पोत दी हो।”

“मां...!”—आश्चर्य और हर्ष से फिर एक बार वह चीख पड़ी। उसने मां के दोनों कंधे पकड़कर उनका चेहरा अपनी ओर घुमा लिया और फिर बड़े ध्यान से उनके चेहरे को देखने लगी। उसकी आंखें आश्चर्य से फटी जा रही थीं।

“इस तरह पागलों की तरह आंखें फाड़-फाड़कर क्या देख रही है। बेटी ?”—मां ने सावित्री की फटी-फटी आंखों और उसके चेहरे पर छाए आश्चर्य को देखकर कहा।

“मां...क्या तुम्हें भाभी का पीला-पीला चेहरा दिखाई दे रही है ?” सावित्री ने तेजी से पूछा।

“सब दिखाई दे रहा है ? यह तू क्या कह रही है बेटी ?”—मां ने कहा और फिर एकदम चौंक पड़ी, “अरे हां—यह क्या हो गया—?” वह प्रसन्नता मिश्रित आश्चर्य से बोली—मुझे तो सब कुछ साफ-साफ दिखाई दे रहा है।”—फिर जोर से पुकारा—“दादू—ओ दादू—जल्दी आ रे—देख तो—मेरी आंखें ठीक हो गईं। अब मैं सब कुछ देख सकती हूँ—मैं सब कुछ देख रही हूँ रे !”

मां की आवाज सुनकर दादू दौड़ता हुआ अन्दर आ गया और फिर आश्चर्य से जैसे वह पत्थर की मूर्ति बन गया। बहिन जो हाथ पैरों से अपाहिज थी, मां के कंधों पर हाथ रखे सीता की चारपाई के पास खड़ी

थी। अन्धी मां अपनी आंखों के सामने अपना हाथ फैलाए अपनी ही उंगलियां गिन रही थीं।

“बोलो साई बाबा की जय।”—दादू के होठों से बरबस निकला और फिर वह पागलों की तरह भागता हुआ घर से निकल गया। वह साई बाबा की जय बोलता हुआ पागलों की तरह भागा जा रहा था—भाग जा रहा था। गांव की टेढ़ी-मेढ़ी गलियों को पार करता हुआ द्वारिकामाई मस्जिद की ओर दौड़ता गया।

“क्या हुआ दादू—?”—कुछ आदमियों ने उसे रोक कर पूछने की कोशिश की।

“मेरे घर जाकर देखो।”—दादू ने कहा और फिर दौड़ने लगा। दौड़ते-दौड़ते बोला—“चमत्कार हो गया। चमत्कार हो गया। बोलो साई बाबा की जय।”

“लगता है, दादू की घर वाली चल बसी—पागल हो गया है मौत के गम में।”—अपने घर के चबूतरे पर बैठे पंडित जी ने दादू की हालत देखकर कहा—“घर वाली गई, अब अपाहिज बहिन और अन्धी मां भी चल बसेगी और फिर यह दादू भी। देख लेना एक दिन गांव के इन सभी जवान छोकरो का यही हाल होने वाला है, जो रात-दिन उस ढोंगी के पास बैठे रहते हैं।”

और फिर उन्होंने इधर-उधर देखा। चबूतरे पर और कोई न था। सब लोग वहां से उठकर दादू के घर की ओर जा रहे थे।

दादू की बात का सारे गांव में शोर हो गया था। साई बाबा की भभूती से आंखों में रोशनी आ गयी। अपाहिज ठीक हो गयी। टी० वी० का मरीज स्वस्थ हो गया।

गांव भर में चर्चा फैल गयी। दादू के घर के सामने देखने वालों की भीड़ बढ़ती गयी। साई बाबा का चमत्कार देखकर सब दंग थे। दादू रह-रहकर साई बाबा की जय के नारे लगा रहा था। लोग उसकी पत्नी, मां और बहिन को देखकर आश्चर्य से भर जाते थे। गांव का हर आदमी साई बाबा के प्रति श्रद्धा से भर गया। वह सचमुच एक चमत्कारी पुरुष हैं। सबको इसका विश्वास हो गया। गांव भर में साई बाबा की प्रतिष्ठा और भी बढ़ गयी।

पंडित जी इस घटना पर और बौखला गये। वह अनाप-शनाप बकने लगे, पर गांव वालों ने पंडितजी को पागल मानना शुरू कर दिया। कोई उनकी बात मानने के लिये तैयार न था। पंडितजी का विरोध अरण्यरोदन सिद्ध हो रहा था।

महामारी

लगभग दो सप्ताह से साईं बाबा ने खाना-पीना छोड़ दिया था। उनसे इसका कारण पूछते तो वह केवल उंगली उठाकर अपनी बड़ी-बड़ी आंखें फैलाए आकाश की ओर देखते लगते थे। उनके इस संकेत का अर्थ समझने की लोग कोशिश करते, लेकिन कोई भी समझ न पा रहा था। रह-रहकर उनके कांपते होंठों से बस इतना ही निकला—“महाकाल का मुख खुल चुका है। सब कुछ उसके मुंह में चला जाएगा। कोई नहीं बचेगा। एक-एक कर सब चले जायेंगे।”

उनके इन शब्दों को सुनकर लोग भय से कांप उठते। बाबा से पूछते लेकिन वह मौन हो जाते। उनकी कांपती अंगुली आकाश की ओर उठती और वह एक लम्बी सांस लेकर फटी-फटी आंखों से आकाश की ओर देखते ही रह जाया करते थे।

गांव का वातावरण सहमा-सहमा-सा होने लगा था। प्रत्येक गुरुवार को साईं बाबा की शोभायात्रा बड़ी धूमधाम से निकलती थी, लेकिन न जाने क्यों लोगों के मन आशंकित हो उठे थे। बाबा की इन बातों को सुनकर अगर किसी को खुशी होती तो वह थे पंडित जी। वह इस बात को भली-भांति जान गए थे कि साईं बाबा जो कुछ कहते हैं, वह सत्य होता है। उनकी भविष्यवाणी कभी झूठी नहीं होती। भविष्य में होने वाली घटनाओं को शायद वह पहले ही जान लेते हैं। अकाल, बाढ़ या महामारी, ऐसी देवी आपदायें हैं, जो गांव के गांव तबाह कर डालती हैं।

इनका कोई इलाज नहीं है। गांव के सब लोग भाग जाया करते हैं।

शायद ऐसा ही कोई संकट गांव पर आने वाला है। पंडितजी मन ही मन खुश थे। सारा गांव चिंता डूबा में था।

वर्षा ऋतु समाप्त हो चुकी थी। बाढ़ आने की कोई सम्भावना नहीं थी। ठीक वर्षा होने के कारण खेतों में खड़ी फसलें भी अच्छी तरह थीं। पिछले कई वर्षों से इस वर्ष अच्छी फसल होने की उम्मीद थी। अकाल की भी कोई आशंका नहीं थी। यदि कोई देवी आपदा आ सकती थी तो केवल वह महामारी थी। अगर महामारी फैली तो पंडितजी का भाग्य खुल जायगा। जब से साईबाबा गांव में आए थे उनकी आमदनी कम हो गई थी। साईबाबा की धूनी की भभूति असाध्य-से-असाध्य रोगों को जड़ मूल से खत्म कर देती थी। अब उनके पास रोगियों ने आना बिल्कुल बन्द कर दिया था।

फिर मन्दिर में भी पूजा करने वालों को दिन-पर-दिन कमी होती चली जा रही थी। तीन-चार लोग ही ऐसे रह गए थे, जो पूजा के लिए सुबह-शाम मन्दिर आते रहते थे या फिर सन्ध्या के समय प्रसाद की लालच में कुछ बच्चे ही इकट्ठे हो जाते थे। इस तरह मन्दिर से होने वाली आमदनी भी कम हो गयी थी। पुरोहिताई, धन्धा भी सन्तोषजनक नहीं था। साईबाबा के प्रवचनों को सुनकर लोगों में कथा सुनने की रुचि ही नहीं रह गयी थी। वर्षा समय पर होती थी, इसलिए वर्षा कराने के बहाने होने वाला हर वर्ष का यज्ञ भी बन्द हो ही गया था। भूत-प्रेत और ब्रह्म राक्षस तो साईबाबा के आते ही जैसे गांव से भाग गए थे। गांव में किसी भी किस्म का उत्पात न हो रहा था। सब कुछ प्रायः खामोश था। ऐसा लगता था कि गांव के घर-घर में सुख शांति का राज है। आपस में लड़ाई झगड़े भी लग-भग बन्द हो गये थे। पंडितजी को जैसे कार्य ही न मिल रहा था। वह सारे समय अपने घर में बेकार पड़े रहते थे। पड़े-पड़े उनका जी ऊबने लगा था।

पंडितजी बहुत दुःखी हो गये थे। अब घर का खर्च भी चलाना मुश्किल हो रहा था। उनके सामने रोटी-रोजी की समस्या खड़ी हो रही थी।

साईबाबा बराबर चिन्ता में पड़े रहते थे। वह एकटक आकाश की ओर देखते रहते थे। कुछ भी बोलते न थे।

तब आस-पास के बीस कोस के इलाके में फैल गयी हैजे की महामारी से लोग मरने लगे। कुछ उल्टियां होतीं, दस्त होते और लोग मौत के मुंह में

समा जाते। जब तक रोग को समझ पाते, उससे पहले ही उनके प्राण-पखेरू उड़ जाते थे। पंडितजी के औषधालय में फिर भीड़-भाड़ होने लगी थी। जब तक वह रोगी को देखने उसके घर तक पहुंचते रोगी बिना दवा के ही भगवान का प्यारा हो जाता था। पंडितजी की सारी भाग-दौड़ बेकार चली जाती थी।

आसपास के गांवों में हैजा फैलने की खबर से शिरडी के लोग भी चिन्ता में पड़ गये थे।

सब साईबाबा के पास गये।

‘बाबा, आस-पास के गांवों में हैजा फैल रहा है। अब तो वह गांव की सीमा पार करके दूसरे गांव में भी फैलता आ रहा है। कहीं हमारा गांव भी इस महामारी की लपेट में न आ जाए!’—शिष्यों ने साईबाबा से डरते हुए कहा।

साईबाबा पिछले कई सप्ताह से मौन थे। खाना-पीना भी छोड़ दिया था। सारे शिष्य और वाइजा उनसे चिरौरी कर हार गए थे, लेकिन न तो उन्होंने खाना खाया था और न किसी से कोई बातचीत ही कर रहे थे।

साईबाबा ने एक गहरी ठण्डी सांस छोड़ी और फिर आकाश की ओर देखने लगे। शिष्य और मस्जिद में उपस्थित दूसरे लोग बाबा के चेहरे को लगे। शायद बाबा कोई उपाय बतायें।

साईबाबा का चेहरा गंभीर पड़ गया था। चिन्ता की रेखाएं एकदम स्पष्ट रूप से उभर आयी थीं।

लगता था कि स्वयं गहरी चिन्ता में है। शायद अपने आपको कुछ कर सकने में असमर्थ पा रहे हैं। यकायक साईबाबा ने आंखें मूंद लीं और बोले, “कल सुबह आना तुम लोग। मैं सब बताऊंगा।”—बाबा शांत पड़ गये। सब बाबा की बात सुनकर चुपचाप उठकर उनके पास से चले गये।

अगले दिन पौ फटते ही सब लोग द्वारिकानाई मस्जिद में पहुंचे तो देखा मस्जिद के दालान में बैठे साईबाबा चक्की में जौ पीस रहे थे और जौ का आटा चक्की के चारों ओर फैला हुआ था।

सब लोग चुपचाप खड़े तमाशा देखते रहे। साईबाबा उसी तन्मयता से जौ पीसते रहे।

“बाबा, आप यह क्या कर रहे हैं?”—एक भक्त ने आगे बढ़कर पूछा।

“इस महामारी को भगाने की दवा बना रहा हूँ।”

“यह दवा है?”

“हां, यह दवा है। इसे एक कपड़े में भरकर ले जाओ और जहां-जहां तक महामारी फैली हो इस दवा को छिड़क आओ। परमात्मा ने चाहा तो इस गांव की सीमा में हैजे की महामारी न आ पायेगी।”—बाबा ने कहा।

शिष्यों ने एक झोली में सारा आटा भर लिया और साईबाबा की जै-जैकार करते हुए गांव की ओर चल पड़े। दोपहर तक गांव के चारों ओर सीमा पर आटे से लकीर बना दी।

इस प्रकार सारा गांव बांध दिया गया। साईबाबा की बात पर पंडित को विश्वास न हो रहा था कि महामारी इस प्रकार रुक सकती है। हैजे का प्रकोप आसपास के गांवों में बढ़ता ही जा रहा था। दस-पांच आदमी रोज मौत के मुंह में जा रहे थे। हाहाकार मचा था।

साईबाबा की इस अद्भुत दवा का समाचार आसपास के गांवों तक फैल गयी। लोग दवा मांगने के लिए शिरडी की ओर भागे।

“बाबा, हमारे गांव में तो हैजा फैला है। हमारे ऊपर दया कर हमें भी दवा देने की कृपा करें।”

और भी लोग साईबाबा के पास पहुंचकर दर्द भरे स्वर में कहने लगे। “हमें भी दवा दे दो बाबा! हम पर भी दया करो।”—कहने लगे—“सारा गांव श्मशान हो रहा है।”

“अरे, तुम इतना परेशान क्यों होते हो? जितनी दवा है, आपस में बांटकर ले जाओ और गांव के हर घर में छिड़क दो। जो बीमार होगा ठीक हो जाएगा और यह महामारी तुम्हारे गांव से भी भाग जाएगी।”—बाबा ने उन्हें सांत्वना दी।

आसपास के गांवों के लोग दवा बांट कर ले गए। साईबाबा की चक्की की घर्घर आवाज फिर मस्जिद के गुम्बदों और मीनारों में गूंजने लगी। दूर-दूर के गांवों के लोगों की भीड़ लग गई। साईबाबा की दी हुई दवा जिस गांव में पहुंच जाती, वहां हैजे की बीमारी का नामोनिशान भी न रहता था। बीमार इस तरह उठकर खड़े हो जाते थे, मानो वह बीमार ही नहीं पड़े है। दवा एकदम राम बाण के समान असर कर रही थी।

साईबाबा की दवा की कृपा से सैकड़ों घर उजड़ने से बच गए। हर

ओर सुनाई देने लगा—“साईबाबा की जय ।”

साईबाबा की इस कृपा से सबसे बड़ी हानि पहुंची पंडित जी को। उनको कोई पूछ भी न रहा था। महामारी फैली और उनके औषधालय में एक भी आदमी दवा लेने तक न आया।

पंडित जी मन-ही-मन साईबाबा पर जल रहे थे। गांव में साईबाबा कांटे की तरह खटक रहे थे। साईबाबा ने उनका धंधा-रोजगार एकदम चौपट कर दिया था। पंडितजी रात-दिन इसी चिंता में थे कि किस प्रकार साईबाबा को नीचा दिखाकर यहां से भगाया जा सकता है। यह अपने मन में बराबर योजनाएं बना रहे थे, पर एक भी योजना अमल में न ला पा रहे थे।

मिस्टर थामस

शिरडी एक पिछड़ा हुआ गांव था। हर गांव में ईसाई मिशनरियों ने अपने पैर जमा लिये थे। उनके प्रभाव में आकर शिरडी के कुछ लोगों ने ईसाई धर्म भी ग्रहण कर लिया था। उन्होंने एक छोटा-सा गिरजाघर भी बना लिया था। आसपास के ईसाई प्रत्येक रविवार को वहां एकत्र हुआ करते थे। उन्हें केवल यही सिखाया जाता था कि हिन्दू या मुसलमान जिन बातों को मानें, भले ही वह उचित और सच ही क्यों न हों, उसका विरोध करो। हिन्दू और मुसलमान जैसा आचरण करें, उसके विपरीत आचरण करो, ताकि तुम सबसे अलग दिखाई दो। उनका एकमात्र उद्देश्य हिन्दू सम्प्रदायों में द्वेष उत्पन्न करना था। वह साम्प्रदायिक भावना भड़काया करते थे।

ईसा मसीह में ही विश्वास करो। केवल वही भगवान का पुत्र है। शेष अवतार पैगम्बर हिन्दुओं और मुसलमानों के मनगढ़न्त कहानियां हैं। ईसाई सन्तों का आदर-सम्मान करो, क्योंकि वही एकमात्र हैं। हिन्दू साधू सन्त या मुस्लिम फकीरों की बात भी मत सुनो। वह सब ढोंगी होते हैं। इस

प्रकार की भावना वह बराबर फैला रहे थे ।

आस-पास के इलाके में हैजे की महामारी फैली तो वह लोग भी इस महामारी से अछूते न रहे । ईसाई धर्म का प्रचार करने वाली मिशनरियां ने यह देखकर ब्रिटिश सरकार से सहायता लेकर उस इलाके में अस्पताल बनवा दिया । इस अस्पताल में दवा उन्हीं लोगों को दी जाती थी, जो ईसाई थे । जो ईसाई बनने के लिये तैयार हो जाते थे, उनको दवा और रुपया पैसा भी दिया जाता था ।

मिशनरी अस्पताल के इंजेक्शन और दवा से भी जब लाभ न हुआ तो अनेक ईसाई भी अपने पादरियों की कड़ी हिदायतों को अनसुना कर साईं-बाबा की शरण में पहुंचने लगे । साईंबाबा के लिए न कोई हिन्दू था, न मुसलमान और न कोई ईसाई । उनके पास जो भी पहुंचता, वह उसी को अपनी भभूति दे देते थे । उस दवा का तत्काल चमत्कारिक प्रभाव पड़ता और रोगी मौत के मुंह में से बच जाता था । पादरियों ने ईसाइयों को पहले तो लालच दिया, फिर डराया भी कि अगर साईं बाबा के पास दवा लेने गए तो समस्त सुविधाएं छीन जायेंगी पर उन पादरियों की बातों की रत्ती भर भी परवाह न की गयी । वह उनकी बातों में न आये क्योंकि जिदगी और मौत का सवाल था । साईंबाबा की दवा तो रामबाण थी । वह निश्चित रूप से बीमारी ठीक कर देती थी । इसका उन सबको पूरा विश्वास था । वह स्वयं भी प्रभाव देख रहे थे । इस कारण वह सब साईंबाबा के पास आने जाने लगे । रविवार को गिरजे में जाना भी बन्द कर दिया ।

यह देखकर मिस्टर थामस को बहुत गुस्सा आया । वह शिरडी में अपना पवित्र ईसाई धर्म फैलाने के लिए आये थे । अधिक-से-अधिक को ईसाई बनाना उनके जीवन का एकमात्र उद्देश्य था । वह एक पादरी थे । साईं-बाबा के बढ़ते हुए प्रभाव को रोकने के लिए थामस ने यह निश्चय किया कि साईंबाबा को ढोंगी, झूठा सिद्ध किया जाए और एक बड़े पैमाने पर उनके विरुद्ध प्रचार आरम्भ कर दिया जाए ।

वह सीधे गांव में पहुंचे । साईंबाबा से मिलने के लिए, उनके दर्शन करने और उनके प्रवचन सुनने के लिए लोग दूर-दूर से आते रहते थे । लेकिन जब तक साईंबाबा की अनुमति प्राप्त नहीं हो जाती थी, किसी भी व्यक्ति को उनके पास नहीं जाने दिया जाता था । थामस के साथ भी यही

हुआ। वह द्वारिका माई मस्जिद में पहुंचे तो साईबाबा के शिष्यों ने उन्हें मस्जिद के बाहर ही रोक दिया। थामस को मस्जिद के बाहर खड़े-खड़े घंटों बीत गए। लोग आते रहे। बाबा उनसे मिलते रहे, लेकिन थामस को उन्होंने नहीं बुलाया। उस जमाने में प्रत्येक अंग्रेज अपने आपको बड़ा आदमी समझता था। थामस अंग्रेज थे। साईबाबा ने उन्हें रोककर अपमान किया था। भला वह इस अपमान को कैसे बर्दाश्त कर सकते थे। उन्होंने साईबाबा के शिष्यों से कहा कि वे साईबाबा से पूछ लें कि वह मुझसे मिलेंगे या नहीं? अगर वह नहीं मिलेंगे, तो मैं अभी लौट जाऊंगा।

साईबाबा का एक शिष्य थामस की खबर लेकर बाबा के पास पहुंचा। बाबा ने थामस का संदेश सुना और फिर मुस्कुराकर कहा, “जिन लोगों के मन में शंका, क्रोध, घृणा, पक्षपात आदि बुराइयां हैं, मैं उनसे मिलना नहीं चाहता। मिस्टर थामस से कहो, वह चले जायें। वैसे मैं उनसे कल मिल सकता हूँ। आज रात वह यहीं ठहरें। अगर वह अनिष्ट से बचना चाहते हैं तो उन्हें आज रात यहीं रहना चाहिए। रुकेंगे, तो मैं उनसे जरूर मिलूंगा।”

शिष्य ने बाबा का संदेश थामस तक पहुंचाने के बाद उनसे आग्रह किया कि वह रात को यहीं ठहरे। उनके रहने और खाने-पीने की व्यवस्था कर दी जाएगी। किसी प्रकार की असुविधा नहीं होगी।

थामस ने सब लोगों का आग्रह ठुकरा दिया और वह चल दिए। वह तांगे में बैठकर शिरडी तक आए थे। उन्हें साईबाबा की अनिष्ट की भविष्यवाणी ढोंग का ही एक अंश मालूम पड़ी।

उनका तांगा अभी स्टेशन से काफी दूर था कि अचानक एक साइकिल सवार सामने आ गया। तभी तांगे का घोड़ा अचानक भड़क उठा। तेजी से भागा। तांगे वाले ने घोड़े को रोकने की बड़ी कोशिश की, पर घोड़ा नहीं रुका। तांगा उलट गया। मिस्टर थामस तांगे से नीचे आ गिरे। उनके शरीर में कई जगह चोट लग गयी। वह लहुलुहान हो गये। तब सड़क पर आते-जाते राहगीरों ने उन्हें उठाया और अस्पताल में भर्ती करा दिया।

रात को जब थामस बेसुध सोए पड़े थे, अचानक उन्होंने देखा और साई बाबा पलंग के पास खड़े पाया। साई बाबा ने उनके सिर पर बंधी पट्टियों पर हाथ फेरते हुए कहा—“तुमने मेरी बात का विश्वास नहीं किया था, फिर भी मैंने तुम्हारी रक्षा की। इस दुर्घटना में तुम्हारी मृत्यु निश्चित थी।

अगर तुम मेरा कहना मान कर रुक गये होते तो मैं तुम्हें बचने का उपाय बता देता। तुम्हारे मन में तो मेरे प्रति अविश्वास भरा हुआ था, फिर भी तुम्हारी रक्षा करना मेरा धर्म था। तुम्हें बचा लिया।”

बाबा के अन्तर्धान होते ही थामस की आंखें खुल गईं। वह इधर-उधर देखने लगे, लेकिन कहीं कोई न था। चारों ओर गहरा सन्नाटा था।

कुछ दिनों के बाद डाक्टरों ने मिस्टर थामस को अस्पताल से छुट्टी दे दी।

थामस अस्पताल से निकलते ही शिरडी की ओर चल पड़े। साईं बाबा के प्रति उनका सारा अविश्वास समाप्त हो चुका था, धार्मिक कट्टरता न थी।

जब वह शिरडी आये, तो साईं बाबा ने उनका हार्दिक स्वागत किया। थामस ने आते ही साईं बाबा के चरणों में अपना सिर रख दिया। आंखों में आंसू आ गये। वह बार-बार अपने अपराधों के लिये क्षमा मांगने लगे। सब लोग यह दृश्य देखकर दंग रह गये। एक पादरी साईं बाबा के चरणों पर लोट रहा था। इसे सबने एक चमत्कार ही माना। थामस ने सबके सामने साईं बाबा से क्षमा मांगी। फिर खुले शब्दों में कहा, “साईं बाबा, आप एक महापुरुष हैं। पहुंचे हुए संत हैं। मैंने इस बात का प्रमाण पा लिया है। मानव जाति का उद्धार करने के लिये आप आये हैं।”

अपनी श्रद्धा और भक्ति का प्रदर्शन कर वह वापस चले गये। इस घटना के कारण शिरडी ही नहीं, आपपास के तमाम गांवों में साईं बाबा की जयजयकार होने लगी। साईं बाबा के नाम का डंका दूर-दूर तक बजने लगा था। सर्वत्र उनके नाम की धूम मच गयी थी।

ज्ञान का अधिकारी

महामारी का अंत हो जाने पर साईं बाबा का यश फैल गया। शिरडी से बाहर दूर-दूर तक उनकी कीर्ति फैल गयी। सभी साईं बाबा का चम-

त्कार जानकर उनके प्रति श्रद्धा और भक्ति में भर गये। एक पंडित जी को छोड़कर शिरडी में उनका दूसरा कोई विरोधी न रहा। बाबा के पास भक्तों का जमघट सदा रहने लगा। वह अपने भक्तों से जीवमात्र को प्रेम करने के लिये कहते थे। इतना यश होने के बाद भी बाबा का जीवन पहले जैसा ही था। मांगकर रोटी खाना उनका अपना नियम था। रुपये पैसे को वह हाथ न लगाया करते थे। श्रद्धालु भक्त जो कुछ दे जाया करते थे, उनके शिष्य उसका उपयोग मसजिद बनाने और गरीबों की सहायता करने में किया करते थे। साईं बाबा कभी दखल न देते थे और न ही पूछताछ किया करते थे।

मसजिद के एक कोने में उनकी धूनी रमी रहती थी। उसमें सदा आग जलती थी और साईं बाबा इसी धूनी के पास पड़े रहा करते थे। वही ईंट अपने सिरहाने रखकर रात को जमीन पर सो जाया करते थे। अपने वस्त्र भी वह ठीक से धारण न करते थे। फटा कुरता, धोती और माथे पर अंगौछा बंधा रहता था। नंगे पैर। यही उनकी वेशभूषा थी। अपने वदन की ओर से वह एकदम बेसुध रहा करते।

अहमदाबाद में एक गुजराती सेठ थे, उनके पास बहुत सम्पत्ति थी। हर तरह से सुखी सम्पन्न थे। साईं बाबा का यश सुनकर उनके मन में उनसे मिलने की इच्छा जाग उठी। बाबा के निवास शिरडी जाने की इच्छा जाग उठी। बाबा से मिलने के पीछे उनके हृदय में एक ही लालसा थी। मन-ही-मन सोचते, सांसारिक सुखों की तमाम वस्तुएं मौजूद हैं, क्यों न ज्ञान भी प्राप्त कर लिया जाय। इस प्रकार वह अपना परलोक भी बना लेना चाहते थे। शिरडी के साईं बाबा की कीर्ति उन तक आ चुकी थी। अतएव साईं बाबा से मिलने के लिए बहुत उत्सुक हो रहे थे। इसी बीच एक साधु उनके पास आया। वह भी साईं बाबा का भक्त था। उसने जो कुछ बतलाया, वह सुनकर वह और भी भक्त हो गये। साईं बाबा से मिलने की तीव्र इच्छा उनके मन में जाग उठी। साईं बाबा से मिलने का निश्चय कर लिया उन्होंने। वह शिरडी के लिये रवाना हो गये।

अपनी यात्रा कर जब वह शिरडी आये, तो उस दिन बृहस्पतिवार था, बाबा के प्रसाद का दिन। सेठजी की सवारी मस्जिद के पास रुक गई। लोगों की अपार भीड़ थी। बृहस्पतिवार को शिरडी गांव के ही नहीं बल्कि

दूर-दूर के अनेक गांवों के लोग साईं बाबा की शोभा यात्रा में सम्मिलित होने के लिए द्वारिका साईं मस्जिद जाते थे। बाबा की शोभा यात्रा निकाली जाती थी, जो द्वारिकामाई मस्जिद से चावड़ी तक जाती थी। साईं बाबा के शिष्य ज्ञान, मृदंग, मंजीरे आदि वाद्यों से भक्ति गीत और कीर्तन गाते हुए सबसे आगे-आगे चलते थे। इस जुलूस में महिलाएं भी बड़ी संख्या में भाग लिया करती थीं। उनके पीछे दर्जनों सजी हुई पालकियां होती थी और पीछे होता था बाबा का घोड़ा। घोड़ा जागीरदार ने साईं बाबा को मेंट किया था। इस घोड़े का रंग दूध जैसा सफेद था। उसके दोनों कान गहरे काले थे। घोड़े को खूब सजाया जाता था। घोड़े के पीछे एक सजी हुई पालकी होती थी, जिसमें साईं बाबा बैठते थे। उनके शिष्य पालकी को अपने कंधों पर उठाकर चलते थे। पालकी के दोनों ओर जलती हुई मशालें लेकर मशालची चलते थे। पालकी के पीछे चांदी के दंड और ध्वजाएं लेकर लोग चलते थे।

जुलूस के आगे आगे आतिशवाजी छोड़ी जाती थी। सारा गांव साईं बाबा की जय, भजन तथा कीर्तन की मधुर ध्वनि से गूंज उठता था। चावड़ी तक जाकर यह जुलूस फिर इसी क्रम से द्वारिकामाई मस्जिद की ओर लौट जाता था। जब पालकी मस्जिद के सामने पहुंच जाती थी, मस्जिद की सीढ़ियों पर खड़े हुआ रकीब बाबा के आगमन की घोषणा करता था, बाबा के सिर पर छत्र तान दिया जाता था। मस्जिद की सीढ़ियों पर दोनों ओर खड़े लोग ज्वर डुलाने लगते थे। रास्ते में फूल, गुलाल और कुमकुम बरसाये जाते थे। साईं बाबा हाथ उठाकर एकत्रित भीड़ को आशीर्वाद देते हुए धीरे-धीरे चलते हुए अपनी धूनी पर पहुंच जाते थे। सारे रास्ते भर "साईं बाबा की जय" का नारा गूंजा करता था। जुलूस के दिन शिरडी गांव की शोभा देखते ही बनती थी। उस दिन लोग अपना घर खूब सजाया करते थे। शिरडी गांव में त्यौहार-सा मनाया जाता था। हिन्दू मुसलमान सभी मिलकर साईं बाबा का गुण-गान करते थे।

बाबा की शोभा यात्रा को देखकर गुजराती सेठ चकित रह गए। वह बाबा के पीछे-पीछे चलते हुए अन्य भक्तों के साथ चलते हुए बाबा की धूनी तक आ गया। उन्होंने बाबा के चेहरे की ओर देखा। कुछ देर पहले ही बाबा का जुलूस राजसी शान शौकत से निकाला गया था, लेकिन बाबा के

चेहरे पर किसी प्रकार के अहंकार या गर्व की झलक तक न थी। उनके चेहरे पर हमेशा की तरह शिशु जैसा भोलापन छाया हुआ था। गुजराती सेठ बाबा के चरणों में झुक गया। बाबा ने उन्हें बड़े स्नेह से उठाकर अपने पास बिठा लिया।

गुजराती सेठ ने हाथ जोड़कर कातर स्वर से कहा—“बाबा परमात्मा की कृपा से मेरे पास सब कुछ है। सम्पत्ति जायदाद, संतान सभी कुछ है। संसार के सभी सुख मुझे प्राप्त हैं। आपके आशीर्वाद से मुझे किसी प्रकार का अभाव नहीं है।”

सेठ की इस बात पर बाबा ने हंसते हुए पूछा—“फिर आप मेरे पास क्या लेने आए हैं?”

“साई बाबा मेरा मन सांसारिक सुखों से ऊब गया है। मैंने धनो-पार्जन कर अपने इस लोक को सुखी बना दिया है। अब मैं ज्ञान-प्राप्त कर कुछ अपना परलोक भी सुधार लेना चाहता हूँ।

“सेठजी आपके विचार बहुत सुन्दर हैं। मेरे पास जो कोई भी आता है, मैं यथाशक्ति सहायता करता हूँ।”

साई बाबा की बात सुनकर सेठ बहुत प्रसन्न हो गया। साई बाबा की मुस्कान, उनका बोलने का ढंग, सब कुछ सेठ पर अपना प्रभाव डाल गया था। वह दोनों हाथ जोड़कर साई बाबा के सामने बैठ गया था। उसकी प्रसन्नता की सीमा न थी। आशा हो गई थी कि साई बाबा अवश्य ही ज्ञान करा देंगे। जिस विश्वास को लेकर वह जाया है, वह अवश्य ही यहां पर पूरा होगा। वहां का वातावरण देखकर वह और प्रसन्न हो गया था।

गुजराती सेठ बड़े आराम से था। अब उन्हें पूरा-पूरा विश्वास हो गया था कि उनका उद्देश्य पूरा हो जाएगा।

अचानक साई बाबा ने अपने एक शिष्य को अपने पास बुलाया और उससे बोले—“एक छोटा-सा काम कर दो। जाकर धनजी सेठ से सौ रुपये मांग लाओ।”

शिष्य आश्चर्य से साई बाबा के मुख को देखते रह गया। बाबा को शिरडी में आए हुए इतने वर्ष बीत गए थे, लेकिन उन्होंने पैसे को कभी छुआ भी न था। अक्त और शिष्य लोग उन्हें जो कुछ भेंट दे जाते थे, वह सब उनके दूसरे प्रमुख शिष्यों के पास ही रहता था। उनके आसन के नीचे

दस-पांच रुपये जरूर रख दिए जाते थे। इसलिए कि जब भी किसी भक्त को जरूरत हो या प्रसन्न होकर किसी व्यक्ति को कुछ देना चाहें तो दे दें। कभी-कभी जब वह किसी भक्त पर बहुत प्रसन्न होते थे, तो अपने आसन के नीचे से निकालकर दो-चार रुपये दे दिया करते थे। आज बाबा को इतने रुपयों की ऐसी क्या जरूरत पड़ गई? शिष्य सोच में डूबा हुआ धनजी सेठ के पास चला गया।

कुछ देर के बाद उसने लौटकर बताया कि धनजी सेठ तो पिछले दो दिन से बम्बई गए हुए हैं।

“कोई बात नहीं। तुम बड़े भाई के पास चले जाओ। वह तुम्हें सौ रुपये दे देंगे।”

परेशान-परेशान-सा वह फिर चला गया।

तभी वृहस्पतिवार को होने वाले सामूहिक भोजन का कार्यक्रम आरम्भ हो गया। उस दिन जो भी लोग शोभा यात्रा में जाते थे, मस्जिद में ही खाना खाया करते थे। जाति-पात, छूत-छात, ऊँच-नीच की भावना छोड़कर सभी एक साथ बैठकर बाबा का प्रसाद बड़ी श्रद्धा से ग्रहण किया करते थे।

साईं बाबा ने सेठ से कहा,—“सेठजी, आप भी प्रसाद ले लीजिए।”

“मैं तो भोजन कर चुका हूँ बाबा। खाना खाने की मुझे रस्ती-भर भी इच्छा नहीं है। आप मुझे ज्ञान दीजिए। मेरे लिए आपका यही सबसे बड़ा प्रसाद होगा।”—सेठजी ने हाथ जोड़कर कहा। तभी शिष्य सेठ की दुकान से लौट आया। उसने बताया कि सेठ का भाई भी अपने किसी सम्बन्धी के यहां गया हुआ है। दो-तीन दिनों के बाद लौटेंगे।

“कोई बात नहीं तुम जाओ।”—साईं बाबा ने एक लम्बी सांस लेकर कहा।

शिष्य की परेशानी की कोई सीमा न थी। समझ में नहीं आ रहा था कि साईं बाबा को इतने रुपयों की अचानक क्या जरूरत आ पड़ी? साईं बाबा उठकर मस्जिद के चबूतरे पर चले गए। जहां शोभायात्रा में आए हुए लोग भोजन कर रहे थे। वह चबूतरे के पास ही एक टूटी दीवार पर जा बैठे और अपने शिष्यों तथा भक्तों को देखने लगे। इस समय उनके चेहरे पर वैसे ही प्रसन्नता के भाव थे, जैसे किसी पिता के चेहरे पर उस

समय प्रकट होते हैं, जब वह अपनी सन्तान को भोजन करते देखता है, गुजराती सेठ साईं बाबा के पास खड़ा कार्यक्रम को देखता रहा। कुछ देर बाद जब बाबा अपने आसन पर आकर बैठ गए तो गुजराती सेठ ने फिर अपनी प्रार्थना दोहरायी।

इस पर बाबा खिलखिलाकर हंस पड़े। हंसने के बाद उन्होंने गुजराती सेठ की ओर देखते हुए पूछा, “सेठजी, क्या आपने यह भी सोचा है कि आप ज्ञान प्राप्त करने के योग्य हैं अथवा नहीं?”

“मैं समझा नहीं!”—सेठ बोला।

“देखो सेठजी ब्रह्मज्ञान प्राप्त करने का अधिकारी वही व्यक्ति होता है, जिसके मन में मोह न हो। सांसारिक वस्तुओं के लिए लालसा न हो, त्याग की भावना हो और जो संसार के प्रत्येक प्राणी को भले ही वह मनुष्य हो, पशु हो, या कीट पतंग सभी को अपने समान समझ, प्यार करता हो।”

“जी हां।”—गुजराती सेठ बोला।

“नहीं सेठ, तुम झूठ बोलते हो। तुम्हारे मन में सारी बुराइयां मौजूद हैं। तुम्हारे मन में धन के प्रति आसक्ति न होती और कुछ त्याग की भावना होती, तो जब मैंने अपने शिष्य को दो बार रुपये लाने के लिए भेजा था और वह दोनों बार खाली लौटकर आया था, तब तुम अपनी जेब में से भी निकाल कर दे सकते थे। तुम्हारी जेब में सौ-सौ रुपये के नोट रखे हुए हैं, पर तुमने सोचा कि सौ रुपये बाबा को मुफ्त में क्यों दे दूँ? मैंने भंडारे में प्रसाद ग्रहण करने के लिए कहा, तो तुमने प्रसाद ग्रहण करने से इनकार कर दिया, क्योंकि यहां सभी जातियों और धर्मों के लोग एक साथ बैठकर प्रसाद ग्रहण कर रहे थे। इसलिए तुम किसी भी दशा में ज्ञान प्राप्त करने के अधिकारी नहीं हो। जिस व्यक्ति के मन में लोभ नहीं होता है, जिसकी दृष्टि में समभाव होता है, उसे स्वयं ही ज्ञान प्राप्त हो जाता है। तुम ज्ञान के अधिकारी तभी हो सकते हो, जब तुममें यह बातें आ जाएंगी।”

गुजराती सेठ को लगा जैसे साईं बाबा ने उसको एकदम झिझोड़ कर रख दिया है।

गुजराती सेठ का चेहरा रंगहीन हो गया। साईं बाबा ने सेठ को वापस चले जाने के लिए कह दिया। वह चुपचाप वापस चला गया।

जेब में रुपया ही रुपया

शाम का समय था ।

साई बाबा अपनी धूनी लगाये बैठे थे । उनके आसपास शिष्यों का जमघट था । साई बाबा कुछ बातें ईश्वरीय ज्ञान की बतला रहे थे । तभी एक बूढ़ा-सा आदमी, रोता कलपता आया और हाथ जोड़कर साई बाबा के सामने रोने लगा धाड़ें मार-मार कर ।

“क्या हो गया, बाबा ?”—एक शिष्य ने पूछा ।

“मेरा जवान लड़का मर गया । मेरे पास कफन के लिए एक पैसा नहीं है ।”—वह आंसू बहा रहा था ।

साई बाबा ने उसकी ओर देखा ।

“कब मरा ?”

“आज दोपहर में । मैं रुपयों के लिए कई जगह गया, पर किसी ने मदद नहीं की है ।”

“जब तुम्हारे पास खुद रुपये ही रुपये हैं, तो कोई तुम्हारी मदद क्यों करेगा ।”—साई बाबा हंसने लगे ।

“साईबाबा”—बूढ़ा गिड़गिड़ा कर बोला, “मेरे पास तो फूटी कौड़ी भी नहीं है ।”

“क्यों झूठ बोलते हो !”—साई बाबा ने कहा,—अपनी जेब में हाथ डालो । रुपया ही रुपया है ।”

उस बूढ़े ने जेब में हाथ डाला । अचानक सौ सौ के ढेर सारे नोट निकल आये । हैरानी से वह देखता रह गया । आंखें फटी सी रह गयीं ।

“जाओ ? अपना काम करो ।”—साई बाबा ने कहा ।

वह बूढ़ा साई बाबा की जयजयकार करता चला गया । शिष्य मंडली हैरानी के साथ सारा तमाशा देखती रह गयी । उस बूढ़े की फटी जेब से रुपया ही रुपया निकलना आश्चर्य की बात थी । सबने इसे साई बाबा का ही एक चमत्कार माना और सब जयजयकार करने लगे । साई बाबा का यह चमत्कार अद्भुत था । दीन-दुखियों की सेवा वह बड़ी तत्परता के साथ किया करते थे ।

साई बाबा का मंडारा चल रहा था । अपने आसन पर बैठे सारा

इन्तजाम देख रहे थे। अचानक एक आदमी ने उनके सामने हाथ जोड़ते हुए कहा, 'बाबा, अब कुछ दिनों के लिए मुझे आपसे दूर रहना पड़ेगा। कुछ दिनों के लिए बाहर जा रहा हूँ। आशीर्वाद दीजिए मेरी यात्रा सफल हो।'

साईं बाबा ने मुस्कुराकर उसकी ओर देखा। बहुत प्यार भरे स्वर में बोले, 'तुम यात्रा पर चले गए तो यह गांव सूना हो जाएगा। गांव वाले भले ही तुम्हारी कमी महसूस न करें, लेकिन मुझे तुम्हारी कमी बहुत अखरेगी। खैर, कोई बात नहीं, जाओ। त्रिवेणी स्नान कर आओ। सुना है, जन्म-जन्मान्तर के पाप दूर हो जाते हैं।'

वह चकित रह गया। अभी तो उसकी पत्नी और घर वालों तक को ही यह बात मालूम थी कि वह प्रयागराज त्रिवेणी स्नान करने जा रहा है। फिर साईं बाबा को कैसे पता चला? उसने झुककर साईं बाबा के चरण पकड़ लिए और बोला—'आप तो अन्तर्यामी हैं बाबा। अन्तर्वासी हैं। मुझे आशीर्वाद दीजिए कि आपकी मुझ पर कृपा बनी रहे।'

शिष्य ने भाव-विह्वल होकर साईं बाबा के चरणों पर मस्तक रख दिया। सहसा उसे लगा जैसे साईं बाबा के चरणों से एक साथ गंगा, यमुना और सरस्वती प्रवाहित हो रही हों। आश्चर्य से बाबा के चरणों से प्रवाहित होती उन तीनों धाराओं को देखने लगा। उसे यह दृश्य देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ। उसे अपनी आंखों पर विश्वास नहीं हो रहा था। वह यह सब क्या देख रहा है? यकायक उसने अनुभव किया, मानो वह संगम स्नान कर रहा है। यह सब अनुभव कर वह चकित रह गया। दोनों हाथ जोड़कर बोला—'धन्य हो बाबा। आप बहुत कृपालु हैं। आपके चरणों में बैठे ही बैठे मैंने त्रिवेणी स्नान कर लिया। अब मुझे प्रयागराज जाने की जरूरत नहीं।'

'यदि आज्ञा हो तो घर आकर कपड़े बदल आऊँ।'

'क्यों? कपड़ों को क्या हुआ?'—साईं बाबा ने मुस्कुराकर पूछा।

मेरे सारे कपड़े भीग गये हैं बाबा।'

'तुमने त्रिवेणी स्नान यहीं बैठे-बैठे कर लिया?'—साईं बाबा मुस्कुरा रहे थे।

'हां बाबा।'—शिष्य ने प्रसन्न स्वर में कहा—'मैं तो बेकार ही

भटक रहा था। मुझे क्या मालूम कि संसार के सारे तीर्थ इन चरणों में ही विद्यमान हैं।”

“नहीं, संसार के सारे तीर्थ ही नहीं स्वयं भगवान भी तुम्हारी भावनाओं में विराजमान हैं। श्रद्धा, भक्ति और विश्वास की आवश्यकता है। माया मोह से परे हटकर जब कोई व्यक्ति तीनों गुणों को अपना लेता है, तब सहज ही वह भगवान के दर्शन पा लेता है। यही ज्ञान है।”

मस्जिद में एकत्र भक्तगण साईं बाबा की इस लीला को देखकर भाव-विभोर हो उठे। सबको इस पर बड़ा आश्चर्य भी लग रहा था। उस शिष्य के व्यवहार पर सब चकित थे। सचमुच उसके सारे कपड़े अनायास भींग गये थे। ऐसा लग रहा था, मानो उसने कहीं डुबकी लगा दी है।

वह तेजी से झुका और साईं बाबा के चरणों से लिपट गया। उसकी आंखों से आंसुओं की धारा फूट निकली थी।

वह श्रद्धा से गद्गद हो गया। उसने अपना जीवन धन्य माना। इसी प्रकार एक मुसलमान सिद्दीकी की बड़ी कामना थी कि किसी तरह पवित्र तीर्थ मक्का की यात्रा पर आए। उसकी आर्थिक स्थिति ऐसी न थी कि वह हज के लिए पैसा जुटा पाता। उसकी परिवारिक दशा बड़ी दयनीय थी, पर फिर भी वह बड़ी लालसा कर रहा था। वह प्रतिदिन द्वारिका मस्जिद में जाता। मस्जिद में झाड़ू लगाता। कुंए से पानी खींच-खींच कर मस्जिद के पौधों को सींचता था। साईंबाबा की धूनी के लिए भी जंगल से लकड़ियां उठाकर लाता था। केवल इस आशा से कि शायद कभी साईंबाबा की उस पर कृपा हो जाए। वह हज की मुराद पूरी कर दें।

सिद्दीकी मस्जिद के फर्श पर झाड़ू लगाने के बाद उसे पानी से धो रहा था कि अचानक साईंबाबा उधर आ गए। साफ-सुथरा फर्श देखा, तो हंस पड़े। बोले, “फर्श की सफाई करने में तुम बहुत ही उस्ताद हो। तुम्हें तो कावा में होना चाहिए था।”

“मेरा ऐसा नसीब कहां!”—सिद्दीकी ने साईंबाबा के चरण छूते हुए दुखी होकर कहा।

“चिन्ता न करो सिद्दीकी। तुम कावे जरूर जाओगे। वक्त का इन्तजार करो,”—साईंबाबा ने सिद्दीकी के सिर पर हाथ फेरते हुए कहा। फिर अपने आसन पर जा बैठे।

उस दिन से सिद्दीकी काबा का सपना देखने लगा। सोते-जागते दिखाई देता कि वह काबे में है।

सिद्दीकी की छोटी-सी दुकान थी। उसी दिन से दुकान पर ग्राहकों की भीड़ बढ़ने लगी। कारोबार में वृद्धि होना शुरू हो गयी और कुछ ही महीनों में उसके पास हज यात्रा के लायक रुपये हो गये।

वह चल पड़ा मक्का-मदीना शरीफ की ओर। कुछ दिनों के बाद सिद्दीकी हज कर लौट आया। अब वह हाजी सिद्दीकी कहलाने लगा। लोग उसे बड़े आदर सम्मान के साथ हाजी जी कहने लगे।

सिद्दीकी को हज से आने के बाद बड़ा अहंकार हो गया था। वह साईबाबा के पास भी नहीं गया। कई दिन बीत गए। हाजी सिद्दीकी द्वारिका मस्जिद की ओर गया ही नहीं।

तब एक दिन बाबा ने अपने शिष्यों से कहा,—हाजी दिखलायी पड़े उससे कह देना कि इस मस्जिद में कभी न आए।”

इस बात को सुनकर सब बहुत परेशान हो गये। साईबाबा ने आज तक किसी को भी मस्जिद में आने से नहीं रोका था। केवल हाजी सिद्दीकी के लिए ही ऐसी बात क्यों है ?

हाजी सिद्दीकी को साईबाबा की बात बता दी। साईबाबा की बात सुनते ही हाजी सिद्दीकी को फिक्र हो गयी। बात को सुन झटका लगा। हज से लौटने के बाद उसने साईबाबा के पास न जाकर बहुत बड़ी भूल की है। उन्हीं की कृपा से तो उसे हज यात्रा नसीब हुई। इस बात को उसने महसूस किया था। वह मन ही मन बहुत घबरा गया। उसके मन में पश्चाताप की अग्नि जलने लगी। साईबाबा का नाराज होना, उसके मन में घबराहट पैदा करने लगा। किसी अनिष्ट की आशंका से वह कांपने लगा। उसने मन ही मन निश्चय कर लिया कि वह साईबाबा से मिलने के लिये जरूर जायेगा। साईबाबा नाराज हैं। उनकी नाराजी दूर करना जरूरी है। सिद्दीकी ने हिम्मत की और वह द्वारिकामाई मस्जिद की ओर चल पड़ा।

हाजी सिद्दीकी ने डरते-डरते मस्जिद में कदम रखा। साईबाबा का क्रोध देखकर वह बेतरह घबरा गया। साईबाबा ने धूरकर उसे देखा। हाजी बेतरह कांप गया। फिर भी साहस बटोर कर वह डरते-डरते पास गया और साईबाबा के पांव छुए।

“सिद्दीकी तुम हज कर आएँ, लेकिन क्या तुम जानते हो कि हाजी का मतलब क्या है ?”—साईबाबा ने क्रोध-भरे स्वर में पूछा ।

“मुझे मालूम नहीं बाबा । मैं तो अनपढ़ जाहिल हूँ ।”—हाजी सिद्दीकी ने दोनों हाथ जोड़कर बड़ी विनम्रता से कहा ।

“हाजी का मतलब होता है, त्यागी । तुममें त्याग की भावना है ? हज के बाद तुम में बड़ी विनम्रता पैदा होनी थी । अहंकार पैदा हो गया है । तुम अपने आपको बहुत ऊँचा, महान समझने लग गये हो । हज करने के बाद भी जिस आदमी का मन स्वार्थ और अहंकार में डूबा रहता है, वह कभी हाजी नहीं हो सकता ।”

“मुझे क्षमा कर दो साईबाबा । मैं ऐसी गलती कभी नहीं करूँगा ।” हाजी ने गिड़गिड़ाते हुए कहा और वह बाबा के पैरों से लिपटकर फूट-फूटकर रोने लगा । उसके मन का सारा अहंकार खत्म हो गया था । वह मच ही मन पश्चाताप कर रहा था । उसकी आँखें डबडबा आयी थीं । साईबाबा के पास आकर उसने अपनी गलती महसूस कर ली थी ।

“सुनो हाजी, याद रखो कि दुनिया को बनाने वाला एक ही खुदा या परमात्मा है । इस दुनिया में रहने वाले सब इन्सान, पशु पक्षी उसी के बनाए हैं । पेड़ पौधे, पहाड़, नदियाँ उसी की कारीगरी का एक नमूना हैं । हम किसी को अपने से छोटा या नीचा समझते हैं, तो हम उस खुदा की ही बेइज्जती करते हैं ।”—साईबाबा ने हाजी से कहा, “अगर तुमने अपना खयाल नजरिया न बदला तो हज करना बेकार है । खुदा की इबादत करते हैं हम । इबादत का मतलब यही है कि हर मजहब और हर इन्सान को बराबर समझो !”

हाजी सिद्दीकी ने साईबाबा के चरणों पर सिर रख दिया और बोला, “साईबाबा । आगे से मैं ऐसा ही करूँगा । मुझे माफ करिये ।”

साईबाबा मुस्करा उठे ।

रहस्यमय खरोददार

शिरडी में साईं बाबा ने पहले-पहल वाइजा के घर से ही भिक्षा ली थी। वाइजा धर्मपरायण महिला थी। उनका एकमात्र पुत्र पहले दिन से ही साईंबाबा का भक्त बन गया था।

वाइजा ने निश्चय कर लिया था कि वह साईंबाबा के लिए खाना लेकर मस्जिद में चली जाया करेगी और अपने हाथों से खाना खिलाया करेगी। रोज दोपहर होते ही वह एक टोकरी में साईंबाबा के लिए खाना लेकर द्वारिकामस्जिद चल देती थी। कभी साईंबाबा अपने आसन पर मिल जाते और कभी-कभी साईंबाबा के इन्तजार में घंटों बिताने में पड़ते थे। वह न जाने कहां चले जाते थे ? इसके बाद भी वाइजा बराबर प्रतीक्षा करती रहती थी। यदाकदा बहुत देर होने पर ही वह उनकी खोज में निकल जाया करती थी।

कभी-कभी खोजने जंगल भी चली जाती थी। किसानों या चरवाहों से पता चलता कि अभी-अभी साईंबाबा को पेड़ के नीचे बैठे देखा गया था। वाइजा बाई वहां पहुंचती, लेकिन साईंबाबा दिखाई न देते। कड़कती धूप हो या मूसलाधार बारिश, हड्डियों को कंपा देने वाली ठंड में, वाइजा साईंबाबा की तलाश में भटकती और जब न मिलते तो निराश होकर फिर द्वारिका मस्जिद में लौट आती थी।

“वाइजा मां, मैं तुम्हें बहुत ही कष्ट देता हूँ।”—एक दिन साईंबाबा ने कहा, “जो बेटा अपनी मां को दुख दे, उससे अधिक अभाग्य और कोई नहीं हो सकता है। मैं अब तुम्हें बिल्कुल कष्ट नहीं दूंगा। जब भी तुम खाना लेकर आया करोगी, मैं तुम्हें मस्जिद में ही मिला करूंगा।”—साईंबाबा ने वाइजा से वायदा कर लिया और इसके बाद वह खाने के समय कभी भी मस्जिद से बाहर न जाते थे। वाइजा खाना लेकर मस्जिद में पहुंचती तो साईंबाबा जरूर मिलते।

“साईंबाबा—!” वाइजा ने कहा।

“ठहरो मां—!” साईंबाबा खाना खाते-खाते रुक गए—“मैं तुम्हें मां कहता ही नहीं। अपनी आत्मा मैं भी मानता हूँ।”

“तू मेरा बेटा है। तू मेरा ही बेटा है। तूने मां कहा है न।”—

वाइजा गद्-गद् होकर बोली ।

“तुम ठीक कहती हो मां । मुझ जैसे अनाथ, अनाश्रित अभागे को अपना बेटा बनाकर तुमने बहुत बड़े पुण्य का काम किया है मां ।”—साईबाबा ने कहा, “इन रोटियों के एक-एक टुकड़े में जो तुम्हारी ममता है, न जाने तुम्हारे इस ऋण से कभी मुक्त हो भी पाऊंगा या नहीं ।”

“यह तू क्या कह रहा है बेटा, मां और बेटे का कैसा ऋण ? यह तो कर्त्तव्य है । कर्त्तव्य में ऋण की बात कहां ?”—वाइजा ने कहा, “इस तरह की बातें न कहो ।”

“अच्छा-अच्छा नहीं कहूंगा । कभी नहीं कहूंगा ।”—साईबाबा ने जल्दी से कानों को हाथ लगा कहा—“तुम घर जाकर अपने बेटे को भेज देना ।”

“वह तो लकड़ी बेचने गया है । आ जाएगा तो भेज दूंगी ।”—वाइजा ने कहा और फिर सहसा चेहरे पर उदासी छा गयी है । कितनी मेहनत करनी पड़ती है उसे । अभी उम्र ही क्या है । क्या करूं उसका भाग्य ही ऐसा निकला ! पति की तीन साल की बीमारी के कारण सब-कुछ पंडित जी के पेट में समा गया । दवा से रक्ती भर भी फायदा नहीं हुआ । उनकी मौत के बाद छोटे-छोटे तीन-चार खेत बचे थे, सो वह सब भी उनके अन्तिम संस्कार भोज में स्वाहा हो गया और जंगल से लकड़ी काटकर शहर में बेचकर बेटा जो पैसे लेकर आता है, उसी से गुजारा करना पड़ता है ।

वाइजा की आप बीती भी सुनकर साईबाबा की आंखें गीली हो गयीं । वह कुछ देर मौन बैठे रहे और फिर बोले—“वाइजा भगवान भला करेंगे । चिन्ता मत करो । सुख और दुख तो जिन्दगी के अंग हैं । जब तक इंसान इस दुनिया में जिन्दा रहता है, उसे जीना पड़ता है ।

वाइजा की आंखें भर आई थीं । उसने अपनी टोकरी उठाई और हारे-थके से कदमों से वह अपने घर की ओर चल पड़ी ।

थोड़ी देर पहले खूब तेज धूप थी । अचानक आकाश की छाती पर काली-काली घटाएं घुमड़ने लगीं, बिजली कड़कने, गर्जन से जंगल का कोना-कोना गूँज उठा । तात्या थोड़ी-सी लकड़ियां काट पाया था । पसीने से भरे चेहरे पर चिन्ता झलक उठी । वह सोचने लगा, अब क्या होगा । इन लकड़ियों के तो कोई दो पैसे भी नहीं देगा और अगर भींग गई तो कोई मुफ्त में भी नहीं खरीदेगा । घर में एक मुट्ठी अनाज नहीं है, तो रोटी कैसे

बनेगी। तब रात को साईबाबा को मां क्या खिलायेंगी? चिन्ता में डूबे-डूबे उसने लकड़ियां समेटीं और गांव की ओर चल पड़ा। घटाएं जोर से गरजीं। फिर मूसलाधार बारिश शुरू हो गई। वह जल्दी-जल्दी पांव बढ़ाने लगा।

गांव से कुछ दूर पर ही था कि अचानक एक तेज आवाज सुनाई दी,
“ओ लकड़ी वाले।”

उसके बढ़ते हुए कंदम रुक गए।

सिर पर लकड़ियों का गट्ठर रखे ही इधर-उधर गर्दन घुमाकर देखा। लेकिन उसे कोई दिखाई न दिया।

उसने जोर से पुकारा—“कौन है?”

और तभी एक आदमी उसके सामने आ खड़ा हुआ।

“क्या बात है?”—तात्या ने पूछा।

“लकड़ियां बेचोगे?”—उस आदमी ने पूछा।

“हां, हां, क्यों नहीं बेचूंगा भाई। मैं तो बेचने के लिए ही जंगल से रोजाना लकड़िया काटकर लाता हूं।”—तात्या ने कहा।

“कितने पैसे दूं?” उस आदमी ने पूछा।

“जो भी मर्जी हो, दे दो। आज तो लकड़ियां बहुत थोड़ी हैं और फिर भीग भी गई हैं। जो दे दोगे ले लूंगा।”

“लो, यह रुपया ले लो।”

तात्या आश्चर्य से देखने लगा।

“कम है तो और ले लो।”—उस आदमी ने जेब से एक रुपया और निकाला और तात्या की ओर बढ़ाया।

“नहीं, नहीं कम नहीं हैं। ज्यादा है। लकड़ियां थोड़ी हैं।”—तात्या ने जल्दी से कहा।

“तो क्या हुआ। आज से तुम रोजाना मुझे यहां पर लकड़ियां दे जाया करो। मैं तुम्हें दोपहर के बाद यहीं मिला करूंगा। अगर आज ये लकड़ियां कुछ कम हैं, तो कल लकड़ियां ज्यादा ले आना। तब हमारा तुम्हारा हिसाब बराबर भी हो जाएगा।”—उस आदमी ने हंसते हुए कहा और रुपया भी जबर्दस्ती उसे थमा दिया—“लो इसे भी रखो। हिसाब बाद में कर लेंगे।”

तात्या ने जल्दी से रुपये अपने अंगरखे की जेब में रखे। तेजी वह

गांव की ओर चल दिया। घर पहुंचकर उसने मां के हाथ पर रुपये रखे तो मां आश्चर्य से उसका मुंह देखने लगीं।

“इतने रुपये कहां से ले आया तात्या ?”—मां ने शंकित स्वर से पूछा। तात्या ने अपनी मां को पूरी कहानी सुना दी।

“तूने ठीक किया बेटा। कल लकड़ियां दे आना। इंसान को अपनी ईमानदारी की कमाई पर ही सन्तोष करना चाहिए। बेईमानी का जरा भी विचार कभी मन में न आने देना।”—बाइजा ने कहा, “जा यह एक रुपया संभालकर संदूक में रख आ और इस रुपये का अनाज ले आ।”

अगले दिन जब तात्या जंगल में गया तो उस समय वर्षा थम गई थी। आकाश एकदम साफ था। तात्या ने जल्दी-जल्दी दोगुनी लकड़ियां काटीं और गट्ठर बनाने लगा। गट्ठर भारी था। पहले तो वह अकेला ही लकड़ियों का गट्ठर जमीन पर से उठाकर सिर पर रख लिया करता था, लेकिन आज दोगुनी लकड़ियां थीं। वह अकेला उस गट्ठर को उठा नहीं सकता था। एक टीले पर चढ़कर तब किसी राहगीर को खोजने लगा ताकि उसकी सहायता से उस भारी गट्ठर को उठाकर सिर पर रख सके।

यकायक सामने से एक राहगीर पास आता दीखा। जब वह आ गया, तो उसने कहा, “भाई ! मेरा बोझ उठवा दो।” उस राहगीर ने तात्या के सिर पर गट्ठर उठाकर रख दिया। तब तात्या तेजी से चल पड़ा।

“अरे तात्या भाई, क्या बात है ? आज तुमने देर कैसे कर दी। मैं कब से तुम्हारा इन्तजार कर रहा हूं।”—पिछले दिन वाले आदमी ने मुस्कुराते हुए कहा।

“आज लकड़ियां और दिन से दूनी है। रोजाना कम लकड़ियां होती थीं, इसलिए मैं अकेला ही आज बड़ा गट्ठर उठाकर सिर पर नहीं रख पा रहा था। काफी देर बाद जब एक आदमी आया तब मैं उसकी मदद से गट्ठर उठाकर सिर पर रख पाया तो भागता चला आया हूं।”

उस आदमी ने लकड़ी के गट्ठर पर अपनी नजर डाली और बोला, “आज तुम तो ढेर सारी लकड़ियां काट लाए।”

“तुम ठीक कह रहे हो। लेकिन कल तुम्हें बहुत कम लकड़ियां मिली थीं। न मिलने के बराबर ही समझो। तुमने पैसे पूरे दे दिए थे। इसलिए तुम्हारा हिसाब भी तो बराबर करना था। कल तुमने रुपये दे दिए थे। उन

के बदले सारी लकड़ियां ले जाओ। अब तक का हिसाब खतम।”—तात्या ने हंसते हुए कहा।

“कहां ठीक है तात्या भाई। जिस तरह तुम ईमानदारी को छोड़ना नहीं चाहते, उसी तरह मैंने भी वेईमानी करना नहीं सीखा।”—उस आदमी ने कहा और अपनी जेब से रुपया निकालकर तात्या की मुट्ठी में थमा दिये—“लो, इसे रखो। हमारा आज तक का हिसाब-किताब बराबर हो गया। आज की लकड़ियां और दिनों से कई गुनी हैं।”

तात्या ने बहुतेरा इंकार किया, पर उस आदमी ने समझा-बुझा कर किसी-न-किसी तरह तात्या को रुपया लेने पर विवश कर दिया। तात्या ने रुपया जेब में रखा। वह गांव की ओर चल दिया।

थोड़ी दूर ही गया होगा कि अचानक उसे कुल्हाड़ी की याद आ गयी। जल्दीबाजी में वह अपनी जीविका का साधन कुल्हाड़ी, जंगल में ही भूल आया था। अपनी गलती का खयाल करते ही वह तेजी से लौट पड़ा। अब उसे वह आदमी और लकड़ियों का गट्ठर कहीं दिखाई भी न दिया। दूर-दूर तक नजर डाली। उस आदमी का कहीं पता न था। तात्या की हैरानी की कोई सीमा न थी। दोपहर का समय था।

तात्या हैरानी से चारों ओर नजर दौड़ाता हुआ पीपल के पेड़ के नीचे पहुंचा। कुल्हाड़ी उसी तरह पीपल के पेड़ के तने से टिकी रखी थी।

तात्या हैरान था। उस आदमी का यकायक गायब हो जाना रहस्य की बात थी। आखिर वह इतनी जल्दी उतना बोझ उठाकर कहां चला गया? दूर-दूर तक उस आदमी का पता न था। आश्चर्य डूबा तात्या वापस आ गया। वह अपनी ओर से इस बात को कहे या न कहे, इस बात का निर्णय न कर पा रहा था।

अपनी कुल्हाड़ी लेकर वह वापस आ गया। फिर अपनी मां के साथ वह द्वारिका मस्जिद आया। वाइजा ने दोनों को खाना लगा दिया। साईबाबा और तात्या खाना खा रहे थे। वाइजा अपने दोनों बेटों को बड़े स्नेह से खाना खिला रही थी।

खाना खाते समय तात्या ने लकड़ी खरीदने वाले के बारे में साईबाबा से अपनी शंका प्रकट की। साईबाबा बोले—“तात्या इन्सान को वही मिलता है, जो ईश्वर चाहता है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि बिना परिश्रम

के धन की प्राप्ति नहीं होती है, फिर भी धन की प्राप्ति में मनुष्य के कर्मों का बहुत योगदान होता है। जैसे चोर-डाकू भी चोरी, डाका डालकर लाखों रुपये ले आते हैं, लेकिन वह गरीब के गरीब ही बने रहते हैं। न तो समय पर भरपेट रोटी मिलती है, न चैन की नींद। एक गरीब थोड़ी-सी मेहनत करके इतना पैसा पैदा कर लेता है कि बड़े आराम से उसका और उसके परिवार का गुजारा हो जाता है। वह इत्मीनान से रूखी-सूखी खाता है और कम से कम चैन की नींद तो सोता है और मुझ जैसे फकीर की झोली में भी रोटी का एक-आधा टुकड़ा डाल देता है। तुम्हें जो कुछ मिलता है, वह तुम्हारे भाग्य में भी लिखा है।”

“लेकिन वह आदमी और लकड़ियों का गट्ठर कहाँ गायब हो गए ?” तात्या ने आश्चर्य के साथ पूछा।

“भगवान के खेल अजब हैं, तात्या। हम इन्सान अपनी साधारण आंखों से देख नहीं सकते हैं।”—साईबाबा ने गम्भीर होकर कहा, “तुम्हें परेशान होने की कोई जरूरत नहीं। यह तो देने वाला जानता है कि वह किस ढंग से और किस जरिए रोजी-रोटी देता है। भगवान जब किसी को इस धरती पर भेजता है, तो उसे भेजने से पहले उन तमाम चीजों को भेज देता है, जिनकी उस जन्म लेने वाले को बहुत जरूरत होती है। वच्चे के मुंह में न तो दांत होते हैं और न उसके शरीर में इतनी शक्ति कि वह बड़े आदमी की तरह अन्न खाकर पल जाए। अतएव ऐसे भोजन की आवश्यकता होती है, जिसे वह सहज ही ग्रहण कर ले। इसीलिए पहले से ही उसकी मां की छातियों में दूध आ जाता है।”—साईबाबा ने तात्या को प्यार से समझाया।

तात्या साईबाबा के पैरों से लिपट गया। उसे साईबाबा की बात पर विश्वास न हो रहा था। वह कहना चाहता था कि साईबाबा यह सब आपकी ही करामात है। इस प्रकार का खेलकर आप ही उसकी रोटी का इंतजाम कर रहे हैं। उसने बहुतेरा चाहा कि वह इस बात को साईबाबा से कह दे, पर कह न पाया और केवल आंसू टपकाता रह गया।

वास्तव में तात्या के मन में साईबाबा के प्रति अपार श्रद्धा और अटूट विश्वास था। इस कारण साईबाबा का उस पर विशेष स्नेह भी था। फिर बाइजा पहली औरत थी, जिसने शिरडी आने पर सबसे पहले पहल

साईबाबा को खाना दिया था।

शायद इसी एहसान का बदला चुकाने साईबाबा इस प्रकार का नाटक रच रहे थे।

साईबाबा ने चरणों में पड़े तात्यां को उठाकर सीने से लगा लिया। दोनों की आंखें गीली थीं। आंखों से टपटप आंसू गिर रहे थे।

वाइजा बाई डबडवाई आंखों से सब देख रही थीं।

अचानक साईबाबा उठकर खड़े हो गए।

“चलो तात्या घर चलें—!” साईबाबा ने कहा और मस्जिद की सीढ़ियों की ओर चल दिए।

साईबाबा सीधे वाइजा की उस कोठरी में गए, जहां वह सोया करती थीं।

उस कोठरी में बहुत सुहाना पलंग पड़ा था।

“तात्या, एक फावड़ा ले आओ!”—साईबाबा ने कोठरी में चारों ओर नजर डालते हुए कहा।

तात्या फावड़ा ले आया। उसकी और वाइजा बाई की समझ में नहीं आ रहा था कि साईबाबा ने फावड़ा क्यों मांगा है?

“तात्या, इस पलंग के सिरहाने वाले दाईं ओर के पाए के नीचे खोदो!”—और साईबाबा ने पलंग सरकाकर एक ओर हटा दिया।

“यहां क्या है बाबा?”—तात्या ने पूछा।

“खोदो तो।”—साईबाबा ने कहा।

तात्या ने तीन-चार फावड़े ही मारे थे कि अचानक फावड़ा किसी धातु से टकरा गया।

“धीरे-धीरे मिट्टी हटाओ तात्या,”—साईबाबा ने गड़बड़े में झांकते हुए कहा। तात्या फावड़े से धीरे-धीरे मिट्टी हटाने लगा। कुछ देर बाद तांबे का एक कलश निकालकर साईबाबा के सामने रख दिया।

“इसे खोलो तात्या।”

तात्या ने कलशे पर रखा बर्तन हटाया। फिर साईबाबा के कहने पर उसे फर्श पर औंधा कर दिया। सोने की अर्शाफियां, मूल्यवान जेवर और हीरे निकलकर बिखर गए।

“यह तुम्हारे पूर्वजों की सम्पत्ति है। यह तुम्हारे भाग्य में ही मिलना

लिखा था, तुम्हारे पिता के भाग्य में यह सम्पत्ति नहीं थी। अगर होती तो पंडितजी इसे भी हड़प कर गये होते।”—साईबाबा ने कहा,—“इसे संभालकर रखो और होशियारी से खर्च करो।”

वाइजा और तात्या के आश्चर्य की सीमा न थी। वह उस अपार सम्पत्ति को देख रहे थे और सोच रहे थे कि यदि उन पर साईबाबा की कृपा न होती तो यह सम्पत्ति उन्हें कभी न मिलती। तात्या ने अपना सिर साईबाबा के चरणों में रख दिया और वह फूटफूट कर बच्चों की तरह रोने लगा।

साईबाबा बड़े स्नेह से उनके सिर पर हाथ फेरते रहे। वाइजा और तात्या के लिये यह सब सपने के समान लग रहा था। वाइजा ने सब बटोरकर फिर कलश में डाल दिया और बोली, “साईबाबा ! हम यह सब रखकर क्या करेंगे ! हमारे लिये सिर्फ सूखी रोटी बहुत है। आप ही इसे रखिए और मस्जिद के काम में या किसी नेक काम में लगा दीजिए।”

साईबाबा ने वाइजा का हाथ पकड़कर कहा, “नहीं ! यह सब तुम्हारे भाग्य में था। यह सारी सम्पत्ति केवल तुम्हारी है। इसे मेरे काम में लगाना गुनाह होगा। मेरी बात मानो। इसे अपने पास ही रखो।”

साईबाबा की बात तब वाइजा काट न सकी। उसने कलश रख लिया। तब साईबाबा चुपचाप उठकर अपने स्थान पर वापस आ गये। धूनी के पास आकर वह इस प्रकार लेट गये, मानो, कहीं कुछ भी नहीं हुआ है।

तात्या ने इस सम्पत्ति से टूटा-फूटा मकान गिराकर नया मकान बना लिया। फिर लगभग पच्चीस बीघा जमीन खरीद ली। बहुत ही ठाठ-बाट से रहने लगा।

गांव वाले हैरान कि यकायक तात्या के पास पैसा इतना कहां से आ गया ? गांव वाले इस बात को तो जानते थे कि साईबाबा तात्या की मां वाइजा को मां कहकर पुकारते हैं और तात्या को अपने भक्त और शिष्य की ही तरह नहीं, वरन् छोटे भाई के समान स्नेह करते हैं। अतएव सबको विश्वास हो गया कि साईबाबा की ही तात्या पर कृपा हुई है। फलस्वरूप इसी कृपा से लकड़हारा तात्या देखते-देखते ही सम्पन्न हो गया है। तात्या को सम्पन्न देखकर धन के बहुतेरे लालची साईबाबा के पास जाने लगे। रात-दिन सेवा में रहते कि शायद साईबाबा प्रसन्न हो जाएं और उन्हें भी

धनवान बना दें। साईबाबा धन की कामना से आने वाले लोगों की भावना से अपरिचित न थे। न तो उनके मस्जिद में उनके आने पर रोक लगाना चाहते थे और न उन्हें फटकारना ही चाहते थे। यहां आते-आते या तो इनके विचार ही बदल जायेंगे या फिर वह निराश होकर स्वयं ही आना बन्द कर देंगे। ऐसा उनका अपना विश्वास था। अतएव वह किसी को कुछ न कहते थे। चुपचाप अपनी धूनी के पास बैठे सबका तमाशा देखा करते थे। कुछ तो इतने वेशमं हो जाते थे कि साईबाबा से एकदम खुलकर रुपया मांगने लगते—“बाबा, हमें भी तात्या की तरह पैसे वाला बना दो। तब साईबाबा हंस पड़ते थे। बोलते, “मैं कहां से कुछ कर सकता हूं। मैं स्वयं कंगाल हूं। भला मेरे पास कहां से कुछ आया।”

साईबाबा का ऐसा खड़ा जवाब सुनकर सब चुप रह गये थे। फिर आगे कोई कुछ न कह पाता था।

रात तक द्वारिका मस्जिद में भीड़ लगी रहती थी।

एकान्तवास

“मैं कुछ दिनों के लिए शिरडी से बाहर जाना चाहता हूं।”—खाना खाते समय साईबाबा ने वाइजा बाई से कहा। सुनकर वाइजा ने चौंककर साईबाबा की ओर देखा।

साईबाबा ने बड़ी ही निराशा भरे और टूटे स्वर में कहा, “मस्जिद स्वार्थी और लालची लोगों का अड्डा बन गयी है। कुछ ऐसे भी लोग हैं, जो मेरे बारे में अनेक तरह की बातें झूठ-झूठ फैलाते रहते हैं। इसी कारण अब कुछ दिनों के लिये मैं बाहर रहकर योग-साधना करना चाहता हूं।”—साईबाबा ने अपनी मन की बात आखिर कह ही दी।

“यह सब तो ठीक है बेटा, लेकिन यह तो सोचो कि तुम्हारे यहां से चले जाने के बाद यहां क्या होगा। अपने पति की मृत्यु के बाद मैंने भगवान से कहा था कि मैं तभी तक जिन्दा रहना चाहती हूं, जब तक मेरा बेटा अपने

पैरों पर खड़ा न हो जाए और उसका घर न बस जाए। बेटा, आज उसके पास धन-दौलत, जमीन-जायदाद किसी भी चीज की कमी नहीं है। पत्नी भी अच्छी है। और अब मुझे हर समय ऐसा लगता है जैसे भगवान मुझे बुला रहे हैं।”

साईबाबा वाइजा की बात सुनकर मौन रह गये। वह कुछ न बोले।

वाइजा कहती गयी—“न जाने कब भगवान का बुलावा आ जाए। सोचती थी सुख से अपनी आखिरी सांस लेकर इस दुनिया से चली जाऊंगी। दोनों बेटे अर्थी उठा ले जायेंगे। लेकिन...!”—और वह सिसक पड़ी।

साईबाबा ने वाइजा को सांत्वना दी। कहा—“ऐसा न कहो वाइजा मां हम सब मिलकर तुम्हारी सेवा करेंगे। तुम्हें किसी भी प्रकार का कष्ट न होगा।”—फिर उन्होंने एकांतवास की इच्छा प्रकट की। वाइजा चुप ही रह गयी।

साईबाबा एकटक आकाश की ओर देखते हुए जाने किन विचारों में खो गये। वाइजा ने आंसू पोंछ लिये। वह भी अपना मन मारकर रह गयी। साईबाबा एकदम मौन ही बैठे रहे गये। आगे कुछ न बोले।

दूसरे दिन साईबाबा ने अपने शिष्यों को बुलाकर कहा—“कुछ दिनों के लिए मैं किसी एकान्त स्थान पर जाना चाहता हूँ। कब वापस आऊंगा? इसका कोई भरोसा नहीं। लेकिन मैं तुम लोगों को यह विश्वास दिलाता कि मैं जरूर वापस आऊंगा। मेरे जाने के बाद भले ही कुछ भी हो, यहां भजन-कीर्तन आदि कार्यक्रम बन्द न हों और न ही इस धूनी की आग ही बुझने पाए। इस सब की जिम्मेदारी तुम सब पर है।”

“आप जाना क्यों चाहते हैं? क्या हमसे कोई गलती हो गयी है?”—शिष्य एक साथ बोल उठे।

“नहीं, कोई बात नहीं। अगर तुम लोगों में कुछ खामी होती तो तुम मेरे निकट ही आ नहीं सकते थे।”—साईबाबा ने उन्हें समझाया—“लेकिन दूर रहकर भी मैं तुमसे दूर नहीं होऊंगा। मैं हमेशा तुम्हारे साथ ही रहूंगा। जब भी मुझे याद करोगे, मैं तुम्हारे पास पहुंच जाऊंगा।”

“अगर आप चले गये तो पंडितजी की बन आयेगी। यही कहेंगे कि आप उनसे डरकर, शिरडी छोड़कर हमेशा के लिए चले गए।”

“देखो जब तक कोई चीज हमारे पास होती है, हम उसका मूल्य कभी नहीं समझ पाते। हमें तो उस चीज की कीमत तब मालूम होती है, जब वह हमारे पास से दूर चली जाती है।”—साईबाबा ने बड़े शान्त स्वर में कहा, “और फिर मैं तो उन लोगों को अपना शत्रु समझता नहीं हूँ। वे मेरे बारे में क्या सोचते हैं? मेरे प्रति उनकी भावनाएं क्या हैं? इससे मुझे कोई सरोकार नहीं है। मेरा सरोकार तो कर्त्तव्य मात्र से है। मैं तुम लोगों की तरह सबके लिए भी हर पल कल्याण की ही कामना करता रहता हूँ।”

“बाबा, जल्दी लौट आना। आपके बिना तो शिरडी गांव अनाथ हो जाएगा।”—एक शिष्य ने रुंधे गले से कहा।

“सुनो संसार में इन्सान के सबसे बड़े दुश्मन मोह, माया और ममता लोभ हैं। हम समझदार होते हुए भी मूर्ख हैं, जो अपने इन दुश्मनों को अपना लहू पिलाकर पालते हैं। इन्सान जिस दिन अपने इन चारों शत्रुओं को बाहर फेंक देता है, उसी दिन इन सांसारिक बन्धनों से मुक्त हो जाता है और उसे ज्ञान प्राप्त हो जाता है। जब मनुष्य को ज्ञान प्राप्त हो जाता है तो उसके ईश्वर दर्शन की लालसा ही पैदा नहीं होती है। परम पिता भगवान उसे दर्शन देने के लिए स्वयं मजबूर हो जाते हैं। अब शाम हो चली है। भगवान का नाम कीर्तन करो।”

तब द्वारिका मस्जिद में भगवान का कीर्तन गूँज उठा। अगले दिन वाइजा दोपहर को साईबाबा के लिए खाना लेकर द्वारिका मस्जिद में पहुंची तो साईबाबा का स्थान खाली पड़ा था।

“बाबा—!” वाइजा ने ऊंची आवाज में पुकारा।

पर उसकी आवाज मस्जिद के गुम्बदों से टकराकर वापस आ गयी।

वाइजा को याद आया कि साईबाबा जाने के लिए कह रहे थे। उसका दिल धक्-धक् करने लगा। कहीं साईबाबा सचमुच तो नहीं चले गए? वह लपककर आसन के पास पहुंची। वह उस ईंट को खोज रही थी, जिसे साईबाबा हर समय अपने पास रखते थे। वह उसी पर सिर टिकाकर सोया करते थे। जहां कहीं जाते, ईंट उनके साथ होती थी। ईंट वहां नहीं थी। इसका मतलब है साईबाबा चले गए। वाइजा की आंखों में आंसू आ गए। घर आकर बीमार पड़ गयी, तब तात्या ने साईबाबा की धूनी के के आगे माथा टेका और एक चुटकी भभूति धूनी से लेकर साईबाबा के

सूने पड़े आसन की ओर देखते हुए बोला—“बाबा, मां तुम्हारे लिये बीमार हैं। लगता है आखिरी घड़ी आ गई है। वस तुम्हारे नाम की ही रट लगाती रहती हैं। उसकी आंखें तुम्हारा ही इन्तजार कर रही हैं। आज तुम्हें शिरडी से गए हुए पूरा दिन बीत रहा है। तुमने जाने से पहले मुझसे वायदा किया था कि मैं जब याद करूंगा तो तुम आ जाओगे। अब तो आ जाओ बाबा। अगर मां मर गई तो उसकी आत्मा तुम्हारे दर्शनों के लिए भटकती रहेगी।”

तभी मस्जिद की सीढ़ियों पर किसी के पैरों की आहट सुनकर तात्या चौंक पड़ा। उसने जल्दी-जल्दी अपनी आंखें पोंछीं और सीढ़ियों की ओर देखने लगा। सीढ़ियों की ओर देखते ही वह बेतरह चौंक पड़ा।

घर पर मां विस्तर पर पड़ी थीं। चलना-फिरना तो दूर बैठने-उठने में भी कठिनाई होती थी। बुखार उतरने का नाम ही नहीं ले रहा था। वह साईबाबा की धूनी से भभूति लेने आया था। उसे यह देखकर आश्चर्य हुआ कि सिर पर खाने की टोकरी रखे दीवार का सहारा लेकर धीरे-धीरे सीढ़ियां पार कर मस्जिद के द्वार तक मां पहुंच गई थीं। तात्या ने झपट कर उन्हें पकड़ लिया।

“मां, इस हालत में तुम यहां क्यों आ गयी आई?” तात्या ने सहारा देकर मां को धूनी की ओर ले जाते हुए कहा—“कितना तेज बुखार हो रहा है तुम्हें।”

“मुझे कुछ भी नहीं होने वाला है। जब तक मेरा साई बेटा न आ जाएगा, मैं मरूंगी नहीं।”—वाइजा ने धूनी के सामने बैठते हुए कहा।

वह कुछ देर तक लम्बी-लम्बी सांसें लेती रहीं। फिर साईबाबा के सूने आसन की ओर देखकर बोली—“लेकिन वह अभी तक आया क्यों नहीं? मेरा बेटा कभी झूठ नहीं बोला। वह आज जरूर आयेगा। इसलिए मैं उसके लिए खाना लेकर आई हूँ।”

“तुम्हें बहुत तेज बुखार है मां। चलो तुम्हें घर पहुंचा दूँ।”...तात्या ने मां के माथे पर हाथ रखकर कहा।

“नहीं बेटा, मैं भला कैसे घर जा सकती हूँ। मैं अपने साई बेटे के लिए खाना लेकर आयी हूँ। उसे खाना खिलाने के बाद ही जाऊंगी।”—वाइजा ने कहा। वाइजा चुपचाप एक ओर दीवार से सिर टिकाकर बैठ गयी।

उसका वुखार बढ़ता गया। देखते-देखते उसका शरीर बेहद गर्म हो गया। आंखें एकदम लाल हो गयीं। सांसें बेहद तेज चलने लगीं। साथ ही सारा शरीर थर-थर कांपने लगा। तात्या अपनी मां की हालत देखकर घबरा गया। उसने मां को सहारा दिया, पर तब तक वाइजा बाई बेहोश हो गई थीं। बेहोश को को होश में लाने के लिए तात्या पानी लेने कुएं पर चला गया। वह लौटकर धूनी के पास पहुंचा, तो उसकी आंखें आश्चर्य से फटी की फटी रह गई। बेहोश वाइजा बाई फर्श पर लेटी हुई थीं और साईंवाबा उसका सिर अपनी गोद में रखे सहला रहे थे।

“मां, आंखें खोलो। देखो मैं आ गया। मैं...साईंवाबा...आंखें खोलो तो—?”—साईं वाबा ने कहा।

तात्या उनके पैरों से लिपट-लिपट कर फूट-फूट कर रोने लगा। साईं-वाबा ने तात्या के सिर पर हाथ रखकर उसे आशीर्वाद दिया।

फिर कहा—“अरे, मर्द होकर औरतों की तरह रोते हो?”—और उसकी आंखों से बहते आसुओं को पोंछ दिया।

तात्या के आंखों के आंसू तो रुकने का नाम ही नहीं ले रहे थे।

“आप आ गए साईंवाबा, देखिए मां का क्या हाल हो रहा है।”—तात्या ने रोते हुए कहा।

“जानता हूं भाई। मेरे जाने का सबसे ज्यादा दुख मां को ही है।” साईंवाबा बोले,—“लेकिन अब तो मैं आ गया हूं। तुम्हारी मां चार दिन में ठीक हो जायेंगी।”

वाइजा ने आंखें खोल दीं और अपने ऊपर झुके साईंवाबा के चेहरे की ओर देखने लगीं।

“तू आ गया वेटा: तू आ गया रे?”—वाइजा ने खुशी से कांपते स्वर में कहा।

साईंवाबा ने कहा, “अब मां मैं तुम्हें छोड़कर कहीं नहीं जाऊंगा।”

“खाना खा ले।”

वाइजा के अनुरोध पर साईंवाबा ने वाइजा का लाया खाना खा लिया। भरपेट खाना खाने के बाद साईंवाबा ने वाइजा से कहा—“मां, तुम्हारा शरीर बहुत कमजोर हो गया है। तुम बीमार चल रही हो। सच बात तो यह है कि तुम्हारी बीमारी के कारण ही मैं अपनी साधना अधूरी

छोड़कर आया हूँ। तुम्हें आज एक वायदा करना पड़ेगा।”

“कैसा वायदा ?”—वायजा ने पूछा।

“आज से तुम खाना लेकर नहीं आओगी।”

“यह कैसे हो सकता है ? क्या तू भूखा रहेगा ?”

“नहीं। मैं खुद घर जाकर खाना खा आया हूँ।”

“हां यह ठीक है।”—वाइजा बोली, “मेरे लिए इससे बढ़कर और क्या खुशी की बात हो सकती है कि मेरी झोपड़ी पवित्र ही जायेगी।”

साईबाबा उठे और आसन पर जा बैठे। उन्होंने ईंट चौकी पर एक ओर रख दी और उस पर सिर टिका कर लेट गए।

वह कुछ देर चुपचाप लेटे रहे और फिर एकदम उठकर बैठ गए।

उन्होंने वाइजा की ओर देखा। उनकी आंखों में एक विचित्र-सा प्रकाश दिखाई दिया वाइजा बाई को।

साईबाबा ने अपनी आंखें आकाश पर टिकायीं और गम्भीर स्वर में बोले, “मां, आज तुमसे एक बात कहता हूँ। इस संसार में जो भी जन्मा है, उसे एक-न-एक दिन मौत की गोद में जाना ही पड़ता है। मृत्यु जीवन का सबसे बड़ा सत्य है और इस सत्य से डरना बड़ी मूर्खता है। जो होने वाला है, उससे डरना क्या ? वह तो होकर ही रहेगा। इस संसार में कोई अमर नहीं है। मृत्यु का क्रम रोक दिया जाए तो संसार टूट जाएगा। भगवान के कार्य में इन्सान को दखल देने का कोई अधिकार नहीं है। अगर हम वास्तव में भगवान को मानते हैं तो उसकी हर इच्छा को स्वीकार करना ही हमारा धर्म है।”

वायजा और तात्या साईबाबा की बात सुन रहे थे। उन्हें लग रहा था जैसे वह आवाज कहीं दूर, बहुत दूर से आ कर उसके कानों से टकरा रही।

“तात्या, मां को घर ले जाओ। मैं अब सोऊंगा।”—न जाने क्यों साईबाबा ने कहा और फिर ईंट पर सिर टिका कर लेट गए और फिर अपनी आंखें मूंद लीं।

तब तात्या ने मां को सहारा दिया और घर की ओर चल दिया। उन दोनों के घर पहुंचते-पहुंचते सारे गांव में यह समाचार फैल गया कि साईबाबा लौट आए हैं।

यह समाचार सुनकर सब लोग द्वारिकामाई मस्जिद की ओर तेजी से

चल दिए ।

“आज बाबा की शोभा-यात्रा निकाली जाए ।”

“हां, शाम को बाबा की शोभा-यात्रा निकाली जाए और फिर रात-भर नाम कीर्तन हो ।”

“और फिर कल दोपहर को सामूहिक मंडारा ।”

“बिल्कुल ठीक !”—शिष्य मण्डली द्वारिका मस्जिद में पहुंची तो साईबाबा सो रहे थे ।

“बाबा सो रहे हैं, सोने दो ।”—एक ने कहा, “चलो, हम लोग कार्यक्रम की व्यवस्था करें ।”

“हम लोग तात्या के घर ही क्यों न चलें ।”—एक ने सुझाव रखा, “वाइजा की तबीयत भी ठीक नहीं है और...!”

तभी तात्या वहां पहुंच गया । वह कुछ घबराया-सा दिखाई दे रहा था ।

“क्या बात है तात्या ? तुम इतने परेशान क्यों दिखाई दे रहे हो ?”

“मां की हालत ठीक नहीं दिखाई दे रही । उन्हें सांस लेने में बहुत तकलीफ हो रही है । मैं तो साईबाबा को बुलाने आया था, लेकिन वह तो सो रहे हैं ।”—तात्या बोला ।

“तो क्या हुआ जगाए लेते हैं । बाबा नाराज नहीं होंगे ।”—

“नहीं, बाबा को जगाना ठीक बात नहीं है । कह रहे थे कि न जाने कब से खाना नहीं खाया, न जाने कितने दिनों से सोया नहीं हूं । आज भरपेट भोजन करके सोए हूं । उन्हें जगाना ठीक नहीं है । तुम यहीं रहो । हम सब लोग घर जा रहे हैं । जब बाबा जाग जायें, इन्हें लेकर घर चले आना । शायद मां की अन्तिम घड़ी है । हम सब लोगों को इस समय उनके पास होना चाहिए ।”

“तुम ठीक कहते हो तात्या !”

और एक शिष्य को धूनी पर छोड़कर सब लोग तात्या के घर की ओर चल दिए ।

वाइजा आंखें मूंद बिस्तर पर लेटी थीं । अचानक उसके होंठ हिले “रहने दे साईं बेटा, तेरे हाथ दुख जायेंगे सिर दबाते-दबाते । तू पहले ही बहुत थका हुआ है ।”

“मां—!” तात्या ने मां के माथे पर हाथ रख कर पुकारा ।

मां ने धीरे से आंखें खोल दी ।

सबने देखा कि साईबाबा चले आ रहे हैं । सब उनको देखकर उठकर खड़े हो गये । आगे बढ़कर साईबाबा के चरण छुए । साईबाबा ने एक-एक को गले लगाकर प्यार किया और फिर तात्या की ओर देख कर बोले, ‘तात्या तुम अभी-अभी सोच रहे थे कि कोई मुझे जगाकर ले आया है । ऐसी बात नहीं है । मेरी ही आंख अचानक खुल गई । आंख खुलते ही मैं यहां आ गया ।’

तात्या ने मां के पैर अपनी गोद में रख लिए और धीरे-धीरे दबाने लगा—“साई बेटा, “कितनी ममता, कितना वात्सल्य कितना स्नेह भरा था इन शब्दों... आंखों में । एक पल के लिए साईबाबा द्रवित हो उठे ।

“मां—!” उनके होठों से निकला ।

“बेटा !” वाइजाबाई ने अपने कांपते हाथ साईबाबा की ओर बढ़ा दिये--“बेटा एक बार मां कहकर और पुकारो ।”

वाइजा के चेहरे का रंग बदलता जा रहा था । ऐसा लग रहा था, मानो वाइजा का अंतिम समय आ गया है । वाइजा की अवस्था भी हो गई थी । अपने जीवन के साठ साल वह पूरा कर चुकी थी । वाइजा भी इन बातों को समझ चुकी थी । उन्होंने वाइजा का अनुरोध मानकर बड़े प्यार से पुकारा और “यकायक मैं जा रही हूं साई बेटा ।” कहकर, उनकी सांस एकदम उखड़ गई । वह बड़ी कठिनाई से अटक-अटककर बहुत ही धीमी आवाज में बोल पा रही थीं ।

“हां, मां, अगर कोई इच्छा हो तो बताओ मां । मैं उसे भी पूरा करने की कोशिश करूंगा ।”

“नहीं, कोई अच्छा नहीं है—हां इतना जरूर है कि तात्या का ध्यान रखना । मैं इसे तुम्हारे हाथों में सौंप रही हूं ।”—वाइजा बाई ने कहा ।

“यह भी भला कोई कहने की बात है मां ! हर बड़ा भाई छोटे भाई का ध्यान रखता है । मैं अपने कर्त्तव्य का पालन करूंगा मां । तुम चिन्ता मत करो ।”—साईबाबा ने मां को आश्वासन दिया ।

वाइजा ने हाथ के इशारे से तात्या के सभी साथियों और तात्या की पत्नी को अपने पास बुलाया । सबके सिर पर बड़े प्यार से हाथ फेरकर

आशीर्वाद दिया और फिर यकायक आंखें मूंद लीं।

“मां चली गई” — साईबाबा ने मां के चेहरे की ओर देखते हुए कहा।
उनका सिर अपनी गोद में से उठाकर तकिए पर रखा और पलंग से उतर कर मां के पैरों की ओर जा खड़े हुए।

उनकी आंखों से आंसू छलछला रहे थे।

तात्या मां के पैरों पर सिर पटक-पटककर रोने लगा—“मां... मां...।”

वहां उपस्थित सभी लोगों की आंखों में आंसू आ गये। तात्या की पत्नी भी बिलख-बिलखकर रोने लगी।

साई बाबा ने तात्या का हाथ पकड़कर कहा—“तात्या, जो भी आया है, उसे एक न एक दिन जाना ही पड़ता है। यह भगवान का नियम है। जब इस नियम का पालन होता है, तो इस पर रोना क्या, आंसू बहाना व्यर्थ है। अपमान न करा करो और मां के अंतिम संस्कार की व्यवस्था करो।”

तात्या को सभी ने समझाया।

वाइजा के अंतिम संस्कार का प्रबन्ध किया गया और बड़ी धूमधाम से उसकी अर्थी निकली। साईबाबा ने भी साथ दिया। लगभग सारा गांव वाइजा की श्मशान यात्रा में शामिल हुआ। वाइजा का श्मशान में अंतिम संस्कार कर दिया गया।

फिर सब भारी मन से श्मशान से वापस आ गये।

घर-घर दीप जले

उस दिन दीपावली का त्यौहार था। साईबाबा जब शिरडी में थे, तो शाम को मिट्टी का एक छोटा-सा बर्तन लेकर किसी भी तेल बेचने वाले की दुकान पर चले जाते और रात को मस्जिद में चिराग जलाने के लिए थोड़ा-सा तेल मांग लाते थे। तेल बेचने वाले जितना भी तेल उन्हें दे देते, उतना पर्याप्त हो जाता था। दीवाली से एक दिन पहले तेल बेचने वाले

कुछ दुकानदार शाम को आरती के समय मन्दिर में पहुंचे। साईबाबा के मांगने पर वे तेल दे दिया करते थे, लेकिन साईबाबा के प्रति उनके विचार अच्छे नहीं थे। उन्हें साईबाबा के पास मस्जिद में जाकर बैठना अच्छा नहीं लगता था। वहां का वातावरण उनकी भावनाओं से मेल नहीं खाता था। शाम को दुकान बन्द करने के बाद वह मन्दिर में चले आते थे और पंडित के साथ गप्पें, दूसरों की निन्दा बुराई करते उनके साथ बैठकर, साईबाबा की निन्दा करने पर पंडितजी को आत्मसन्तोष प्राप्त होता था।

“देखो, भाई कल दीवाली है। शास्त्रों में लिखा है कि दीवाली के दिन जिस घर में अंधेरा होता है, वहां लक्ष्मी नहीं आती है। जो भी थोड़ा बहुत अंश उस घर में होता है, वह भी चला जाता है। कल जब साई बाबा तेल मांगने आएंगे तो तेल ही न दिया जाए। वैसे तो उसके पास सिद्धिविद्धि कुछ है नहीं और अगर होगी भी तो कल दीवाली के दिन मस्जिद में अंधेरा रहने के कारण लक्ष्मी उसका साथ छोड़कर चली जाएगी।”

“यह तो आपने मन की बात कह दी पण्डितजी। हम लोग भी कुछ ऐसा ही सोच रहे थे। हम कल साई बाबा को तेल नहीं देंगे।”—दुकानदार ने कहा।

“मैं तो सोच रहा हूं कि कल तेल ही बेचा न जाए। पूरा गांव उसका शिष्य बन गया है। शायद ही दो-चार के घर इतना तेल हो कि कल दीवाली के लिए जला सकें। बस हमारे चार-छैं घरों में ही दिए जलेंगे।”—दूसरे दुकानदार ने कहा।

“हां यही ठीक है।”—पंडित जी बोले—“सचमुच तुमने ठीक बात सोची है। मैंने तो यह सोचा भी न था।

“यह निश्चय हो गया कि कल तेल बिल्कुल न बेचा जाए। भले ही गांव वाले कोई कीमत क्यों न दें।”

ऐसा ही किया गया। शाम को साईबाबा तेल बेचने वाले की उस दुकान पर पहुंचे। उन्होंने कहा—“सेठ जी, आज दीवाली है। थोड़ा-सा तेल ज्यादा दे देना।”

“बाबा, आज तो तेल की एक भी धूंद नहीं हैं। कहां से दूं। सारा तेल कल ही बिक गया। सोचा था, सुबह जाकर शहर से ले आऊंगा, त्यौहार का दिन होने के कारण दुकान से उठने की फुर्सत ही नहीं मिली। आज तो

अपने घर में जलाने के लिए भी तेल नहीं है।"—दुकानदार ने बड़े ही दुख-भरे स्वर में कहा।

साईंवावा आगे बढ़ गए। तेल बेचने वाले हर दुकानदार ने यही उत्तर दिया। साईंवावा खाली हाथ लौट आए।

तभी एक कुम्हार जो उनका शिष्य था, उन्हें एक टोकरी दीये दे गया।

साईंवावा जब खाली हाथ मस्जिद पहुंचे तो शिष्यों की बड़ी निराशा हुई। दीवाली से कई दिन पहले से ही मस्जिद की मरम्मत पुताई बगैरह कर दी थी। टूटे-फूटे फर्श ठीक हो गये थे। मस्जिद के आस-पास का झाड़-झंखाड़ भी साफ कर केले के पेड़ और फूलों के पौधे लगा दिए थे। आशा थी कि आज मस्जिद में खूब धूमधाम से दीवाली मनायेंगे। रात-भर कीर्तन होगा। कई शिष्य अपने घर चले गए। घर से पैसे लिए और तेल खरीदने चल पड़े। वह जिस दुकानदार के पास तेल के लिए पहुंचे उसने एक ही उत्तर दिया आज तो हमारे घर में भी जलाने को एक बूंद नहीं है।

शिष्यों को निराशा के साथ-साथ खूब दुख भी हुआ। वे सब खाली हाथ मस्जिद लौट आए।

“वावा, गांव का हर दुकानदार यही कहता है कि आज तो उसके पास अपने घर में जलाने के लिए भी तेल की एक बूंद नहीं है।”

“तो इसमें इतना दुखी होने की क्या बात है। दुकानदार सच ही तो कह रहे हैं। वाकई उनकी दुकान और उनके घर में आज दीवाली की रात को एक दीया तक जलाने के लिए तेल की एक बूंद नहीं है। दीवाली मनाना तो उनके लिए बहुत दूर की बात है”—साईंवावा ने मुस्कुराते हुए कहा और फिर मस्जिद के अन्दर बने कुएं पर जा खड़े हुए। उन्होंने कुएं से एक घड़ा भरकर पानी ऊपर खींचा।

भक्त और शिष्य और चुपचाप खड़े देखते रहे। साईंवावा ने उस घड़े के पानी को दीयों में भर दिया।

फिर रुई की बत्तियां बनाकर दीयों में डाल दीं और फिर बत्तियां जला दीं। नारे दीये जगमग कर जल उठे। तब शिष्यों और भक्तों के आश्चर्य की सीमा न थी।

“इन दीयों को मस्जिद की मुंडरों गुम्बदों, मीनारों पर रख दो।

अब ये दीये कभी नहीं बुझेंगे। मैं नहीं रहूंगा तब भी ये इसी तरह जगमगाते रहेंगे”—साईबाबा ने शिष्यों से कहा और फिर एक पल रुककर बोले, “आज दीवाली का पर्व है, लेकिन गांव में किसी के घर में तेल नहीं है। जाओ हर घर में मेरे इस पानी को बांट आओ। लोगों से कहना कि दीये में बत्ती डालकर जला दें। दीए सुबह सूरज निकलने तक जगमगाते रहेंगे।”

“बोल साईबाबा की जय,”—शिष्यों ने साईबाबा की जय का नारा लगाया और घड़ा उठाकर गांव चले गए।

दीवाली की रात का अंधकार धीरे-धीरे घरती पर उतर आया। तब तेल बेचने वाले दुकानदारों और पंडित जी के घर को छोड़कर हर घर में साई बाबा के घड़े का पानी पहुंच गया था।

साईबाबा के शिरडी में आने के बाद से शिरडी और आसपास के मुसलमान हिन्दुओं के त्यौहार को बड़े हर्ष और उल्लास से मनाने लगे थे और हिन्दुओं ने भी ईद और शब्देरात मनानी शुरू कर दी थी। पूरा गांव दीपों की रोशनी से जगमगा उठा। उन दीपों की रोशनी अन्य दिन जलाए जाने वाले दीपों की रोशनी से बहुत ही तेज थी। गांव भर में केवल अंधेरा छाया हुआ था पंडित जी और तेल बेचने वाले दुकानदारों के घर तो उन्होंने तेल के सारे बर्तन देख डाले थे। कल शाम तक जो तेल से लबालब भरे हुए थे, इस समय खाली पड़े थे, जैसे उन्होंने तेल के कभी दर्शन भी न किए हों। यही दशा पंडितजी की भी थी। शाम को जब उनकी पत्नी दीये जलाने बैठी, तो उसने देखा तेल की हांडी एकदम खाली पड़ी है। उसने बाहर आकर पंडितजी को बताया।

“तुम चिन्ता क्यों करती हो? मैं अभी तेल लेकर आता हूं।”

पंडितजी हांडी लेकर तेल बेचने वाले दुकानदारों के पास पहुंचे। वे सब भी अपने माथे पर हाथ रखे इसी चिन्ता में बैठे थे कि बिना तेल के भला दीपावली कैसे मनायी जाएगी?

“पंडित जी, न जाने क्या हुआ। कल शाम को ही हम लोगों ने तेल खरीदा था। सुबह से एक बूंद तेल नहीं बेचा। लेकिन अब देखा तो तेल की एक बूंद भी नहीं है। बर्तन इस तरह खाली पड़े हैं, जैसे इनमें तेल था ही नहीं।” हर एक दुकानदार ने यही कहानी दुहरायी। आश्चर्य की बात थी कि तेल के भरे बर्तन बिल्कुल रीते हो गए थे। न घर में तेल की एक

बूंद और न दुकान में। पूरा गांव रोशनी से जगमगा रहा था। केवल तेल बेचने वाले दुकानदारों और पंडितजी के घर में अंधकार छाया हुआ था।

“यह सब साईं बाबा की ही करामात है। हम लोगों ने देने से इन्कार कर दिया था और उनसे कहा था कि आज तो हमारे घर और दुकान में एक बूंद भी तेल नहीं है—“एक दुकानदार ने कहा, “चलो बाबा के पास चलें और उनसे माफी मांगें।”

तेल बेचने वाले सभी दुकानदार मिलकर साईं बाबा के पास पहुंचे। उनसे माफी मांगने लगे।

“बाबा, हम आपकी महिमा को समझ नहीं पाए। हमें क्षमा करें। हम लोगों से बहुत बड़ा अपराध हुआ है। हम आपसे झूठ बोले थे।”—दुकानदारों ने साईं बाबा के चरणों में गिरते हुए कहा।

“इन्सान गलतियों का पुतला है। अपराधी तो वह है, जो अपने अपराध को छिपाता है। अपने अपराध को जो स्वीकार कर लेता है, वह अपराधी नहीं होता है। तुमने कोई अपराध नहीं किया है।”—साईं बाबा ने दुकानदारों को उठाते हुए कहा और फिर तात्या की ओर देखकर बोले, “तात्या, अभी उस घड़े में थोड़ा-सा पानी है। उसे इन लोगों के घर बांट आओ ? और सुनो पंडितजी के घर भी दे आना। उन बेचारों के घर भी तेल की एक बूंद नहीं है।”

तात्या जब तेल बेचने वाले दुकानदारों के घर घड़े का पानी बाँटकर वापस द्वारिका माई-मस्जिद में पहुंचा, तो सारा गांव चिरागों की रोशनी से जगमगा रहा था।

एक घर में अभी भी इसके बावजूद अंधेरा छाया हुआ था। वह घर था पंडित का, जिन्होंने साईं बाबा के घड़े का पानी लेने से इन्कार कर दिया था। दीवाली के दिन घर में अंधेरा रहा। एक दीपक जलाने के लिए भी तेल नहीं मिला। साईं बाबा के गांव में कदम रखते ही लक्ष्मी पहले ही उनसे रूठ गई थी और दीवाली के दिन घर में अंधेरा पाकर तो विल्कुल ही रूठ गई। कुछ दुकानदार जो मन्दिर में सुबह शाम आ जाया करते थे, दीवाली की रात से उन्होंने भी मन्दिर में आना छोड़ दिया। लोगों ने पूर्णिमा और एकादशी के दिन भगवान सत्यनारायण की कथा सुनना भी बंद कर दिया। साईं बाबा की भभूत के कारण उनका औषधालय तो पहले

ही बंद हो चुका था। मजदूरों ने खेतों में काम करने से इन्कार कर दिया तो पंडितजी का क्रोध भी अपनी चरम सीमा पार कर गया।

“इस ढोंगी साईं को गाँव से भगाए बिना अब काम नहीं चलेगा।”

—पंडित जी ने मन-ही-मन निश्चय किया।

वह अपनी बैठक के सामने वाले चबूतरे पर बैठे यही सब सोच रहे थे, तभी एक पुलिस कान्स्टेबल आता दिखाई दिया। पंडितजी ने उसे दूर से ही पहिचान लिया। उसका नाम था गणेश। वह प्रायः पंडितजी के पास आता रहता था।

थाने में जितने भी पुलिस कर्मचारी थे, गणेश उन सब में सबसे ज्यादा चालबाज बदमाश था। लोगों को किसी भी जटिल केस में फंसा देना उसके लिए तो बाएं हाथ का खेल था। रिश्तत लेने में उसकी कोई सीमा न थी। जो भी थानेदार आता, वह लच्छेदार बातों, हथकंडों से अपनी ओर मिला लेता था। फिर सीधे-सादे गाँववासियों को तंग करना शुरू कर देता था। पंडितजी उसकी भरपूर सहायता करते थे।

उसे देखकर पंडितजी के मन को थोड़ी-सी शांति मिली।

“आओ गणेश!”—पंडितजी ने उसका स्वागत किया। हाथ पकड़कर अपने पास चौकी पर बैठाया।

“कैसे हाल-चाल हैं पंडितजी!”—गणेश ने पूछा।

“बहुत बुरा हाल है!”—पंडित दुख-भरे स्वर में बोले, “कुछ न पूछो। जब से साईं बाबा गाँव में आया है, मेरा तो सारा धन्धा ही चौपट हो गया है। उनकी भभूत ने मेरा औषधालय बंद कर दिया। अब तो कोई भूले भटके भी औषधालय नहीं आता। लोगों ने मन्दिर आना छोड़ रखा है। दूकानदार सुबह शाम मन्दिर में आ जाते थे। उनसे थोड़ी आमदनी भी हो जाती थी, पर दीवाली से वह भी बंद हो गई।”

“वो कैसे?”

पंडित जी ने दीवाली की घटना सुनाने के बाद कहा—“गणेश भाई, अगर यहीं तक होता तो चिन्ता की कोई बात न थी। मेरे पास खेत हैं। उन खेतों से इतनी आमदनी हो जाती थी कि बड़े मजे से दिन गुजर जाते हैं। औषधालय की आमदनी बंद हो जाने की कोई परवाह थी। लेकिन खेतों में काम करने वाले मजदूरों ने भी खेतों में काम करने से इन्कार

कर दिया है। फसल का समय चला जा रहा है। खेतों में समय पर फसल न बोयी तो साल-भर तक खाऊंगा क्या? मैं तो इस साईं से बहुत ही दुखी हूँ।”

“जब से साईं इस गांव में आया है आमदनी तो हम लोगों की भी कम हो गई है। न तो गांव में लड़ाई-झगड़ा होता है, न चोरी डकैती। साईं के आने से पहले गांव से खूब आमदनी होती थी। फूटी कौड़ी हाथ नहीं लग रही है।”—गणेश ने अपना दुःख कहा।

“कोई ऐसा उपाय सोचो जिससे यह ढोंगी गांव छोड़कर भाग जाए।” पंडितजी ने कहा।

गणेश सोच में पड़ गया।

पंडितजी नाश्ता लेने अन्दर चले गए।

नाश्ता करने के बाद एक लम्बी डकार लेते हुए गणेश ने बड़ी शान से कहा, “पंडित जी, पुलिस के जितने भी बड़े-बड़े अफसर हैं, इस साईं के चले बन गए हैं। अगर उनसे इसके खिलाफ कोई शिकायत की जाएगी तो वे सुनेंगे ही नहीं। दो-चार बार साईं के खिलाफ कुछ कहने की कोशिश की, लेकिन अपना मुंह भी नहीं खोल पाया था कि अफसरों ने फटकारते हुए कहा, “खबरदार जो साईं के विरुद्ध कुछ कहा। वह इन्सान नहीं भगवान का अवतार है।” उनकी डांट खाकर चुप रह जाना पड़ा। इसलिए बड़ों से तो अब कोई उम्मीद करना ही बेकार है। अगर साईं को गांव से कोई निकाल सकता है तो सिर्फ गांव वाले ही।

“भला गांव वाले उसे गांव से क्यों निकालने लगे?”—पंडित बोले।

“देखो पंडितजी, गांव के आदमी बहुत ही सीधे होते हैं। उन्हें झूठ और धोखे से बहुत घृणा होती है। उनकी चाल-चलन एकदम निष्कलंक होती है। वह उस आदमी को कभी भी बर्दाश्त नहीं कर पाते, जिसकी चाल-चलन अच्छी नहीं होती और उस आदमी की तो वे किसी भी कीमत पर बर्दाश्त नहीं कर पाते, जिसे वे साधू, महात्मा, सिद्ध या अपना गुरु मानते हों। साईं कुंवारा है और पंडितजी आप तो जानते ही हैं कि इस दुनिया में ऐसा कोई भी आदमी ऐसी नहीं है, जो औरत से बच सके। अगर किसी तरह किसी औरत के साथ साईं बाबा का संबंध बनाया जा सके, कोई औरत अपने जाल में फंसा ले तो साईं का पत्ता साफ।”

“साईं का तो किसी औरत के साथ सम्बन्ध नहीं। वह तो हर स्त्री को मां कहता है। उसकी चाल-चलन के बारे में तो आज तक कोई ऐसी वैसे बात सुनी ही नहीं गई है।”—पंडितजी ने कहा।

“नहीं है, तो क्या हुआ। इस दुनिया में कौन-सा ऐसा काम है, जिसे न किया जा सके।”—गणेश ने एक आंख दबाते हुए मुस्कुराकर कहा—“बस जरूरत हैं पैसों की। अगर मेरे पास पांच सौ रुपये हों तो मैं इस साईं को गांव से कल भगा दूँ।”

“तुम रुपयों की चिन्ता मत करो। यह बताओ कि साईं को भगाओगे किस तरह?”—पंडित ने अधीर होकर पूछा।

गणेश ने पंडितजी की ओर मुस्कुराकर देखते हुए कहा—“अपना कान इधर लाइए।”

पंडितजी अपना कान गणेश के मुंह के पास ले गये। गणेश धीरे-धीरे बुदबुदाने लगा। वह उन्हें अपनी योजना समझाता रहा। पंडितजी के चेहरे से ऐसा लग रहा था कि वह योजना से सहमत हैं।

वह उठकर भीतर चले गए और जब वापस लौटे, तो उनके हाथ में कपड़े की एक थैली थी, जो रुपयों से भरी हुई थी।

“लो गणेश!”—पंडित जी ने रुपयों की थैली गणेश की ओर बढ़ाते हुए कहा, “पूरे पांच सौ हैं।”

गणेश ने थैली अपने झोले में रख ली और उठकर बोला—“अच्छा पंडितजी, अब आज्ञा दीजिए। चार-पांच दिन तो लग ही जाएंगे। तब आपसे भेंट हो सकेगी।”

“ठीक है।”—पंडितजी ने कहा, “तुम रुपयों की बिल्कुल चिन्ता न करना। इस साईं को गांव से निकलवाने के लिए तो मैं अपना सब कुछ दांव पर लगा सकता हूँ।”

गणेश मुस्कराया और फिर चल दिया।

दोपहर का समय था। साईं बाबा खाना खाने के बाद ईंट पर सिर टिकाए लेटे थे और अपने शिष्यों से बातें कर रहे थे। उनके शिष्य बैठे हुए थे। अचानक सारंगी के सुरों के साथ तबले पर पड़ी थाप मस्जिद के गुम्बदों और मीनारों से टकराकर गूँज उठी।

सब लोग चौंक पड़े। दूसरे ही पल मस्जिद के दालान के फर्श पर सारंगी के सुरों और तबले की थापों के साथ घुंघरूओं की रनझुन गूँज उठी। सभी शिष्य एक रूपसी नवयौवना की ओर देखने लगे जिसके सुन्दर और मोहक वदन पर रेशमी घाघरा और चोली थी। जब वह नाचते हुए तेजी से चक्कर काटती थी, तो उसका रेशमी घाघरा गोरी-गोरी जांघों के ऊपर तक उठ जाता था।

चोली बहुत तंग और छोटी इतनी कि उरोजों की गोलाइयां स्पष्ट रूप से दिखलायी पड़ रही थीं। कजरारी आंखों से वासना छलक रही थी। वह अपने में मगन हो सब-कुछ खोकर नाच रही थी।

सभी शिष्य हैरानी से देखने लगे। उन सबको बहुत आश्चर्य हो रहा था कि वह कहां से आ गयी? ऐसी और इस प्रकार की सुन्दरी तो इस गांव में नहीं है। अवश्य ही किसी आस-पास के गांव से आयी है। उसका नृत्य करना भी बड़ा आश्चर्यजनक था।

नर्तकी नाचती रही। घुंघरूओं की ताल, सारंगी के सुर और तबले की थाप गूँज रही थी। जब नर्तकी नाचते-नाचते थक गयी तो साईं बाबा धीरे से उठे। उसकी ओर बढ़ने लगे।

नर्तकी नाच रही थी। साईं बाबा एक पल देखते रहे और फिर उन्होंने एकदम झुककर नर्तकी के थिरकते पांव पकड़ लिए।

“बस करो मां, बस करो मां, तुम्हारे ये कोमल पांव इतनी देर तक नाचते-नाचते थक गए होंगे।”—साईं बाबा ने कहा और नर्तकी के पांव दबाने लगे।

थिरकते पांव रुक गए। घुंघरू थम गए।

तभी एक दर्द भरी चीख गूँज गयी—“बचाओ, बचाओ सांप सांप... नाग...ना...ग।”

सब ने चौंककर मस्जिद के उस खम्भे की ओर देखा, जिधर से आवाज आ रही थी ।

खम्भे के पीछे पंडित और गणेश खड़े थे । दोनों के सामने काला नाग फन फैलाए फूटकार रहा था । उसने पंडितजी की कलाई में डंस लिया था । वह छटपटाते चीख रहे थे ।

“अरे नाग कहां से आया ?” — कई लोग चौंक गये ।

साईं बाबा मुस्कराते हुए उस भयंकर नाग की ओर बढ़ने लगे ।

देखते-देखते नाग मोटी रस्सी के रूप में बदल गया । लोगों के आश्चर्य की सीमा न रही ।

थर-थर कांपते हुए गणेश ने एक नजर उस रस्सी पर डाली और साईं बाबा के पैर पकड़ लिए ।

“मुझे क्षमा करो बाबा, मैं पापी हूं । सारा कुसूर मेरा ही है । —” वह रोने लगा ।

नर्तकी का सारा बदन भय से कांप रहा था ।

“साईं बाबा—मुझे माफ—कर दो—मैं हूं—मैं—तुम्हें अपना—बैरी—समझता रहा था । मेरे सारे बदन में जहर फैल चुका है मुझे क्षमा कर दो...साईं बाबा ।”

साईं बाबा ने अपना हाथ आकाश की ओर उठाकर कहा, “फौरन उतर जा....।”

फिर आगे बढ़कर पंडितजी का सिर अपनी गोद में रख लिया ।

“तुम्हें कुछ नहीं होगा पंडितजी...तुम्हें कुछ नहीं होगा...यह तुम्हारी आत्मा का सारा पाप खत्म कर देगा ।”

पंडित जी लगभग बेहोश हो गये थे । उनके मुंह में झाग निकल रहा था । सारा शरीर लगभग नीला पड़ गया था । बड़बड़ाना भी शुरू हो गया था । सबको पंडित जी की हालत देखकर इस बात का पूरा विश्वास हो गया कि नाग का जहर फैल गया है और अब पंडित जी का बचना मुश्किल है । साईं बाबा ने पंडित जी का सिर अपनी गोद में ले रखा था और बार-बार वह बड़बड़ा रहे थे—“चला जा चला जा ।”

सब लोग आश्चर्य में यह दृश्य देख रहे थे ।

कुछ ही देर बाद पंडित जी के शरीर का रंग पूर्ववत् हो गया । उनकी

बंद आंखें खुलने लगीं। शरीर में मानो चेतना का संचार शुरू हो गया। पंडित जी का यह रूप परिवर्तन देख सबको राहत मिली। विश्वास हो गया कि पंडितजी के प्राण बच गये। नाग का जहर समाप्त हो गया।

साईबाबा का चमत्कार सभी आश्चर्य से देख रहे थे।

थोड़ा समय और बीत गया।

पंडितजी उठकर बैठ गए।

तभी द्वारिका मस्जिद की सभी गुम्बदों और मीनारों साईबाबा की जय जयकार से गूंज पड़ी।

कुत्ते की पूंछ

पंडित बहुत उदास बैठा था। उसके औषधालय में एक भी मरीज न आ रहा था। साईबाबा के चमत्कार का प्रभाव उसके साथ भी गांव वालों ने देख लिया था। इस कारण उनकी प्रतिष्ठा और घट गयी थी।

पंडित खामोशी से अपने भविष्य पर चिंतन कर रहा था।

उसे इस बात का पता ही न चला कि कब एक आदमी उसके पास आकर खड़ा हो गया है। जब पंडित ने कुछ न ध्यान दिया, तो उसने स्वयं आवाज दी।

“पंडितजी।”

पंडित चौंक गया।

“क्या बात है? किस सोच में पड़े हो?”

पंडित ने देखा। देखता ही रह गया। उसने सामने लछमन साठे खड़ा था।

“लछमन...तुम।...”

“हां, पंडिजी।”

“कब आये?”—पूछा पंडित ने।

“बस, चला ही आ रहा हूं।”—लछमन पंडित के पास बैठ गया।

पंडित अभी भी एकटक देख रहा था। कोई दो साल बाद लछमन को देख रहा था। लछमन शिरडी का मशहूर बदमाश था। राघोबा को लूट, मार के कारण उमे सजा हो गयी थी। वह जेल से ही सीधा आ रहा था। लछमन का कोई न था। वह एकदम अकेला ही था। आवारागर्दी, गुंडागिरी, छेड़छाड़, चोरी, मारपीट करना उसका एकमात्र काम था।

लछमन बोला—“क्या बात है ? बड़े, खामोश और उदास से बैठे हैं आज आप।”

“हां।”—पंडित ने एक लम्बी सांस छोड़कर कहा।

“क्या बात हो गयी ?”

“न पूछ लछमन ! इस गांव में एक चमत्कारी बाबा आया है। उसने मेरा सारा धंधा चौपट कर दिया है। अब तो भूखों मरने की नौबत आ गयी है।”

लछमन आश्चर्य से बोला—“कौन है वह ?”

“लोग उसको साईबाबा कहते हैं।”

“अच्छा कहां का है।”

“क्या पता ?”—पंडित ने कहा, “तुम अपना हाल कहो।”

“बस ! जेल से सीधा चला आ रहा हूं।”—लछमन मुस्कराया,

“अगर तुम कहो तो बाबा को अपना चमत्कार दिखा दूं।”—और वह हंसने लगा।

पंडित होंठ काटने लगा।

वैसे इससे पहले कई बार लछमन की सहायता से अपनी स्वार्थसिद्धि के लिये गांव के कई लोगों को पानी पिला चुका था। वह सोचने लगा, सांप की उस चमत्कारी घटना के कारण, जो स्वयं उसके साथ घटित हुई थी, वह मुला न पा रहा था।

“बोलो पंडित ! क्या विचार है ?”

“कोशिश कर लो।”

“कोशिश क्यों ? मैं करके दिखला दूंगा। एक ही दिन में गांव छोड़कर भाग जायेगा।”—लछमन हंसने लगा।

“जैसी तुम्हारी इच्छा।”

“भला मैं तुम्हारे लिये इतना छोटा-सा भी काम नहीं कर सकता

हूँ।"—लछमन ने कहा, "आपके तो बहुत अहसान मुझ पर हैं।"

पंडित चुप ही रहा आया।

"किस तरफ रहता है, वह चमत्कारी बाबा?"

"द्वारिका मस्जिद में।"

"द्वारिका मस्जिद! क्या वह मुसलमान है?"

"क्या पता, कभी यह मुसलमान बन जाता है और कभी हिन्दू! क्या है वह! कुछ पता नहीं।"

"ठीक है! देख लूंगा।"

"जरा सावधानी से।"—पंडित बोला, "सुना है, बड़ा चमत्कारी है वह।"

"अच्छा! अच्छा!"—लछमन बोला, "ख्याल रखूंगा।"

"ठीक है सुबह-शाम मेरे यहां खाना खा जाया करो! रात में बरा-मदा सोने के लिये है ही।"

लछमन चला गया।

पंडित चिंता में पड़ गया। कहीं फिर उसने घातक कदम तो नहीं उठा लिया। अगर चमत्कार हो गया तो इस बार साईबाबा उसे माफ नहीं करेगा। वह हैरान था कि साई आखिर है क्या?"

लछमन पंडित के पास से उठकर सीधे द्वारिका मस्जिद गया। टूटी-फूटी द्वारिका मसजिद का कायाकल्प देखकर वह आश्चर्य में पड़ गया। मसजिद में चहल-पहल थी। साईबाबा की धूनी लगी थी। वह उनकी धूनी के पास जाकर बैठ गया।

साईबाबा के पास उनके शिष्य भी बैठे थे। लछमन ने देखा, साईबाबा खास नहीं है। दुबला-पतला, इकहरा गोरा बदन है। एक ही हाथ में जमीन सूंघ ले। हां, चेहरे पर एक अजब-सा आकर्षण तेज था।

साईबाबा ने लछमन की ओर नजर उठाकर भी न देखा। सर्वथा अजनबी होने के बावजूद पूछताछ तक न की।

शिष्यगण चले गये।

लछमन अकेला बैठा रह गया।

उसकी उपस्थिति की सर्वथा उपेक्षा कर साईबाबा सिरहाने ईंट रख-कर लेट गए। आंखें मुंद गयीं। मौका अच्छा जानकर लछमन कुछ धमकी

भरे शब्द कहने का विचार कर रहा था ।

इससे पहले कि वह कुछ बोल सके, साईबाबा स्वयं कह उठे ।

“तू मुझे मारने आया है ?”

साईबाबा की यह बात सुनते ही लछमन देतरह चौंक गया । वह घबरा गया ।

“मार, दे मार ।”

साईबाबा का चेहरा तमतमा गया ।

लछमन को काटो तो खून न था । वह काठ के समान खड़ा रह गया । साईबाबा का रौद्र रूप देखकर वह घबरा गया । उसे पसीना आ गया ।

“कोई हथियार लाया है या खाली हाथ आया है ?” साईबाबा बोले ।

वह घबरा गया ।

“बोल ।”

लछमन पसीने-पसीने हो गया । वह घबराकर साईबाबा के पैरों पर गिर गया । लोटने लगा ।

“क्षमा कर दो बाबा । क्षमा कर दो ।”—वह गिड़गिड़ाने लगा ।

“जा । माफ किया । नेक आदमी बन ।”

लछमन चुपचाप सिर झुकाए चला गया । साईबाबा तब खिलखिलाकर हंस पड़े । एकदम वच्चों के समान थी, उनकी हंसी । अनुमान भी न किया जा सकता था कि कुछ समय पूर्व उनका रूप बेहद रौद्र हो गया था ।

साईबाबा के पास उनका एक सेवक आया, तो वह वड़बड़ा रहे थे ।

“कुत्ते की पूंछ भला सीधी हो सकती है !”

श्लिष्य बात समझ न पाया ।

जब लछमन पंडित के पास गया और हाथ जोड़कर उसने सारा किस्सा बतलाया, तो पंडित का मन ग्लानि, पश्चात्ताप से भर गया । वह साईबाबा का लोहा मान गया । उसने साईबाबा का विरोध करना बंद कर दिया और उनका परम भक्त हो गया ।

लछमन के साथ-साथ पुलिस वाला गोपाल भी उनका परम शिष्य बन गया ।

संकटहरण

पंडित जी ने साईबाबा की बुराई निंदा करना एकदम छोड़ दिया। वह प्रत्यक्ष उनका चमत्कार देख चुके थे। उनको इस बात का पूरा विश्वास हो गया कि अवश्य ही साईबाबा महात्मा, पहुंची हुई आत्मा, कोई दैवी शक्ति हैं। वह भी उनके भक्त बन गये। समय बीतता गया। साईबाबा द्वारिका मसजिद में अपना डेरा डाले पड़े थे।

एक दिन सांझ की वेला थी।

रावजी के दरवाजे पर धूम-धाम थी। सारा घर तोरण और वन्दन-वारों से सजा था। बारात का स्वागत करने के लिये गांव के सभी प्रमुख लोग उपस्थित थे।

रावजी की बेटा का विवाह था। बारात आने ही वाली थी।

कुछ देर बाद दूर से ढोल बाजों की आवाज सुनाई देने लगी।

“बारात आ गई।”—भीड़ में शोर मचा।

गांव के बच्चे बारात को देखने सबसे पहले भागे। थोड़ी देर के बाद बारात रावजी के दरवाजे पर आ गई। रावजी ने सम्बन्धियों और सहयोगियों के साथ बारात का स्वागत किया। बारातियों को पान, फूल, इत्र मालाएं यथाशक्ति भेंट किये गये। उन्हें जनवांसे पर ठहरा दिया। रावजी ने बारातियों का स्वागत-सत्कार किया। भोजन कराया। सभी ने रावजी के स्वागत और भोजन की प्रशंसा की। फिर भावरें पड़ने का मूहूर्त आ गया।

“बैर को भावरों के लिए भेजिए”—वर के पिता से निवेदन किया।

“वर भेज दूं? नहीं, पहले दहेज दिखाओ। भावरें तो दहेज के बाद ही पड़ेंगी।”—वर के पिता ने कहा।

रावजी बोले—“तो फिर चलिए। पहले दहेज देख लीजिए।”—नाई के साथ आए रावजी के सम्बन्धियों ने वर के पिता की बात को स्वीकार कर लिया। वर का पिता सगे सम्बन्धियों के साथ रावजी के आंगन में आया। आंगन में एक ओर चारपाइयों पर दहेज की तमाम चीजें रखी थीं।

वर के पिता ने एक-एक कर दहेज की सारी चीजें देखीं। नाक-भोंसिकोड़कर बोला—“बस? यही है दहेज। ऐसा दहेज तो हमारे यहां नाई,

कहारों जैसी जाति वालों के लड़कों की शादियों में आता है। ना बाबा ना। मैं इस दहेज पर अपने लड़के का विवाह नहीं करूंगा। मुझे इस दहेज के बारे में भनक भी मिल जाती तो मैं हरगिज बारात लेकर न आता। रावजी मेरे और अपने रिश्तेदारों तथा गांव वालों के बीच मेरा अपमान कर रहे हैं। मैं शादी नहीं होने दूंगा।”

रावजी के पैरों तले से धरती खिसक गई। लड़की की शादी के बिना ही बारात दरवाजे पर से लौट गई, तो वह मुंह न दिखा सकेंगे। लड़की के लिए दूसरा वर मिलना असम्भव हो जाएगा। कोई यह नहीं मानेगा कि वर का लोभी पिता दहेज की लालच में बारात वापस ले गया। सब यही कहेंगे कि लड़की में ही कोई खराबी थी, तभी तो बारात दरवाजे से लौट गई। उन्होंने वर के पिता के पैर पकड़ लिए। अपनी पगड़ी पैरों पर डालकर गिड़गिड़ाते हुए कहा—“मुझ पर दया कौजिए समझी जी अगर आप बारात लौटाकर ले गए तो मैं जीते-जी ही मर जाऊंगा। मेरी बेटी की जिन्दगी बोज़ बन जायेगी। वह उम्र-भर कुंवारी बैठी रहेगी। मैं बहुत गरीब हूँ। जो दहेज जुटा सकता था, मैंने अपनी सामर्थ्य के अनुसार जुटाया। अगर कुछ कमी है तो उसे भी मैं पूरी कर दूंगा। इसके लिए कुछ समय दीजिए।”

वर के पिता ने गुस्से से कहा, “अगर दहेज देने की सामर्थ्य नहीं थी तो किसी भिखमंगे के साथ शादी कर देते। मेरा ही लड़का मिला बेवकूफ बनाने। अभी बिगड़ा ही क्या है। बेटी अपने बाप के घर है। मिल ही जायेगा कोई-न-कोई भिखमंगा।”

उसने अपने रावजी की पगड़ी उछाल दी और बारातियों से कहा—“चलो, मुझे नहीं करनी अपने बेटे की शादी। ऐसी लड़की से जिसका बाप जो दहेज तक न जुटा सके।”

और बारात वापस चली गयी।

बारात के वापस जाने पर रावजी का मन एकदम टूट गया। यह दोनों हाथों से अपना सिर पकड़कर रह गये। उनका सारा किया कराया पानी में मिल गया। अपनी बेटी के भविष्य के प्रति वह बेतरह चिंतित हो गये। उनकी आँखों के आगे अंधकार छा गया।

रावजी की आँखों के आँसू न थम रहे थे। सारे गांव की सहानुभूति उनके साथ थी, पर रावजी के मन को संतोष न पड़ा था। बारात वापस

लौट जाने के कारण उनका मन एकदम टूट गया था। वह खोये-खोये, उदास रहने लगे थे।

बारात को लौटे कई दिन बीत गये थे।

रावजी के मन पर इस घटना से गहरी ठेस लगा दी थी। उन्होंने घर से निकलना बंद कर दिया था। वह सारे दिन घर पड़े रहते और अपनी बेवसी पर रोते रहते। इस घटना का समाचार साईबाबा के पास नहीं गया था। उनका गांव शिरडी से केवल कुछ दूरी पर ही था। रोजाना ही उस गांव के लोग शिरडी आते-जाते थे। बारात का बिना विवाह किए लौट जाना कोई मामूली बात तो थी नहीं। यह घटना सर्वत्र चर्चा का विषय बन गयी थी।

साईबाबा तक भी समाचार पहुंच गया।

“रावजी इस अपमान से बहुत दुखी हैं। कहीं आत्महत्या न कर बैठें।”
—साईबाबा को समाचार सुनाने के बाद पड़ोसी चिन्तित हो गया था।

साईबाबा के शान्त चेहरे पर यकायक तनाव आ गया। करुणाभरी आंखें धीरे-धीरे दहकते अंगारों में बदल गईं। वदन क्रोध से कांपने लगा। उनकी यह हालत देखकर उनका शिष्य समुदाय घबरा गया। साईबाबा का समूचा वदन अंगारे की तरह लाल पड़ गया। होंठ फड़कने लगे।

द्वारिका मस्जिद में उपस्थित भक्त डरे हुए से साईबाबा का यह रूप देख रहे थे।

अगले दिन रावजी के समधी लाला के गांव का एक आदमी रावजी के पास पहुंचा। वह साईबाबा का भक्त था।

“रावजी, भगवान के घर देर तो होती है, अंधेर नहीं। जिस पांव से तुम्हारी पगड़ी में ठोकर मारी थी, उसके उसी पांव को लकवा मार गया है। उनका दायां अंग ही लकवे का शिकार हो गया है।”

रावजी ने दुःखी स्वर में कहा—

“कितना कड़ा दंड उन्हें मिला है। एक-दो दिन में उन्हें देखने जाऊंगा।”

रावजी को दिया गया यह समाचार एकदम ठीक था। उनके आधे शरीर को लकवा मार गया था। सबसे पहले उनका दायां पैर लकवे का शिकार बना। बाद में शेष दाएं अंग भी लकवा से सन्न हो गये। वह मरणा सन्न हो गया। उसका जीना, न जीना एक बराबर हो गया। लाला

का आघा दायों शरीर लकवे का शिकार हो गया था। वह अपने विस्तर पर पड़े आंसू बहाते रहते। पानी की तरह रुपया बहाया जा रहा था, पर उनका रोग कम होने के स्थान पर बिगड़ता चला जा रहा था। उनके एक रिश्तेदार ने उनसे कहा, “लालाजी, आप साईबाबा के पास जाकर उनकी धूनी की भभूति क्यों नहीं मांग लेते। बैलगाड़ी में लेटे-लेटे चले जाइए। साईबाबा की धूनी की भभूति से तो भयंकर से भयंकर राग दूर हो जाते हैं।”

लाला इस बात को मान गये। वह जानते थे कि भभूति से हजारों रोगियों को नया जीवन मिल चुका है। उनकी धूनी की भभूति लगाते ही रोग राम बाण की इस तरह छूमन्तर हो जाते हैं।

अगले दिन उन्होंने बैलगाड़ी जुतवाई। उनके बेटे ने बैलगाड़ी में मोटे-मोटे गद्दे बिछाकर उन्हें लिटा दिया। वह शिरडी की ओर चल पड़े।

लाला की बैलगाड़ी शिरडी में द्वारिका मस्जिद के सामने आ गयी।

बेटे ने अपने आदमियों की सहायता से लाला को गाड़ी से उतारा। उठाकर मस्जिद की ओर चल दिए।

साईबाबा सामने चबूतरे पर बैठे हुए थे। उन्होंने लाला को सीढ़ियों पर आते देखा, तो एकदम आग बबूला हो उठे। क्रोध से कांपते स्वर में चीखते हुए कहा, “खबरदार लाला जो मस्जिद में पैर रखा। तेरे जैसे पापियों का यहां काम नहीं है, फौरन चला जा, वरना सर्वनाश कर दूंगा।”

लाला थरथर कांपने लगे। उनकी आंखों से आंसू बहने लगे। बेटे ने उन्हें वापस लाकर बैलगाड़ी में लिटा दिया।

“पता नहीं साईबाबा आपसे क्यों नाराज हैं पिताजी!”—बेटे ने कहा, और फिर कुछ सोचकर बोला, “पिताजी, साईबाबा ने आपको मस्जिद में घसने से रोका है, मुझे तो रोका नहीं है। मैं चला जाता हूँ।”

“ठीक है। तुम चले जाओ बेटे!”—लाला ने आंखों के आंसू पोछते हुए कहा लेकिन उन्हें अब आशा न थी।

लाला का बेटा मस्जिद के अन्दर पहुंचा। साईबाबा को प्रणाम कर एक ओर बैठ गया।

“तुम्हारे बाप के रोग का कारण दुष्कर्मों का फल है। उसने जीवन-भर उचित-अनुचित ढंग और बेईमानी से पैसा इकट्ठा किया है। सारा व्यापार गलत ढंग का है। वह धन के लिए कोई भी काम कर सकता है।”

—साईबाबा ने कहा, “ऐसे लोभी, लालची और वेईमानों के लिए मेरे यहां कोई जगह नहीं है। और बेटे, एक बात और याद रखो, जो सन्तान चोरी और वेईमानी का अन्न खाती है, अपने बाप की चोरी और वेईमानी का विरोध नहीं करती, उसे भी अपने बाप के पापों का दण्ड भी भोगना पड़ता है।”

लाला का बेटा चुपचाप बैठा अपने पिता के स्वभाव और कर्मों की आलोचना सुनता रहा।

“तुम मेरे पास आए हो, इसलिए मैं तुम्हें भूति दिए देता हूं। इसे अपने लोभी-लालची और कंजूस बाप को खिला देना। अगर वह ठीक हो जाए तो उसे लेकर चले जाना।”

बेटे ने साईबाबा के चरण छुए। वह फिर आने का वायदा कर चला गया। साईबाबा की भूति ने चमत्कार कर दिखाया। चार-पांच दिन में लाला बिल्कुल ठीक हो गया। उसके लकवा से पीड़ित अंग पहले की तरह ही काम करने लगे।

“साईबाबा ने कहा था कि अगर आराम आ जाए तो आप उनके पास जरूर जायें।”—बेटे ने लाला से कहा।

“वहां जाकर क्या करूंगा बेटे! अब तो बीमारी का नाम निशान भी नहीं रहा है। बेकार ही इतनी दूर जाओ आओ।”

“लेकिन साईबाबा ने कहा था कि अगर आप उनके पास नहीं गये तो आप का रोग फिर बढ़ जाएगा और आपकी हालत और अधिक खराब हो जाएगी।”—बेटे ने समझाया।

लाला ने अपने बेटे की बात मान ली। वैसे मन ही मन वह साईबाबा के पास इस कारण से न जाना चाहता था कि कहीं वह मस्जिद के लिए कुछ मांग न बैठे। वह पैसों के मामले में मक्खीचूस था। वह दमड़ी के स्थान पर चमड़ी दे सकता था, पर दमड़ी नहीं। वह एक-एक पैसा दांत से दबाकर रखता था।

शिरडी जाना उसे आसान न था। उसका मतलब निकल गया था। फिर भी बेटे के कहते ही वह तैयार हो गया।

बृहस्पतिवार का दिन था। शिरडी में प्रत्येक गुरुवार उत्सव रूप में मनाया जाता था। लाला जब शिरडी में पहुंचे तो आस-पास के सैकड़ों

आदमी वहां थे। लाला भीड़ देखकर बहुत परेशान हुआ। उस भीड़ में अधिकतर दीन-दुखी लोग थे। उन लोगों के साथ जुलूस में सम्मिलित होना लाला को अच्छा न लगा। वह अपनी बैलगाड़ी में ही बैठा रह गया। केवल बेटे ने ही शोभा यात्रा में भाग लिया। साईबाबा का प्रसाद भी बड़ी श्रद्धा से ग्रहण किया।

जब भीड़ कुछ छंट गयी, तो उसने साईबाबा के चरण स्पर्श लिये। साईबाबा ने उसके सिर पर हाथ फेर कर आशीर्वाद दिया, और फिर एक चुटकी भभूति उसे देकर बोले,—अपने पिता को तीन दिन दे देना। रहा-सहा रोग भी दूर हो जाएगा।”

बेटे ने साईबाबा के पैर छुए और चला आया।

साईबाबा की भभूति से तीन दिन के भीतर ही लाला की ऐसा लगन लगा, जैसे शरीर में नया जीवन आ गया हो। पिता की बीमारी के कारण वह उनका कारोबार देखने लगा था। पुत्र को कारोबार का कोई अनुभव न था, फिर भी निरन्तर लाभ हो रहा था। लाला बहुत हैरान थे। उन्हें यह सब कुछ चमत्कार जैसा लग रहा था।

“एक बात समझ में नहीं आ रही है बेटा !” एक दिन लालाजी ने अपने बेटे से कहा,—“तुम्हें कारोबार का कोई अनुभव नहीं है। तभी तो डर था, तुम जैसे अनुभवहीन को कारोबार सौंपकर मैंने गलती की है। मेरा सारा कारोबार चौपट हो जाएगा, लेकिन मैं देख रहा हूं कि तुम जो भी सौदा करते हो, उससे बहुत मुनाफा होता है।”

“यह सब साईबाबा के आशीर्वाद का फल है, पिताजी। उन्होंने मुझे आशीर्वाद दिया था। साईबाबा तो भगवान के अवतार हैं !”—बेटे ने कहा।

“ठीक कहते हो बेटा। मुझे भी व्यापार करते हुए तीस वर्ष बीत चुके हैं। मुझे आज तक व्यापार में इतना लाभ कभी नहीं हुआ, जितना आज कल के दिनों हो रहा है। सचमुच साईबाबा भगवान के अवतार हैं।”—अब लाला के मन में भी साईबाबा के प्रति श्रद्धा उत्पन्न हो रही थी। एक तस्वीर वाला फेरी लगाता हुआ लाला दूसरे दिन गली में आया। लाला ने उसे बुलाकर पूछा—“ये कैसी तस्वीरें बेच रहे हो ?”

“लालाजी मेरे पास तो केवल शिरडी के साईबाबा की ही तस्वीरें हैं।

मैं उनकी तस्वीरों के अलावा और किसी तस्वीर को नहीं बेचता हूँ।” तस्वीर बेचने वाले ने कहा।

कुछ देर तक तो लाला कुछ सोचते रहे। उन्होंने सोचा साईबाबा की भभूति से मेरा रोग दूर हुआ है। उन्हीं के आशीर्वाद से मेरा बेटा इस व्यापार में हजारों रुपये कमा रहा है। अगर एक तस्वीर ले लूँ, तो घाटा नहीं होगा। लाला ने एक तस्वीर पसन्द करके ले ली। कुछ देर पहले ही दूकान का मुनीम पिछले दिन की रोकड़ लाला को दे गया था। वह अपने पलंग पर रुपया पैसा फैलाए उसे गिन रहे थे। उन्होंने इन ढेरियों की ओर इशारा करके कहा, ‘लो भई तुम्हारी तस्वीर के जो भी दाम हों, इनमें से उठा लो।’ पर तस्वीर बेचने वाले ने चांदी का एक छोटा सिक्का मात्र उठाया।

“बस इतने ही पैसे ! ये तो बहुत कम हैं और ले लो।”—लाला ने बड़ी उदारता से कहा।

“नई सेठ ! साईबाबा कहते हैं कि लालच इन्सान का सबसे बड़ा दुश्मन है। मैं लालची नहीं हूँ। मैंने तो उचित दाम ले लिए। यह लालच तो आप जैसे सेठ लोगों को ही शोभा देता है।”

लाला बहुत हैरान हुए। तस्वीर बेचने वाले मामूली से आदमी ने जैसे उनके मुंह पर एक करारा थप्पड़ जड़ दिया था। अपनी झोंप मिटाने के लिए कहा—“बहुत दूर से आ रहे हो। पानी तो कम-से-कम पी ही लो।”

“नहीं मुझे प्यास नहीं लगी है।”

उसी समय लाला का बेटा वहां आ गया। साईबाबा की तस्वीर देखी। बड़ी खुशी हुई। तस्वीर बेचने वाले की ओर देखकर कहा—“तुमने बहुत अच्छा किया भाई। हमारे घर में साईबाबा की कोई तस्वीर थी ही नहीं। मैं तो कई दिन से उनकी तस्वीर खरीदने की सोच रहा था। यहां किसी दूकानदार के पास साईबाबा की कोई तस्वीर थी ही नहीं।”

“चलिए आपकी मनोकामना पूरी हो गई।”—तस्वीर वाला हंसकर बोला।

“इस खुशी में आप जलपान कीजिए।”—लालाजी के बेटे ने प्रसन्नता भरे स्वर में कहा, “साईबाबा की कृपा से ही मेरे पिता का रोग दूर हुआ है। व्यापार में दिन दूना रात चौगुना लाभ हो रहा है।”

“आपकी ऐसी इच्छा है तो मैं जलपान अवश्य करूंगा—तस्वीर

चाले ने कहा ।

लाला सोच रहे थे कि यह तस्वीर बेचने वाला भी अजीब आदमी है । पहले लालच की बात कहकर मेरा अपमान किया । फिर जब मैंने पानी पीने के लिये कहा, तो पानी पीने से इन्कार कर फिर मेरा अपमान कर दिया । मेरे बेटे के कहने पर पानी तो क्या जलपान करने के लिए फौरन तैयार हो गया ।

तस्वीर वाले ने जलपान किया और अपनी गठरी लेकर चला गया । उधर कई दिन के बाद रावजी ने सोचा कि शिरडी जाकर साईबाबा के दर्शन कर आएं । उनके दर्शन से मन का दुख कुछ कम हो ही जाएगा । यही सोचकर वह अगले दिन पौ फटते ही वह शिरडी के लिए चल दिया ।

शिरडी पास ही था । राव आधे घण्टे में ही शिरडी पहुँच गया । अपमान की पीड़ा, चिन्ता से राव की हालत ऐसी हो गई थी, जैसे महीनों से बीमार हो । उनका चेहरा पीला पड़ गया था । मन की पीड़ा चेहरे पर जम गयी थी ।

“मैं तुम्हारा दुख जानता हूँ राव ।”—साईबाबा ने चरणों पर झुके राव को उठाकर बड़े प्यार से उसके आंसू पोंछते हुए कहा—“तुम तो ज्ञानी पुरुष हो । यह क्यों भूल गए कि दुख-सुख, मान और अपमान यह कोई नहीं कह सकता है कि मनुष्य के उसे कब दुख-सुख का और मान-अपमान का सामना करना पड़ जाये ।”—राव ने कोई उत्तर नहीं दिया । वह डबडबायी आंखों से साईबाबा की ओर देखता रह गया ।

“जो ज्ञानी होते हैं वे दुख आने पर न तो आंसू बहाते हैं और न सुख आने पर खुशी से पागल होते हैं ।”—साईबाबा ने कहा—“अगर हम किसी को दुख देंगे, भगवान अवश्य दुख देगा । अगर हम किसी का अपमान न करेंगे, तो हमें भी अपमान सहन करना पड़ेगा । यही भगवान का न्याय है ।

“नहीं, मुझे, भगवान के न्याय में कोई सन्देह नहीं है ।”—रावजी ने आंसू पोंछते हुए कहा ।

“सुनो राव, कभी-कभी ऐसा भी तो होता है कि हमें अपने पिछले जन्मों के भी किसी अपराध का भी दण्ड इस जन्म में ही भोगना पड़ता है । कभी-कभी पिछले जन्मों का पुण्य हमारे इस जन्म में काम आ जाता है ।

हम संकट से बच जाते हैं। जो दुख तुम्हें मिला है, वह शायद तुम्हें पूर्व जन्म के किसी कर्म के बजह से मिला हो।”

“हां। यह हो सकता है बाबा।”

“और राव यह भी तो हो सकता है कि इस अपमान के पीछे कोई अच्छी बात छिपी हुई हो। बिना सोचे समझे भाग्य को दोष देने से भला लाभ है।”

“मुझसे भूल हुई बाबा। दुख और अपमान की पीड़ा ने मेरा ज्ञान मुझसे छीन लिया। आपने मेरा खोया हुआ ज्ञान लौटा दिया।”—राव ने प्रसन्नता भरे स्वर में कहा।

“किसी बात की चिन्ता मत करो रावजी। भगवान पर विश्वास रखो। वह जो कुछ भी करते हैं, हमारे हित के लिए ही करते हैं। तुम आगामी बृहस्पतिवार को बिटिया को लेकर मेरे पास आ जाना। भगवान चाहेंगे तो तुम्हारा भला ही होगा।”—साईबाबा ने कहा। रावजी ने साईबाबा के चरण छुए और उनका आशीर्वाद लेकर वह वापस लौट गया।

अपने गांव की ओर लौट रहा था। उसे अपना मन फूल की तरह हलका फुलका महसूस हो रहा था। उसके मन का सारा दुःख लगभग हलका हो गया था। उसका मन अब किसी प्रकार के द्वेष से भरा न था। वहां तस्वीर वाले के जाने के बाद से लाला बहुत देर तक डूबा बैठा रहा। उसके चेहरे पर नाना प्रकार के भाव आ रहे थे। उसके मन में विचारों की आंधी चल रही थी। उसने अपना व्यवहार बदल दिया था। सुबह उठकर वह भगवान की पूजा करने लगा था। साधु-संन्यासी, अतिथि आता उसका स्वागत सत्कार करता। जिस चीज की भी जरूरत होती, उसे पूरा करता। उसने साधारण कपड़े पहिनना शुरू कर दिया था। अकारण क्रोध करना भी छोड़ दिया था।

बेटे को अक्सर समझाता “बेटा, जिस व्यापार में ईमानदारी और सच्चाई होती है, उसी में स्थायित्व होता है। सुख और शान्ति रहती है। झूठ और बेईमानी मनुष्य का चरित्र नष्ट कर देती है। झूठ बेईमान व्यापारी को एक दिन किये का फल भी भोगना पड़ता है। उसका व्यापार किसी भी समय समाप्त हो सकता है।”

“आप जैसा कहेंगे मैं वैसा ही करूंगा पिताजी।”—बेटे का जवाब था।

“हमें शिरडी चलना है।”—लालाजी ने एक दिन बेटे को याद दिलाया।

“हां मुझे याद है। साईबाबा के दर्शन करने जरूर चलेंगे।”

अचानक लाला का चेहरा उदास और फीका पड़ गया। वह अत्यन्त दुःख डूबे स्वर में स्वयं ही बोला, मानो पश्चात्ताप की अग्नि में जल रहा हो। उसने कहा—“मैंने राव की बेटी का तेरे साथ विवाह न कर बड़ा पाप किया है! राव बहुत सीधे सादे नेक आदमी हैं। वह भी साईबाबा के भक्त है। बारात लौटाकर मैंने उनका बहुत बड़ा गुनाह किया है।”

“जो कुछ हो गया, उसके लिए पश्चात्ताप करने से क्या होगा पिताजी! लड़के ने दुःख डूबे स्वर में कहा—“अब यह सब भूल जाइए।”

“कैसे भूलूं बेटा! अब मैं इस पाप का प्रायश्चित्त करना चाहता हूं।”

लालाजी ने मन ही मन निश्चय कर लिया कि राव की बेटी का विवाह अपने बेटे से कर, अपने पाप का प्रायश्चित्त करेंगे। वह सबसे अपने व्यवहार के लिये क्षमा मांगने की भी सोच रहा था। दिन बीतते गए। बृहस्पतिवार आ गया। लाला अपने बेटे के साथ मस्जिद के आंगन में पहुंचा, तो उसकी नजर राव पर पड़ी। राव भी उनकी ओर देखने लगे। अचानक लाला ने लपककर राव के पैर पकड़ लिये।

“अरे, अरे यह आप क्या कर रहे हैं सेठजी। मेरे पांव छूकर पाप के भागी मत बनाइए।” राव लाला के इस व्यवहार पर चकित रह गया था।

“नहीं रावजी, जब तक आप मुझे क्षमा नहीं करेंगे, मैं आपके पैर नहीं छोड़ूंगा।”—लाला ने भरे गले से कहा, “मैंने आपका अपमान किया है। मेरा मन रात दिन धधक रहा है। जब तक आप मुझे क्षमा नहीं करेंगे मैं पैर नहीं छोड़ूंगा।

तभी एक ने कहा—“आप लोगों को साईबाबा याद कर रहे हैं।”

वह सब साईबाबा के पास गये। लाला ने साईबाबा से अपने मन की बात कही। लाला का हृदय परिवर्तन देखकर साईबाबा प्रसन्न हो गये। फिर उन्होंने पूछा—“सेठजी आपका रोग तो दूर हो गया है न?”

“आपकी कृपा से मेरा रोग दूर हो गया है बाबा, लेकिन मुझे सेठजी मत कहिए। मुझे सेठजी के नाम से सम्बोधित न कीजिए।”

“तुम्हारे इस विचार को सुनकर मुझे बहुत खुशी हुई। एक मामूली-सी,

बीमारी ने तुम्हारे विचार बदल दिए। किसी भी पाप का दंड यही है, अपने पाप या अपराध को स्वीकार कर प्रायश्चित्त करना। यह धन-दौलत तो बेकार की चीज है। आज है कल नहीं ! इससे मोह करना बुद्धिमानी नहीं है। कामना करूँ कि तुम्हारे विचार जीवन-भर ऐसे ही बने रहेंगे।”

बाबा ने हवा में अपना हाथ लहराया। लोगों ने देखा, उनके हाथ में सुन्दर और मूल्यवान दो हार आ गये थे।

“सेठ उठो, एक हार अपने बेटे को दो और दूसरा लक्ष्मी बेटी को दे दो। ये एक-दूसरे को पहना दें।” —साईबाबा ने कहा।

लाला ने एक अपने बेटे को दिया दूसरा रावजी की बेटी को दोनों ने एक-दूसरे को हार पहनाए। साईबाबा के चरणों में सिर झुक गए।

“तुम दोनों का कल्याण हो। जीवन भर सुखी रहो।” —साईबाबा ने आशीर्वाद दिया।

राव और लाला की आंखें छलक उठीं। उन्होंने एक-दूसरे की ओर देखा। फिर दोनों एक-दूसरे की बांहों में समा गए।

○

सुबह-सुबह जब इंस्पेक्टर गोपालराव अपने मकान के दरवाजे पर खड़े थे कि गांव का एक मेहतर अपनी पत्नी के साथ निकला। जैसे ही उन दोनों की नजर ऊपर पड़ी, वे ठिठक कर रुक गए।

और मेहतरानी की धीमी आवाज सुनाई दी—“घर से निकलते ही निरबंसिया का मुंह देखा है। पता नहीं हम ठिकाने पर पहुंच भी पायेंगे या नहीं। आज मत चलो। कल चलेंगे। घर से मुंह अंधेरे ही निकलेंगे ताकि इस निरबंसिया का मुंह न देखना पड़े।”

इंस्पेक्टर गोपालराव के सीने में मेहतरानी के ये शब्द बेहद चोट कर गये। उन्होंने सन्तान की इच्छा से चार विवाह किए थे। लेकिन एक भी सन्तान उत्पन्न नहीं हुई। उन्होंने सोचा था कि शायद कोई कमी है। उन्होंने डाक्टरों से चैक कराया। सब ठीक था। उसकी पत्नी भी गर्भ-धारण करने योग्य थी, पर संतान नहीं हो रही थी।

इंस्पेक्टर गोपालराव ने दुःखी होकर अपने पद का त्याग-पत्र लिखा और हस्ताक्षर कर एक ओर रख दिया। फिर पलंग पर लेटकर आंखें मूंद लीं। इस घटना ने इंस्पेक्टर गोपालराव को झिझोड़ कर रख दिया था।

प्रतिष्ठा क्या नहीं था उनके पास ! जमीन, जायदाद सरकारी पद, धन था। सभी कुछ नौकरी के सिलसिले में था। जहां भी गए थे, पर्याप्त मान-सम्मान, और यश प्राप्त हुआ।

इसके बाद भी संतान न होना दुःख की बात थी।

संतान विहीन होने के कारण वह बेतरह दुःखी थे। इस संसार से उनका मन टूट गया था। माया मोह उनके मन से समाप्त हो गया था। वीतरागी से हो गये थे। संतान प्राप्ति के लिये क्या नहीं किया। फिर भी आज तक वह सन्तान का मुंह नहीं देख पाए। डाक्टरों की दवाइयां, पंडितों के अनुष्ठान और ओझा गुनियों के गंडे-ताबीज सभी कुछ बेकार सिद्ध हुए थे। मेहतरानी की बात सुनकर उन्हें लगा कि निस्संतान व्यक्ति का जीवन ही बेकार होता है। और लोग भी ऐसा ही समझते होंगे। घृणा करते होंगे, सुबह उनका मुंह देखना अशुभ और अपशकुन समझते हैं। तब निश्चय कर लिया कि नौकरी छोड़ देगे। सारी धन-सम्पत्ति चारों पत्नियों के नाम कर संन्यास लेकर हिमालय चले जायेंगे। यह निश्चय करने के बाद उन्होंने त्याग-पत्र लिखा और पलंग पर लेटकर गहरी चिन्ता में पड़ गये।

थोड़ा ही समय बीता था। बाहर गाड़ी रुकने की आवाज सुनाई पड़ी। गोपालराव चौंककर दरवाजे की ओर देखने लगे। “गोपाल,” दरवाजे पर आवाज आयी और दूसरे ही पल उनका मित्र कमरे में आ गया।

“हलो रामू—” गोपालराव उठकर खड़े हो गए। आगे बढ़कर रामू को बांहों में भर लिया।

दोनों मित्र एक-दूसरे से लिपट गये।

“तुम सुबह-सुबह कैसे पहुंच गए ?”—गोपाल राव ने अपने मित्र का स्वागत करते हुए पूछा।

“ट्रेन से अहमदाबाद जा रहा था। लेकिन जैसे ही ट्रेन यहां स्टेशन पर आयी, वैसे ही किसी ने मेरे कान में कहा, ‘रामू, यहीं उतर जा। गोपालराव तुम्हारी याद कर रहा है। मैं बिना कुछ सोचे-समझे उतर पड़ा। स्टेशन से बाहर आया तो मुझे घोड़ा-गाड़ी भी मिल गई और सीधा तुम्हारे घर चला आया।”

गोपाल अपने मित्र रामू की ओर देखने लगा। समझ में कुछ न आ रहा था। यह सब क्या है ? रामू से यह किसने कहा कि उनकी मुझे बहुत

सख्त जरूरत है ? इस समय उसका ध्यान भी नहीं था । फिर सवेरे-सवेरे वहां—घोड़ा-गाड़ी कहां से आ गई ?

इस प्रकार यकायक अपने गहरे दोस्त का आ जाना गोपालराव के लिये बहुत विस्मय का विषय था ।

यह आश्चर्य की बात थी कि ऐसा संयोग कैसे और किस प्रकार बैठ गया कि रामू यहां आ गया । बहुत दिनों के बाद से रामू उनकी मुलाकात हो रही थी । अपने घनिष्ठ मित्र को देखकर प्रसन्नता थी, पर सारा संयोग विस्मयजनक था । यह उनके लिये अनहोनी बात थी ।

गोपालराव ने रामू का यथाभाव स्वागत किया । फिर सब बातों से मन हटाकर पूछा—“खैर, यह बताओ, घर में तो खैरियत है न ?”

“हां खैरियत है । यकायक तुम्हारे पास आने का मन हो गया ।”

“ठीक किया यार, पर आज न आते तो शायद फिर कभी न मिलता”
—गोपालराव ने कहा ।

“वह क्यों ? क्या खुदकुशी का इरादा है ।”—रामू दोस्तों जैसी बेतकलुफी पर उतर आया ।

“नहीं खुदकुशी तो बुज्जदिल किया करते हैं ।”—गोपालराव ने हंसते हुए कहा,—“मैं तो नौकरी छोड़कर संन्यासी बनने जा रहा था ।”

“क्यों ?”—रामू ने आश्चर्य से पूछा ।

“क्या बताऊं !”—गोपाल ने डूबते स्वर में कहा और फिर सुबह की घटना बतलाने के बाद उसने मेज से अपना त्याग-पत्र उठाकर रामू को दिखाते हुए कहा—“यह देखो । अपनी नौकरी से यह त्याग-पत्र लिख दिया था ।”

रामू ने उसका पत्र पढ़ा । फिर उसे फाड़कर टुकड़े-टुकड़े कर दिए ।

“अब मेरी समझ में सब कुछ आ गया । जल्दी से तैयार हो जाओ । हम दोनों शिरडी चलेंगे ।”

“दो-चार दिन यहां रहो । फिर शिरडी चलेंगे ।”—गोपाल ने कहा ।

“नहीं । आज ही और इसी समय शिरडी चलेंगे ।”—रामू ने कहा—
“मुझे तो यह सारा खेल साईंबाबा का दिखलाई पड़ रहा है । शायद हम दोनों को वह एक साथ बुलाना चाहते हैं ।”

रामू की इस बात पर गोपालराव चुप रह गया । रामू ने जोर देकर

इस बात को कहा था। अतएव वह इंकार कर पाने की दशा में न था। उसने कहा—“तब ठीक है। मैं अभी तैयार हुआ जाता हूं। नाश्ता करने के बाद शिरडी चल पड़ेंगे।”

फिर वह दोनों शिरडी के लिए रवाना हो गये।

इंस्पेक्टर गोपाल और रामू शिरडी पहुंचे तो सूरज डूब रहा था। द्वारिका मस्जिद में रोशनी की तैयारियां हो रही थीं। साईं बाबा मस्जिद के चबूतरे पर बैठे थे। अनेक शिष्यों ने उनको घेर रखा था। कुछ धर्म-चर्चा हो रही थी।

तभी गोपाल और रामू ने मस्जिद में कदम रखा।

“आओ गोपाल, आओ रामू बहुत देर कर दी तुम लोगों ने। तुम तो सुबह दस बजे चले थे शायद।”—साईं बाबा ने मुस्कराहट के साथ दोनों का स्वागत करते हुए कहा।

गोपाल और रामू ठिठककर एक-दूसरे की ओर देखने लगे। फिर उन्होंने आगे आकर एक साथ साईं बाबा के चरणों पर सिर रख दिया।

“आज तुम दोनों ने एक साथ मेरे पांव छुए हैं। मस्जिद में भी एक साथ कदम रखा। मैं चाहता हूं कि तुम्हारे मन की मुरादें भी एक साथ पूरी हों। तभी तुम दोनों एक साथ मिलकर कोई ऐसा काम करो, जो अमर रहे।”—साईं बाबा ने दोनों को अपने पैरों पर में उठाते हुए कहा।

पास खड़े हाजी सिद्दीकी को बुलाकर कहा, “सिद्दीकी आप तो हज कर आए हैं। बुजुर्ग आदमी हैं और तजुबेकार भी। अब तक लाखों आदमी आपकी नज़रों के सामने से गुज़रे होंगे, इंसान की आपको जबर्दस्त पहचान है। आप क्या यह बता सकते हैं कि इनमें से कौन हिन्दू और कौन मुसलमान है?”

हाजी सिद्दीकी गोपालराव और रामू के चेहरों को ध्यान से देखने लगे। कई मिनट तक देखा और फिर बोले—“साईं बाबा, आज तो मेरी बूढ़ी और तजुबेकार आंखें मुझे धोखा दे रही हैं। मैं नहीं बता सकता हूं कि इन दोनों में से कौन हिन्दू है और कौन मुसलमान? मुझे दोनों ही हिन्दू भी दिखाई दे रहे हैं और मुसलमान भी।”

“तुम ठीक कहते हैं हाजी, ये दोनों हिन्दू भी हैं और मुसलमान भी। मैं चाहता हूं कि इनका यही रूप बना रहे। ये दोनों हिन्दू भी रहें और

मुसलमान भी ।” —साई बाबा ने हंसते हुए कहा ।

“साई बाबा, जिस दिन हम दोनों का मुरादें पूरी हो जायेंगी, उस दिन ऐसा काम करेंगे, जो एक मिसाल बनकर रह जाएगा ।” —रामू ने साई बाबा के पैर छूकर कहा ।

“हां बाबा, हम दोनों मित्र मिलकर जिस तरह एक बन गए हैं, तो हिन्दू और मुसलमान धर्म के भेद मिटा दें ।” —गोपाल ने कहा ।

रामू का वास्तविक नाम अहमद अली था, पर उसने जानबूझकर अपने को रामू कहना, कहलाना शुरू कर दिया था । उसकी वेशभूषा मुसलमान के समान रहती थी, पर पूछने पर अपना नाम रामू ही बतलाता है ।

“भेरी शुभकामनाएं और आशीर्वाद हमेशा तुम दोनों के साथ है ।” —साई बाबा ने बड़े प्यार से उन दोनों को आशीर्वाद देते हुए कहा — “तुम्हारी मनोकामना जल्दी पूरी होगी ।” —साई बाबा ने उन दोनों को खुले मन से आशीर्वाद दिया । यह आशीर्वाद देते समय उनका स्वर अत्यन्त गम्भीर था ।

खुशखबरी

नौ महीने बाद एक दिन गोपाल और रामू के घरों पर एक साथ शह-नाइयां बज उठीं । साई बाबा के आशीर्वाद से दोनों की मनोकामना पूरी हो गई । दोनों के घर एक ही दिन, एक ही समय बच्चे पैदा हुए थे । और दोनों ही लड़के थे । जिस समय गोपाल ने मस्जिद की सीढ़ियों पर कदम रखा, ठीक उसी समय रामू भी मस्जिद की सीढ़ियों के सामने आ गया ।

“ठहरो गोपाल” —रामू ने आवाज दी ।

गोपाल रुक गया । दौड़कर रामू से लिपट गया — “रामू, आज मैं बहुत खुश हूं । साई बाबा की कृपा से कलंक मिट गया । लोग मेरा मुंह देखना अशुभ मानते थे ।”

“और गोपाल, आज सबेरे तुम्हारा भी एक नन्हा-सा भतीजा आ

गया।"—रामू ने गोपाल को अपनी बांहों में भींचकर कहा। दोनों बेहद खुश थे। ऐसा लग रहा था, मानो उनको दुनिया का सब कुछ मिल गया है।

दोनों साईं बाबा के आशीर्वाद से पिता बन गये थे। उनकी खुशियों का ठिकाना न था। दोनों को मानो नया जीवन मिल गया था।

"इसका मतलब है, साईं बाबा ने हम दोनों की मुरादे एक साथ पूरी दीं।"—गोपाल ने हंसते हुए कहा—"अब हम दोनों एक साथ बाबा को खुश-खबरी दें।"

जैसे ही दोनों मित्र मुड़कर अगली सीढ़ी पर कदम रखने लगे, उनकी नजर पड़ते ही एक साथ निकला, "साईं बाबा।"

साईं बाबा ने आगे बढ़कर दोनों को आशीर्वाद दिया। प्रेमपूर्वक उनका हाथ पकड़कर अपनी धूनी के पास ले गये। वहां पर सब बैठ गये।

गोपाल बोला—"साईं बाबा, हम दोनों यह चाहते हैं कि आज से शिरडी में हिन्दू और मुसलमानों के जितने भी त्यौहार होते हैं, दोनों मिलकर मनाया करें और इसका आरम्भ इसी राम-नवमी से करना चाहते हैं, क्योंकि यह दिन राम का जन्मदिन है। यही दिन मुसलमानों के पैगम्बर हजरत मुहम्मद साहब का भी जन्मदिन है। हिन्दू-मुस्लिम एकता को बढ़ाने वाली इस परम्परा के लिए इससे अच्छा दिन और दूसरा नहीं हो सकता है।"

"गोपाल की बात का मैं समर्थन करता हूं,"—नई मस्जिद के इमाम साहब जल्दी से बोले—"मैं शिरडी के मुसलमानों की ओर से आप सबको यकीन दिलाता हूं कि हिन्दुओं के जितने भी त्यौहार हैं हम लोग उन त्यौहारों को भी मनाया करेंगे।"

"ठीक है"—साईं बाबा मुस्कुराये," मेरे लिये यह बहुत खुशी की बात है। दोनों धर्म वालों के बीच भाईचारा ही मेरा उद्देश्य है। मेरे लिये तो बड़ी महत्वपूर्ण स्थिति है। यह सुनकर मुझे बहुत शान्ति मिल रही है। तात्या, तुम तैयारी करो। कल भगवान राम और हजरत मुहम्मद साहब का जन्म-दिन एक साथ मनाया जाये।"

मस्जिद में उपस्थित सभी लोग खुशी से भर गए। सबके लिये यह प्रसन्नता के साथ-साथ एकता की महत्वपूर्ण बात थी। दोनों सम्प्रदायों के बीच भाईचारा बढ़ने की आधारशिला थी।

एक और चमत्कार

लक्ष्मीबाई की कोई सन्तान न थी। वह रात दिन दुःखी रहा करती थी। जब उसको साईं बाबा का पता चला तो वह शिरडी आयी। द्वारिका मस्जिद आकर वह साईं बाबा के पैरों पर गिरने ही वाली थी कि साईं बाबा ने उसके हाथ पकड़ लिये और कहा—“मां यह क्या करती हो।”

लक्ष्मी सिसक पड़ी।

साईं बाबा बोले—“मां रोने की आवश्यकता नहीं है। तुम यहां आ गयी हो। भगवान तुम्हारी रक्षा करेंगे।”

लक्ष्मी ने अपने आंसू रोके।

बोली, “साईं बाबा। मेरा दुःख तो आप जानते ही हैं।”

“हां मां। मुझे सब पता है।”

“तब मेरा दुःख दूर करो बाबा।”—वह बोली।

“जरूर दूर होगा।”

साईं बाबा ने अपनी धूनी की भभूति उठाकर उसे दी—“चुटकी भर इसे खा लेना। चुटकी भर अपने पति को खिला देना। तुम्हारी मुराद जरूर पूरी होगी।”

लक्ष्मीबाई ने श्रद्धा के साथ बाबा की दी भभूति अपने आंचल में बांध ली। उनका गुणगान करती वापस आ गयी। साईं बाबा के निर्देशानुसार एक चुटकी भभूति पति को खिलाने के बाद, दूसरी चुटकी भभूति स्वयं खा ली। साईं बाबा पर पूरी श्रद्धा और पूरा विश्वास था।

उचित समय पर वह गर्भवती हो गयी। उसकी प्रसन्नता का पारावार न रहा। अपने सारे गांव में वह हर समय साईं बाबा का गुणगान करती घूमने लगी।

गांव प्रधान दादू साईं बाबा का कट्टर विरोधी था। वह साईं बाबा को भ्रष्ट मानता था। साईं बाबा भ्रष्ट आदमी है। वह न हिन्दू है, न मुसलमान। एक खिचड़ी आदमी। खिचड़ी आदमी भ्रष्ट माना जाता है। लक्ष्मी उसका ऐसा कहना उसे बड़ा ही नागवार लगा।

उसने लक्ष्मी को बुलाकर फटकारा भी।

“तू साईं बाबा का नाम लेकर क्यों प्रचार करती है?”

“साई बाबा, पहुंचे महापुरुष हैं।”

“तेरा दिमाग खराब है।”—प्रधान आग बबूला हो गया। उसने लक्ष्मी को बेहद डांटा-फटकारा और आगे से कभी भी साई बाबा का नाम न लेने का आदेश दिया, पर भला वह मानने वाली थी। उसने साई बाबा का गुणगान यथापूर्व जारी रखा। इस पर प्रधान के मन में आग लग गयी। उसने लक्ष्मी बाई को सबक सिखाना ठीक समझा। लक्ष्मी बाई गर्भवती है। अगर उसका गर्भ नष्ट कर दिया जाये, तो वह साई बाबा का गुणगान बन्द कर विक्षिप्त हो जायेगी। इस विचार के साथ प्रधान पंच ने लक्ष्मीबाई को गर्भ-पतन की अचूक औषधि दे दी। उसने वह षड्यन्त्र इस प्रकार के माध्यम से किया कि लक्ष्मीबाई को कुछ भी शक न हुआ और न उसे कुछ पता चल सका।

जब दवा ने अपना प्रभाव दिखलाया, तो लक्ष्मी बेहद घबरा गयी।

हे भगवान ! यह क्या हो गया ? साई बाबा ने इसे किस अपराध की सजा दी है अथवा उससे ऐसी क्या भूल हो गयी है कि जिसका दंड साई बाबा उसे इस प्रकार दे रहे हैं।

वह तुरन्त शिरडी भागी।

भागते-भागते शिरडी आयी। द्वारिका मस्जिद आकर वह साई बाबा के सामने फूट-फूटकर रोने लगी। साई बाबा मौन बैठे रहे। लक्ष्मी बिलख-बिलखकर अपनी गलती के लिये क्षमा मांगने लगी। साई बाबा ने उसे एक चुटकी भभूत देकर कहा, “इसे खा ले। जा भाग सब ठीक हो जायेगा। चिन्ता मत कर।”

लक्ष्मी ने साई बाबा की आज्ञा का पालन किया। उसका रक्तस्राव रुक गया। गर्भपात न हो सका। ठीक इसी समय प्रधान पंच की दशा मरणासन्न हो गयी। वह मुंह से खून फेंकने लगा। वह बहुत घबराया। उसे लगा कि यह सब साईबाबा का चमत्कार है।

उसने अपनी गलती महसूस की।

वह भागकर शिरडी गया। बाबा के चरणों में गिरकर क्षमा याचना करने लगा। बाबा ने उसे क्षमा कर दिया। वह ठीक हो गया।

लक्ष्मीबाई ने ठीक समय पर शिशु को जन्म दिया। उसकी मुराद पूरी हो गयी। प्रधानपंच ने भी खुशियां मनायी और वह भी साईबाबा का

जय जयकार करने लगा ।

लक्ष्मीबाई अपना पुत्र लेकर साईबाबा के पास गयी । साईबाबा के चरणों में डाल दिया । साईबाबा ने उसे आशीर्वाद दिया । लक्ष्मीबाई की मुराद पूरी हो गयी ।

साईबाबा की जयजयकार अब दूर-दूर तक गूँजने लगी थी । उनका नाम और यश बराबर फैल रहा था । उनके भक्तों की संख्या भी बराबर बढ़ रही थी ।

शिरडी की द्वारिका मस्जिद का रंग-रूप बदल गया था । साईबाबा कभी भी एक पैसा न छूते थे, पर भक्त मुक्त हस्त से दान देते थे । यह सारा पैसा शिरडी के विकास में लगाया जा रहा था । एक मंदिर और अस्पताल का निर्माण कार्य शुरू हो गया था । शिरडी में दूर-दूर से लोग साईबाबा के दर्शन करने के लिये बराबर आने लगे थे ।

द्वारिका मस्जिद में साईबाबा के भक्तों का मेला आने लगने था । बराबर मस्जिद में भीड़ लगी रहती थी । साईबाबा अपनी वही ईट सिरहाने रखकर जमीन पर लेटे रहते थे । उनकी धूनी बराबर जाग्रत रहती थी ।

अभिलाषा

कोपीनेश्वर महादेव के नाम से बम्बई के निकट थाना के पास ही शिव जी का एक प्राचीन मन्दिर है ।

इसी मन्दिर में साईबाबा का एक शिष्य बाबा का गुणगान कर रहा था । काफी लोग मन्दिर में मौजूद थे । वे सभी बड़े मनोयोग से साईबाबा का गुणगान सुन रहे थे । राघवदास साईबाबा का नाम और चमत्कार सुनकर उनको देखे बिना ही इतना प्रभावित हो गया था कि वह उनका अंध-भक्त बनकर अन्तःप्रेरणा से निरन्तर उनका गुणगान करने लगा था । कई वर्ष पहले उसने साईबाबा का नाम और उनकी महिमा सुनी थी । लेकिन वह अभी तक बाबा के दर्शन करने शिरडी नहीं जा सका था । उसका उसे

दुख हुआ था।

साईबाबा की महिमा को गाथायें सुनाकर उसकी आंखों में आंसू आ गए। वह मन ही मन कहने लगा है, "साईबाबा, क्या मैं इतना अभागा हूँ कि मुझे आपके दर्शन का सौभाग्य प्राप्त नहीं होगा? क्या मैं इतना गरीब रहूंगा कि शिरडी आ-जाने तक का भी न जुटा सकूँ। मामूली-सी नौकरी इतना बड़ा परिवार है। इस थोड़ी-सी आमदनी में ही खर्चा इतने प्राणियों का पेट भरना तन ढंकना पड़ता है। क्या इस जिम्मेदारी से मुझे कभी मुक्ति नहीं मिलेगी? उन्नकी आंखों से आंसू बह रहे थे और वह अपने मन की व्यथा कोसों दूर बैठे अपने आराध्य साईबाबा को सुनाए चला रहा था। वह रात दिन साईबाबा के दर्शन करने के लिये लालायति रहता था, पर अर्थाभाव सबसे बड़ी बाधा थी।

इसी साल उसकी विभागीय परीक्षा होने वाली थी। अगर वह इस परीक्षा में पास हो गया तो नौकरी पक्की हो जाएगी। सिर का कुछ बोझ हलका हो जायेगा। वह साईबाबा से परीक्षा में सफलता दिलाने की भी प्रार्थना करता था।

समय पर परीक्षा हो गयी। राघवदास की प्रार्थना सफल हो गयी। परिणाम सामने आया, तो वह परीक्षा अच्छे नम्बरों से पास हो गया। नौकरी पक्की हो गई और वेतन में वृद्धि भी हो गई।

राघवदास प्रसन्न हो गया उसे बड़ी राहत मिली। अब उसे इस बात का पूरा विश्वास हो गया कि वह साईबाबा के दर्शन अवश्य करवा देगा।

उसने अपना जीवन बड़ी कंजूसी के साथ यापन करना शुरू कर दिया। वह बड़ी किफायतसारी से काम लेने लगा। एक-एक पैसा वह बड़ी मेहनत मशकत के साथ बचा रहा था। वह शिरडी आने-जाने का खर्च इकट्ठा कर लेना चाहता था। वह साईबाबा का नित्य गुणगान करता और धुन लगाता था। राघवदास की इस लगन ने अपना रंग दिखलाया और उसके पास शिरडी आने-आने लायक रकम इकट्ठी हो गयी। उसने बड़ी श्रद्धा के साथ नारियल और मिश्री खरीदी। फिर पत्नी से कहा, "शिरडी चलेंगे।

पत्नी आश्चर्य से उसका मुंह देखने लगी।

“शिरडी...” उसे आश्चर्य हुआ।

“हां।” राघवदास ने कहा—“शिरडी चलकर वहां पर साईबाबा के दर्शन करेंगे।”

“दर्शन।”—पत्नी ने उदास स्वर में कहा, “मैं तो सोच रही थी कि तुम मुझे गहना बनवा दोगे।”

“अरी भागवान !” साईबाबा से बढ़कर गहना इस दुनिया में दूसरा नहीं है। तू चल तो सही।”

अपनी पत्नी को साथ लेकर राघवदास शिरडी के लिये खाना हो गया।

वह बराबर गुणगान करता अपनी यात्रा पर था। शिरडी में पांव रखते ही राघवदास को लगा जैसे वह चिन्ता मुक्त हो गया। उसे लग रहा था जैसे संसार का समस्त वैभव, समस्त सम्पदा, उसके पैरों पर आ गिरी है। वह अपने को बड़ा भाग्यवान मान रहा था।

वह शिरडी रात को पहुंचा था। सारी रात उसने सुबह होने के इंतजार में काट दी। वह सारी रात साईबाबा की महिमा ही गुणगान करता रहा। साईबाबा के प्रति उसकी श्रद्धा भक्ति देखकर श्रोतागण चकित थे। धीरे-धीरे सुबह का उजाला फैलने लगा। पति-पत्नी जल्दी से तैयार हो गए और नारियल और मिश्री लेकर साईबाबा के दर्शन के लिए चल पड़े। साईबाबा ने अपनी उसी सहज स्वाभाविक वात्सल्य भरी मुस्कान के साथ राघवदास और उसकी पत्नी का स्वागत किया और बोले—“आओ राघव, तुम्हें देखने के लिये मेरा मन बहुत बेचैन था। अच्छा हुआ कि तुम आ गए।”

राघवदास और उसकी पत्नी ने साईबाबा के चरण छुए और बड़ी श्रद्धा के साथ नारियल तथा मिश्री मेंट की। राघव और उसकी पत्नी हैरान थे कि बाबा को उनका नान कैसे मालूम हो गया ? शिरडी में पहली बार आए थे और जीवन में पहली बार बाबा के दर्शन कर पाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था।

“बैठो राघवदास...बैठो।” साईबाबा ने उनके सिर पर हाथ फेरकर आशीर्वाद देते हुए कहा, “तुम लोग इतने परेशान क्यों हो ? आज तुमने पहली बार देखा है, लेकिन फिर भी तुम मुझे पहचानते थे। ठीक इसी तरह

मैं भी तुमसे न जाने कब से परिचित हूँ। मैं तुम दोनों को वर्षों से जानता-पहचानता हूँ।”

राघवदास और राधा की खुशी का कोई ठिकाना न था। वह प्रसन्नता के कारण बहुत गद्गद् हो गये।

बाबा के शिष्य उनके पास ही बैठे थे। बाबा ने उनकी ओर देखकर कहा, “आज हम चाय पियेंगे। चाय बनवाइए।”

राघवदास भाव-विभोर होकर बाबा के चरणों से लिपट गया और रुंधे स्वर में बोला—“बाबा, आप तो अन्तर्यामी हैं। आज आपके दर्शन कर मुझे सब कुछ मिल गया। मुझे अब किसी भी वस्तु को पाने की कामना नहीं रही।”

“ओ राघवदास, इस संसार में तुम जैसे लोग उंगलियों पर गिने जा सकते हैं। मेरे मन में ऐसे लोगों के लिए हमेशा जगह रही है। अब तुम जब भी शिरडी आना चाहो आ जाना।”

तभी शिष्य चाय लेकर आ गए। साईबाबा ने अपने हाथ से राघवदास और राधा को चाय पिला दी।

राघवदास का लाया हुआ नारियल और मिश्री साईबाबा ने वहां बैठे भक्तों को बांट दी। राघवदास और राधा को प्रसाद देने के बाद बाबा ने अपनी जेब से दो रुपये निकाले। तब उन्होंने एक रुपया राघवदास को और एक रुपया राधा को दे दिया और फिर हंसते हुए बोले “इन रुपयों को तुम अपने पूजाघर में अलग-अलग रख देना। इनको खोना मत। मैंने पहले भी तुम्हें दो रुपये दे दिए थे, लेकिन तुमने खो दिए। अगर वे रुपए न खोए होते तो तुम्हें कोई कष्ट न होता। अब इनको संभाल कर रखना।”

राघवदास और राधा दोनों ने रुपए संभालकर रख लिए और साईबाबा को प्रणाम कर चल पड़े।

द्वारिका मस्जिद से बाहर आते ही राघवदास और राधा को अचानक याद आया बाबा ने कहा था कि मैंने तुम्हें पहले भी दो रुपये दिए थे, लेकिन तुमने खो दिए। बाबा के दर्शन तो आज पहली बार किए हैं। फिर बाबा ने उन्हें दो रुपये कब दिए? उन्होंने एक-दूसरे से पूछा। दो रुपयों वाली बात उनकी समझ में न आ रही बतलायी।

घर आकर राघवदास ने अपने माता-पिता को शिरडी की सारी कहानी

सुनाने के बाद दो रुपये वाली बात भी कही।

तब रुपयों की बात सुनकर राघवदास के माता-पिता की आंखों में आंसू आ गए। पिता ने कहा, “साईबाबा ने सच ही कहा है। आज से कई साल पहले मन्दिर में एक महात्मा आए थे। मन्दिर में थोड़े ही दिन ठहरे थे। यह उस समय की बात है। जब तुम बहुत छोटे थे। मैं उन महात्माजी के पास जरूर जाया करता था। उनके प्रवचन सुना करता था। लोग उन्हें भोले बाबा कहकर पुकारते थे। एक बार मुझे और तुम्हारी मां को उन्होंने चांदी का एक-एक रुपया दिया था और कहा था कि इन रुपयों को अपने पूजाघर में रख देना। तब कई साल तक हम उन रुपयों की पूजा करते रहे और हमारे घर में धन आता रहा। तब हमें किसी भी चीज की कमी नहीं रही। पर मेरी बुद्धि भ्रष्ट हो गई थी। मैं ईश्वर को भूल गया। पूजा-पाठ करना भी छोड़ दिया।”

“दीवाली के दिन मैंने देखा तो दोनों रुपए गायब थे। उन रुपयों के गुम होते ही हमारे घर पर जैसे शनि की क्रूर दृष्टि पड़ गई। व्यापार में घाटा होने लगा। मकान, दुकान, सब बिक गया। हमें गरीबी के दिन देखना पड़ गये।”

तब राघवदास ने दोनों रुपये निकालकर अपने पिता को दे दिए। बार-बार उन रुपयों को उन्होंने माथे से लगाया, चूमा और बिलख-बिलख कर रोने लगे। साईबाबा के आशीर्वाद से उस दिन से राघवदास परिवार के दिन बदलने लगे। उसे आफिस में एक ऊंचा पद मिल गया। वह हर समय साईबाबा के दर्शन करने जाता था। साईबाबा के आशीर्वाद से उसके परिवार की मान-प्रतिष्ठा, सुख समृद्धि फिर वापस आ गयी थी।

अदृश्य चोर

शिरडी में ही एक वृद्धा जानकी रहती थी, उसकी जीविका का कोई साधन न था। वह बड़ी कठिनाई से भिक्षा मांगकर अपना गुजारा करती

थी, उसकी एक लड़की भी थी, वह बड़ी हो रही थी, जानकी को उसके विवाह की बहुत चिंता थी। उसके विवाह के लिए भी उसने बड़े दुःख उठाकर कुछ सम्पत्ति एकत्र की थी।

उसका घर एक टूटी-फूटी झोपड़ी के रूप में था, यह झोपड़ी एकान्त में बनी हुई थी। किसी प्रकार उस वृद्धा ने अपनी लड़की का विवाह तय कर दिया और उसके विवाह के लिए आवश्यक जेवर अपनी हैसियत के अनुसार ले आयी।

दो दिन बाद ही विवाह का दिन निश्चित था। वृद्धा जानकी निश्चित थी कि उसका बहुत बड़ा भार उतर जाने वाला था। इस प्रकार वह गहरी नींद में सो गई कि होश न रहा। जब वह उठी तो उसके होश उड़ गए। उसकी झोपड़ी का पिछला भाग टूटा हुआ था। साथ ही झोपड़ी का सारा सामान बिखरा हुआ था।

जानकी अपनी लड़की के विवाह के लिए लाये गए सब जेवर गायब देखकर अपना सिर पीटकर रोने लगी। उसका रोना-पीटना सुनकर पास-पड़ोस के लोग आ गये और उसके प्रति सहानुभूति प्रकट करने लगे। कुछ लोगों ने उसे सलाह दी कि वह पुलिस में जाकर रिपोर्ट लिखा दे। तभी एक व्यक्ति ने कहा कि वह साईं बाबा के पास चली जाये। वह उसका अवश्य कुछ न उपकार करेंगे।

जानकी रोती पीटती द्वारिका मस्जिद में गई। वहां साईं बाबा अपने भक्तों के साथ बैठे हुए थे।

जानकी उनके पैरों पर गिर पड़ी और उसने रो-रो कर अपना सारा हाल कहा।

साईं बाबा उसकी बात सुनकर बेतरह हंसने लगे।

शिष्यों को साईं बाबा के इस व्यवहार पर बड़ा आश्चर्य हुआ।

कहां बेचारी बुढ़िया रोती कलपती उनके पास आयी थी और साईं बाबा उसका उपहास उड़ा रहे हैं।

साईं बाबा उसी तरह हंसते रहे और जब उनकी हंसी खत्म हुई तो लोगों ने आश्चर्य से देखा कि काला कलूटा, नाटे कद का आदमी दोनों हाथ बांधे चला आ रहा है वह सीधे साईं बाबा के पास आया और उसने उनके चरणों में बगल में दबाकर रखी हुई एक छोटी सी पोटली रख दी।

पोटली रखकर वह एक ओर खड़ा हो गया ।

साईबाबा ने उसे घूर कर देखा और कहा—“जाता क्यों नहीं है ? चला जा ?”

उनकी फटकार सुनकर वह वहां से चला गया ।

साई बाबा ने तब जानकी से कहा—“ले अपना यह सामान ।”

बुढ़िया ने देखा कि उस पोटली में उसके सारे जेवर रखे हुए थे ।

अपने जेवर पाकर गद्गद हो गई । उसने साई बाबा को बहुत-बहुत आशीर्वाद दिया । आस-पास बैठे लोग यह देखकर चकित थे ।

जानकी लौटकर घर आ गई ।

ठीक समय पर उसकी कन्या का विवाह कुशलता से हो गया ।

यह सब साई बाबा का चमत्कार जानकर लोगों के मन में साई बाबा के प्रति और श्रद्धा उत्पन्न हो गई ।

विवाह के दो-चार दिन बाद ही लोगों ने देखा कि वह काला-कलूटा आदमी गांव के किनारे गंदे पानी में मरा पड़ा है । शायद उसे अपने कर्म का फल मिल गया था ।

विवाह के बाद जानकी भी साई बाबा की भक्त हो गई । अब वह भी नियम-पूर्वक साई बाबा के दर्शन करने के लिए द्वारिका मस्जिद जाने लगी ।

प्रेत की आत्मा

वह गांव तीर्थहल्ली के आगे था—वीहड़ जंगलों के बीच । अनगिनत पहाड़ियों से घिरा । ऐसी दुर्गम जगह वैसे गांवों के हिसाब से यह खासा बड़ा था, यहां तक कि इस गांव में डाकघर भी था और पोस्टमास्टर भी । रोज औसतन आने-जाने वाले कुल जमा दस पत्र रहते होंगे । डाक विभाग को ऐसी जगह काम करने के लिए आदमी बड़ी मुश्किल से मिलते हैं । कुछ साल पहले विभाग ने यहां कोयंबतूर से आये युवा नरसिहन् को भेजा

था। गांव भीतरी इलाके में होने से उसे थोड़ा-सा भत्ता भी मिलता। नरसिंहन युवा था और भत्ते को देख कर राजी हो गया। पहले वह गांव में अकेला आया, पत्नी से कहा कि घर मिलते ही उसे लिवा ले जायेगा।

ऐसे गांव में पोस्टमास्टर का आना वाइसरॉय के आने जैसा है। उसके आने से गांव वालों में काफी हलचल हो गयी, जिस दिन नरसिंहन ने यहां का काम संभाला, तकरीबन सारे गांव ने उसे देखा।

घर के लिए नरसिंहन को ज्यादा प्रयास नहीं करना पड़ा। पहले वाले पोस्टमास्टर ने ऐसी जगह ले रखी थी जो घर और दफ्तर दोनों का काम देती थी, मकान भी क्या? बस सिर पर एक छत थी। मकान मालिक को सिर्फ इसके किराये से वास्ता था, दुरुस्ती का जिम्मा उसने छिटक दिया था। पिछले पोस्टमास्टर ने मकान छोड़ना चाहा, पर दूसरा मिला नहीं। नरसिंहन ने देखा कि घर पसंद न हो तो खुले में रहना पड़ेगा, उसने घर में रहना बेहतर समझा। शाम को गांव के बुजुर्गों से बातचीत के दौरान नरसिंहन ने कहा कि सात-आठ दिन में वह पत्नी को ले आयेगा, उसे बच्चा होने वाला था, और एक नौकरानी की जरूरत होगी। बच्चे की बात को सुन कर एक आदमी चौंका, “बच्चा होने वाला है?”

“हां,” नरसिंहन ने कहा और सामने वाले का विशिष्ट स्वर सुन कर पूछा, “पर आप इस तरह से क्यों पूछ रहे हैं?” आदमी एक पल रुका, फिर बोला, “ऐसी कोई बात नहीं। साफ सुनाई नहीं दिया, और कोई बात नहीं।”

बगल में बैठे आदमी ने कहा, “जच्चा के लिए यहां कोई प्रबंध नहीं है न अस्पताल, न कोई वैद्य, दवा-दारू के लिए भी हम सब लोग डेढ़ कोस दूर गांव में जाते हैं, वहां भी जो डाक्टर आता है, तीन माह से ज्यादा नहीं टिकता। अगर डाक्टर रहा भी तो उसे बुलाने के लिए सवारी नहीं मिलती, हां जो औरतें यहां पैदा हुई हैं और पत्नी हैं, उनकी जचगी यहीं होती है। पर भाभी जी मैदानी इलाके की हैं, उनको अकारण ही कष्ट होगा उसके पूछने का यही मतलब था।

बाद में वह व्यक्ति, जो होनेवाले बच्चे की बात सुन कर चौंका था, नरसिंहन के घर आया और उसके पास बैठकर बोला—“मैं आपसे कुछ कहना चाहता था, पर इतने लोगों के सामने कह नहीं पाया। मेरी मानें

तो भाभीजी को यहां मत लाइए।”

नरसिंहन ने पूछा, “क्यों?”

आंगंतुक ने उत्तर देना टाला। बहुत पूछने पर बोला, “आप परदेसी हैं। आपको यहां की बातों से क्या लेना-देना। बड़ी बात तो यह है कि भाभीजी जहां हैं, वहीं जचगी करायें और बच्चे को गोद में लेकर ही यहां पधारें।”

इस आदमी के मन में क्या है, नरसिंहन जानना चाहता था, पर पूछने से सकुचाया। बड़ी मुश्किल में था। पत्नी के अलावा उसका कोई न था। चाहे जो अमुविधा हो, जचगी यहीं करना जरूरी था। तो फिर पूछ कर क्या फायदा कि उसे क्यों न लाया जाये? सिर्फ डर का कारण समझेगा, न कि इलाज। पर फिर उसे बात का दूसरा पहलू नजर आया। अगर मर्ज पता चले तो इलाज भी मिल सकता है। अगर वह अनजान रहा और खतरा अचानक आया तो चेतावनी के बाद भी वह कुछ न कर सकेगा।

बोला, “आप मेरे भले के लिए ही मुझे इशारा कर रहे हैं, तो फिर आपको किस बात की झिझक है? बताइए, ताकि हो सके तो मैं कुछ उपाय कर सकूं।”

कुछ देर सोच कर आंगंतुक बोला, “साहब, इस गांव में जचगी में मरी औरत का भूत है, यह किसी को पता नहीं कि वह कब मरी थी? पर उसका भूत जरूर है, जब भी यहां जचगी होती है, लोग-बाग सहमे-सहमे रहते हैं। जचगी से लेकर नहावन होकर सूतक निकलने तक हर पल खबरदार रहना पड़ता है। एक पल भी आप बेखबर हुए तो भूत जच्चा के कमर में जाकर बच्चे को मार देता है और मां को हटा कर उसकी जगह उसी की शक्ल-सूरत लेकर लेट जाता है, उस आदमी के साथ एक-दो महीने रह कर भूत चला जाता है। इसी कारण गांव के बहुत से लोग जचगी के समय औरतों को दूसरे गांव भेज देते हैं, यहां रखने का खतरा कौन मोल ले! इसीलिए मैंने आपको चेताया। जब हम लोग ही अपनी बहू-बेटियों को बाहर भेजते हैं तो आप, जो इस बीहड़ में नये हैं, क्यों भाभीजी को यहां ला रहे हैं? वे जहां हैं, अच्छी भली वही रहें, यहां जचगी करवाने का खतरा क्यों उठायें? कुछ हो गया तो बड़ी अनहोनी

होगी, मैं उम्न में आपसे बड़ा हूँ, आप नौजवान हैं, इसलिए बिना मांगी सलाह दी। माफ़ कर देना। पर मैं सिर्फ़ आपका भला चाहता हूँ।”

नरसिंहन् पढ़ा-लिखा था। उसे भूत-प्रेत में विश्वास न था। गांव छोटा-सा था, और पहाड़ियों से घिरा। कोई मित्र-मंडली न थी। यहां के सूतक के रिवाजों का ज्ञान उसे न था, और फिर उसने कल्पना की कि इस कहानी का उसकी पत्नी पर क्या असर पड़ेगा। नरसिंहन खुद को भले समझा ले, पर क्या वह ऐसा कर सकेगी? काफी समय तक नरसिंहन यह सब सोचता रहा और आगंतुक जब चला गया, तो उसे एक नया अकेलापन महसूस हुआ। देर तक उसे नींद नहीं आयी और जब आयी भी तो गहरी नहीं आयी, उसे भूत-प्रेत, बलि और कत्ल के सपने दिखाई देते रहे, अंतिम सपना जब टूटा, तो सवेरा हो चुका था और नरसिंहन को राहत मिली कि रात बीत चुकी थी।

अगले दिन नरसिंहन ने बीबी को पत्र लिखा कि जचंगी के लिए यह जगह अच्छी नहीं, बच्चा होने के बाद ही वह यहां आये।

उसका जवाब आया, ‘अगर गांव में परेशानी है तो वहां आपकी देख-भाल कौन करेगा? अगर मैं वहां रहूँ तो आपका खयाल रख सकूंगी और आप मेरा। अगर मैं यहां रही, तो किसी और को मेरा खयाल रखना पड़ेगा। बेहतर है कि मैं आपके साथ रहूँ।’

बात सच थी। जवाब पढ़ कर नरसिंहन अपनी पत्नी से और भी स्नेह करने लगा; पर इस भूत के किस्से का क्या किया जाये?

उसे सारी बात पत्नी से कहनी होगी, पर जो पति अपनी गर्भवती पत्नी को ऐसी कहानी सुनाये, उसे लोग क्या कहेंगे? और अगर वह कहानी नहीं बताता है, तो पत्नी को यहां न बुलाने का क्या कारण दे सकता है?

आखिर उसने उसे ले आने का निश्चय किया। साथ ही यह भी तय किया कि प्रसूता के कमरे में हर समय कोई-न-कोई होगा। सारे टोने-टोटके करवाये जायेंगे और भूतवाला किस्सा पत्नी के कानों में बह पड़ने नहीं देगा। इस तरह कुछ दिनों बाद वह पत्नी को ले आया।

नरसिंहन की पत्नी पुट्टलक्ष्मी इस पहाड़ी गांव को देख खिल उठी। “आपकी बदली तो एक बगीचे में हुई है” — उसने कहा — “मुझे बड़े शहर

अच्छे नहीं लगते। यहां सब कितना शांत है !”

पत्नी को जगह पसंद आयी जानकर नरसिंहन खुश हुआ। मकान के सामने का हिस्सा दफ्तर था, पीछे का निवास। घर के काम के लिए उसने नौकरानी रखवा ली।

जहां तक बन सके वह अपना काम भी घर के अंदर ही करता ताकि पत्नी के पास रह कर चौबीसों घंटे उसकी निगरानी कर सके। भूत की कहानीवाले मित्र के जरिये उस इलाके के जाने-माने मांत्रिक का बनाया एक ताबीज उसने मंगवाया और पत्नी के गद्दे में रख दिया ताकि उसे कोई बाधा न हो।

प्रसूति का दिन आ गया। नरसिंहन दरवाजे के बाहर खड़ा रहा, बेहद परेशान। अंदर पुट्टलक्ष्मी को प्रसूति की पीड़ा हो रही थी। जब शिशु की आवाज सुनी तो पुकार कर पूछा, “अच्छी तो हो ?”

जवाब में पुट्टलक्ष्मी कुछ बुदबुदायी, पर शब्द सुनाई नहीं दिये। अंदर से दाई बोली, “सब ठीक है, आप चिंता न करें।”

कुछ देर में पड़ोस के गांव से डॉक्टर आया। मां-बच्चे को देखा और दवा व पथ्य लिख कर चला गया।

शाम को पुट्टलक्ष्मी अंदर से बोली, “मैं ठीक हूं, आप परेशान न हों, बच्चा भी ठीक है।”

नरसिंहन की जान में जान आयी और उसने सोचा, चलो सब ठीक हो गया।

चीख कर उठी और बोली, “दरवाजा किसने खोला ?” नरसिंहन, जो पास ही सोया था, जाग गया, बत्ती जल रही थी। दरवाजा, जो अंदर से बंद किया गया था, खुला था। कमरे के अंदर कोई आवाज न थी।

नरसिंहन ने हलके से पुट्टलक्ष्मी को आवाज दी।

जवाब में आवाज आयी, “हां,।”

‘नरसिंहन को लगा कि यह आवाज उसकी पत्नी की नहीं है, पर शक उसने जाहिर नहीं किया और पूछा, “तुमको नींद तो बराबर आयी ?”

आवाज आयी, “हां, पर क्यों ?”—अभी भी नरसिंहन को लगा कि आवाज कुछ विचित्र सी है।

नरसिंहन का कलेजा पानी हुआ जा रहा था, पूरा साहस बटोर कर

उसने पूछा, “तुम्हारी आवाज बदली-बदली क्यों है है ?”

उत्तर मिला, “कैसी बदली-बदली ! आप आराम से सो जाइए । भला बच्चा होने पर किसी की आवाज हमेशा जैसी रह सकती है ?”

नरसिंहन ने दाई से कहा कि दरवाजा बंद कर ले, शायद हवा से खुल गया होगा । और वह खुद भी सो गया ।

सुबह उठ कर देखा तो बच्चा मरा हुआ था । पुट्टलक्ष्मी बहुत रोयी-कराही कि उसके पेट के बच्चे का यह हाल हो गया । दाई ने शिशु के शरीर को हमेशा की जगह दफना दिया । दस दिन हो जाने पर पुट्टलक्ष्मी नहायी और प्रसूति के कमरे से बाहर निकली । नरसिंहन की जिदगी दुःख से भर गयी ।

एक रात में उसकी आंल खुली, तो उसे लगा कि पत्नी बिस्तर पर नहीं है । उसने उसे आवाज भी लगायी, पर कोई जवाब नहीं मिला । हाथ से बिस्तर टटोला, बिस्तर खाली था, उठ कर उसने दिये की लौ बढ़ायी और पत्नी की आवाज लगाते हुए चौके और बैठक में उसे तलाशा । इस बीच वह बाहर के दरवाजे से अंदर आती दिखी और बोली, “आप क्यों घर भर में घूम रहे हैं ?”

“तुम कहाँ गयी थीं ।”—नरसिंहन ने पूछा ।

पुट्टलक्ष्मी बोली, “क्यों, बीवी को पल्लू से बांध कर रखना चाहते हो ? कोई निवटने भी न जाये ?”

नरसिंहन बोला, “तो पिछवाड़े जाना था । बाहर रास्ते की तरफ क्यों गयीं ? जानती नहीं, यहां शेर-चीते हैं ?”

पुट्टलक्ष्मी मुस्करा कर बोली, “तुम्हें डर लगता होगा, मुझे कोई डर नहीं । चेलिए सो जाइए ।”—और नरसिंहन को भीतर ले गयी ।

ठीक सात दिन के बाद रात के करीब उसी पहर नरसिंहन जागा, और उसे लगा कि पत्नी बिस्तर पर नहीं है । उसने आवाज लगायी, पर उसे कोई उत्तर न मिला । दिये की लौ बढ़ाकर घर भर ढूँढ़ा, वह नहीं मिली ।

आखिर वह बाहर की ओर से आती दिखी ।

नरसिंहन ने पूछा, “कहाँ गयी थीं ?”

पत्नी ने जवाब दिया, “घर को कैदखाना बनाना चाहते हो !”

नरसिंहन को बात चुभी और वह जाकर सो गया। पुट्टलक्ष्मी भी अपने बिस्तर पर लेट गयी।

नरसिंहन के दिमाग में एक नया डर उपजा। उसने अपनी पत्नी की हरकतों को बारीकी से देखना शुरू किया।

बच्चा होने के दिन जैसे पुट्टलक्ष्मी की आवाज कुछ अलग लगी थी, उसी तरह अब खुद पुट्टलक्ष्मी एक अलग हस्ती नजर आने लगी। ऐसा क्यों लगने लगा, इसका ठीक-ठीक कारण बताना उसके लिए संभव न था। पर यह खयाल निश्चित रूप से उसके मन में बस गया। जब नरसिंहन काफी देर तक पुट्टलक्ष्मी को देखता रहा, तो वह बोल पड़ी—“आप मुझे इस तरह क्यों देख रहे हैं, जैसे पहले कभी देखा न हो?”

नरसिंहन ने जवाब दिया, “ऐसी कोई बात नहीं।”

दूसरी बार जब ऐसा हुआ, तो उसने पूछा, “आप मुझे बारीकी से देख रहे हैं?”

नरसिंह ने कहा, “हां,”। पुट्टलक्ष्मी ने कहा, “क्या देखने से हर चीज समझ में आ जाती है?” और अजीब ढंग से मुस्करायी।

नरसिंहन संतुलन खोता जा रहा था, अगले दिन घूमने जाते समय उसकी भेंट उसी आदमी से हुई। वह नरसिंहन के पास आया और कुशलता पूछी।

फिर पूछा, “भाभीजी ठीक तो हैं?”

“हां।”

“बच्चा पैदा होते ही दूसरे दिन चल बसा।”

“हां और भाभीजी हमेशा की तरह हैं?”

“आपके पूछने का कारण जान सकता हूं?”

“माफ करना भाई साहब, मैं अनपढ़-गंवार ठहरा। मुझे आप जैसे शहरी लोगों की बातचीत का ढंग नहीं आता। और फिर हम लोग जो सोचते हैं, उसी में विश्वास करते हैं। मुझे कहना पड़ेगा कि मेरे मन में डर है। मैं इसीलिए पूछ रहा हूं कि कहीं ऐसा न हो कि जचकी के दिन शुद्धि बराबर हुई न हो। मैं तो सिर्फ इतना चाहता हूं कि आप सावधान रहें और भाभीजी को कुछ न हो। मैं क्या चाह सकता हूं।”

नरसिंहन ने कहा, “मैं सिर्फ इतना जानना चाहता हूं कि किस्से के

अनुसार आदमी को मालूम कैसे पड़ता है कि वह उसकी बीबी नहीं है ?”

उसने कहा, “साहब, किस्से में जाने से क्या फायदा ? लोग कहते हैं कि भूत उसी तरह रहता है, जैसे बीबी रहती थी । पर कभी-कभी आदमी को महसूस होता है कि वह कोई और है, वह किस तरह बदली है, कहना बड़ा मुश्किल होता है । कहते हैं, हफ्ते में एक दिन गांव के बाहर मंदिर में दिया जलाने जाती हैं ।

आदमी जाग कर पूछता है, ‘कहां गयी थीं ? जवाब मिलता है, ‘निबटने के लिए ।’

आदमी उस पर शक नहीं कर सकता या उसे छोड़ नहीं सकता । आखिर वह उसकी बीबी होती है । वस यही किस्सा है, पर इस सबका क्या फायदा ?”

नरसिंहन घबरा उठा । देहाती ने भूत की जो हरकतें बयान की तो उसे विश्वास हो गया कि उसके साथ पुट्टलक्ष्मी नहीं बल्कि किस्से में बताया हुआ भूत रह रहा है । बातचीत के दौरान उसके दिमाग में एक तूफान सा आया और वह घर लौटा । दिन भर उसने परिस्थिति के बारे में सोचा ।

पुट्टलक्ष्मी ने हमेशा की तरह खाना बनाया । हमेशा की तरह परोसा, हमेशा की तरह बात की, पर नरसिंहन को मानो किसी चीज की आवश्यकता थी ।

खाना खा कर दोनों सोने लगे । नरसिंहन ने अपना विस्तर हमेशा से कुछ दूर ही डाला ।

पुट्टलक्ष्मी ने इसका कारण पूछा, तो नरसिंहन ने जानबूझ कर अनुसुना कर दी और बोला, “क्या कुछ कहा ।”—पुट्टलक्ष्मी बोली, “आपका इस तरह दूर हटना मुझे मंजूर नहीं । आपको भले ही मेरी जरूरत न हो, मुझे आपकी जरूरत है ।”

बेचारे नरसिंहन को इन शब्दों में डरावने मतलब दिखायी दिये । उसे लगा कि संदेह के इस वातावरण को वह बहुत दिन बर्दाश्त नहीं कर पायेगा । उसे मालूम करना होगा कि यह पुट्टलक्ष्मी है या भूत और यह मालूम होने तक उसने भगवान का नाम लेकर हमेशा की तरह सामान्य बने रहने की सोची ।

कुछ दिनों बाद नरसिंहन रात में जागा तो पुट्टलक्ष्मी नदारद थी।

कौन-सा दिन है ? उसने इस बात पर गौर किया। ठीक सात दिनों के बाद उसने दरवाजा बंद करते समय नीचे नारियल की नरोटी रखी। रात में दरवाजा खोला गया और नरोटी आवाज के साथ टूटी।

नरसिंहन जागा और उसने पूछा, कौन है ?”

पुट्टलक्ष्मी ने कहा, “मैं हूँ, ज़रा बाहर हो कर आती हूँ।”

और थोड़ी देर के बाद आकर उसने दरवाजा बंद किया।

अगले हफ्ते नरसिंहन ने पुट्टलक्ष्मी की साड़ी से एक धागा निकाला और अपने पैर के अंगूठे से बांधा। उसने सोचा कि रात में वह उठेगी तो धागा खिंचेगा और मैं जाग जाऊंगा... धागा बांधते समय उसको लगा कि पत्नी सोयी हुई है, पर उसके धागा बांधते ही पुट्टलक्ष्मी ने आंख खोली और बोली, “क्या हुआ ? नरसिंहन झूठी हंसी हंस कर बोला, “यह हमारे प्यार का अटूट बंधन है।”

और इस तरह बात बदल दी। उस रात पुट्टलक्ष्मी न तो उठी, न ही बाहर गयी। उसके बाद लगा कि महीना भर वह घर में ही रही।

एक रात नरसिंहन की आंख खुली और उसने देखा कि पुट्टलक्ष्मी उठाकर कहीं जा रही है। वह क्या करती है, यह जानने के इरादे से उसने आंख थोड़ी-सी खुली रखी और लेटा रहा। पुट्टलक्ष्मी ने मिनट भर उसे देखा, फिर झुक कर चेहरे के पास लाकर विश्वास किया कि वह सोया हुआ तो है ? नरसिंहन को इस चेहरे की चमक अजीबोगरीब लगी। उसे लगा कि यह उसकी पत्नी नहीं, कोई बुरा सपना है। अब पुट्टलक्ष्मी का चेहरा उसके पास था, बड़ी मुश्किल से वह चीख रोक पाया। पुट्टलक्ष्मी मुआयना करने के बाद बिस्तर से उठी और चल दी। पल भर बाद दरवाजा खुलने की आवाज आयी। नरसिंहन पसीना-पसीना हो गया। जितना भय था उतनी ही उत्तेजना भी, पर उसने ठान ली कि वह इस स्त्री के पीछे-पीछे जा कर देखेगा कि वह कहां जाती है और क्या करती है। धीरे से उठ कर और हलके कदमों से जाकर उसने दरवाजा खोला और बाहर देखा। बाहर रास्ते पर पुट्टलक्ष्मी की आकृति दिखायी दी।

वह तेजी से गांव के बाहर दक्षिण दिशा में जा रही थी। फिर उसने पगडंडी की राह ली, जो ढलान पर खड़े ऊंचे पेड़ों के बीच से गुजरती थी।

आकृति का पीछा करते हुए वह मंदिर के पास पहुंचा और यहां उसकी हिम्मत जवाब देने लगी, पर उससे लौटा भी न गया। भगवान का नाम लेकर वह आगे बढ़ता गया। जब वह मंदिर के सामने कुछ अंतर पर था, भीतर राक्षस की भयंकर मूर्ति दिखायी दी।

मूर्ति के बाजू में एक दीया रखा था। पुट्टलक्ष्मी की आकृति मंदिर में गयी। राक्षस की मूर्ति को प्रणाम किया और फिर खड़े होकर दीये के ठीक ऊपर हाथ की मुट्ठी भींची, नरसिंहन ने देखा कि तेल की चमकती बूंदे दीये में गिर रही हैं, जैसे तेल में भिगोया स्पंज निचोड़ा गया हो। फिर पुट्टलक्ष्मी की आकृति ने जीभ से दीये की लौ बढ़ायी और रोशनी तेज की। उसके बाद मूर्ति को फिर से प्रणाम किया और उठकर बाहर आयी। इस बीच अंतजाने में नरसिंहन चल कर मंदिर के दरवाजे के बिलकुल पास पहुंच चुका था। हालांकि नरसिंहन साहसी नहीं था, फिर भी परिस्थिति ने उसमें हिम्मत ला दी। यह भूत ही था। उसी ने उसके वच्चे की हत्या की थी। उसने मन-ही-मन कहा, 'मैं इसे यों ही जाने नहीं दूंगा। मैं इसे रोक कर पूछूंगा कि उसने ऐसा क्यों किया ?'

जैसे ही आकृति मंदिर से निकली, नरसिंहन उसके ठीक सामने गया और भगवान का नाम लेते हुए आकृति को रोकने के लिए हाथ बढ़ा कर बोला, "तुम कौन हो, और क्यों तुमने मेरा घर उजाड़ा ?"

पुट्टलक्ष्मी की आकृति को उसे वहां देखकर आश्चर्य-सा हुआ।

नरसिंहन ने उसके मुंह से सुना, "हाय ! मुझे मालूम था कि तुम्हें शक हो चुका है, पर सोचा था तुमसे वच निकलूंगी। मुझे मेरी इच्छा पूरी करनी थी और लगा कि इसके लिए मुझे अच्छा साथी मिला है। अगर तुमने कुछ देर राह देखी होती तो मेरा समय पूरा हो जाता, पर ऐसा मेरा भाग्य कहां !" यह बात नहीं कि आकृति ने यह शब्द कहे हों, नरसिंहन को सुनने का आभास हुआ। इसके तुरंत बाद आकृति कुछ चमत्कारिक रूप में परिवर्तित हो गयी।

नरसिंहन के मुंह से चीख निकली, "हे राम !" और वह अचेत होकर गिर पड़ा।

उसे होश आया, तब दिन निकल चुका था। गांव के चार-पांच लोग इर्द-गिर्द खड़े उसे आवाज दे रहे थे। किसी ने पूछा, "यहां तुम राक्षस के

मंदिर के पास क्या कर रहे थे ?” दूसरे ने कहा, “सवाल-जवाब बाद में करना, पहले इसे इसके घर पहुंचाओ।” नरसिंहन ने देखा कि यह दूसरा व्यक्ति वही भूत की कहानी वाला देहाती था। लोगों ने उसे घर पहुंचाया। उस दिन नरसिंहन को बुखार चढ़ा। आठ दिन तक तेज बुखार और सन्निपात के बाद जब उसकी हालत और बिगड़ गयी तो उसके माता-पिता आ गये।

नरसिंहन अनर्गल प्रताप कतने लगा था।

उसका बहुतेरा इलाज कराया गया पर कुछ लाभ न हुआ। दिन पर दिन उसकी हालत गिरती गयी। एक दिन शाम को तो रोना पीटना मच गया। उसकी हालत पर मां धाड़े मार-मार कर रोने लगी।

रोने की आवाज सुनकर एक राहगीर रुक गया। उसने पूछा, “क्या बात है ?”

सब जानकर बोला, “इसे साईं बाबा के पास ले जाओ। जरूर ठीक हो जायेगा।”

मां ने भी साईं बाबा का नाम सुन रखा था। वह तैयार हो गयी।

नरसिंहन को शिरडी लाया गया।

साईं बाबा ने देखा। धूनी की एक चुटकी भभूत उन्होंने नरसिंहन के माथे पर मली। नरसिंहन बुदबुदाया—“जाता हूं। जाता हूं।”

“बस चला जा”—साईं बाबा ने गुस्से से फटकार कर कहा।

नरसिंहन कुछ देर में ठीक हो गया।

साईं बाला बोले—“जा ! अब कुछ न होगा।”

नरसिंहन वापस काम पर लग गया। उसकी पत्नी का भूत ठीक हो गया। तब वह भी बराबर हर माह के आखिरी गुरुवार को साईं बाबा के दर्शन के लिये आने लगा।

वह तीन साथी जिस कमरे में सोते थे। उसके साथ वाले कमरे की दीवार पर एक नर कंकाल लटका हुआ था। रात को जब भी हवा चलती, उसकी हड्डियां खट-खट करके हिलती थीं, दिन में उन हड्डियों को हिलाना पड़ता था, तब वह पंडितजी से अस्थि विद्या पढ़ते थे, उनसे मां-बाप चाहते थे कि वह एकाएक सभी विद्याओं में पारंगत हो जायें, उनकी आकांक्षा कहां तक सफल हुई, जो उन्हें जानते हैं उन्हें प्रभावित करना मूर्खता है, जो हमें नहीं जानते, उनसे यह भेद बना रहे, यही श्रेयस्कर है।

इस बीच बहुत दिन बीत गये। उस कमरे में कंकाल और उनके दिमाग से अस्थि विद्या न जाने कहां स्थानांतरित हो गयी! कुछ दिन पहले, रात उसे स्थानाभाव के कारण कंकाल वाले कमरे में सोना पड़ा। नयी जगह में नीद नहीं आ रही थी। करवट बदलते-बदलते गिरजे की घड़ी के घटों को सुन रहा था। इतने में, कोने में जो दीपक जल रहा था, वह बुझ गया। इससे पहले घर में दो-एक दुर्घटनाएं घट चुकी थीं, दीये के बुझते ही उसके मन में मृत्यु की बात आयी। ऐसा लगा जैसे एक दीपशिखा रात्रि के अंधकार में मिट गयी। प्रकृति के लिए यह वैसा ही है जैसे आदमी की छोटी-सी प्राण, शिखा, कभी दिन को कभी रात को, एकदम तिरोहित हो जाती है।

अचानक उस कंकाल की याद आयी। उसके जीवनकाल के बारे में कल्पना करने लगा, तो एकदम ऐसा प्रतीत हुआ कि कोई प्राणी अंधेरे में कमरे की दीवारों से मसहरी के चारों तरफ चक्कर काट रहा हो। उसके सांस लेने की आवाज आ रही थी। मानो वह कुछ ढूँढ़ रहा हो, जो उसे मिल नहीं रहा और जल्दी-जल्दी कमरे के चक्कर लगा रहा था। वह समझ गया कि यह सब उसके निद्राहीन उष्ण मस्तिष्क की कल्पना है, जो खून उसके मस्तिष्क में चल रहा था, वही उसे एक पदचाप की तरह सुनाई दे रहा था। फिर भी थोड़ा डर-सा लगा। इस डर को तोड़ने के लिए उसने कहा, “कौन?”

पदचाप मसहरी के पास आकर रुक गये और उत्तर सुनाई दिया, “मैं, अपने कंकाल को ढूँढ़ने आयी हूँ।”

रवीन्द्र ने सोचा, अपनी काल्पनिक सृष्टि से क्या डरना—तकिये को

पकड़कर चिरपरिचित स्वर में बोला, “इतनी रात गये बड़ा काम कर रही हो, भला इस कंकाल से तुम्हें क्या काम ?”

अंधेरे में मसहरी के बहुत निकट से आवाज आयी, “क्या कहते हो ! मेरे दिल की धड़कन तो उसी में थी। मेरे छब्बीस वर्ष का यौवन उसी के चारों ओर लिपटा था। क्या उसे एक बार देखने बेटी की इच्छा नहीं होगी ?”

रवीन्द्र ने तुरंत कहा, “हां, बात तो सही है। तुम तो जाकर ढूंढ़ो, मैं जरा सोने की कोशिश करता हूं।”

उसने कहा, “तुम अकेले हो क्या ? फिर थोड़ी देर बैठती हूं। थोड़ा गप्पें मारते हैं, पैंतीस साल पहले मैं भी मनुष्य के पास बैठकर, मनुष्य के साथ बातचीत करती थी। पैंतीस साल मैंने श्मशान की हवा के साथ चलते हुए बिताये हैं। आज तुम्हारे पास बैठकर फिर से इन्सानों की तरह बात करती हूं।”

उसे महसूस हुआ, मसहरी के पास बैठा। और कोई राह न देखकर थोड़े उत्साह से कहा, “अच्छा, जिससे मन प्रफुल्ल हो उठे, ऐसी कोई कहानी सुनाओ।”

तभी गिरजे की घड़ी में रात के दो बजे।

“जब मैं मनुष्य थी और छोटी थी, एक व्यक्ति से यम की तरह डरती थी। वह थे मेरे पति। मेरी हालत उस मछली की तरह थी, जो पकड़ी गयी है, जैसे कोई एक अपरिचित जीव कांटे में पिरोकर मुझे अपने स्निग्धमय जन्म-जलाशय से जबरदस्ती ले जा रहा है—उसके हाथों मेरा परित्राण नहीं है। विवाह के दो महीने बाद मेरे पति की मृत्यु हो गयी और मेरे सगे-संबंधियों ने मेरी ओर से बहुत शोक मनाया मेरे ससुर ने अनेक लक्षण मिलाये और सास से कहा, ‘शास्त्रानुसार यह विषकन्या है।’ यह बात मुझे स्पष्ट स्मरण है खुशी-खुशी मैं अपने माता-पिता के पास लौट आयी। फिर उमर बढ़ने लगी। लोग मुझसे छिपाना चाहते थे, पर मुझे पता था कि मुझ जैसी सुंदरी कम मिलती हैं, तुम्हें क्या लगता है ?”

“हो सकता है, पर मैंने तुम्हें कभी देखा नहीं।”—रवीन्द्र बोला।

“देखा नहीं क्यों ? मेरा वह कंकाल ! हा-हा-हा-हा ! मैं मजाक कर रही हूं। तुम्हें कैसे बताऊं कि चेहरे पर जहाँ दो गड्ढे हैं, वहाँ दो बड़ी-बड़ी

कजरी आंखें थी और लाल-लाल होंठों पर जो मंद मुस्कान थी, अनावृत्त दांतों के विकट हास्य के साथ उसकी कोई तुलना नहीं है उन दो सूखी हड्डियों पर इतना लावण्य, यौवन था कि वह कठोर कोमल परिपूर्णता प्रस्फुटित हो उठती थी, तुम्हें क्या बताऊं। हंसी भी आती है, गुस्सा भी आता है। उस समय के बड़े-बड़े डाक्टर विश्वास करते थे कि उस शरीर से अस्थिविद्या नहीं सीखी जा सकती। मैं जानती हूं एक डाक्टर ने अपने एक मित्र से मेरे बारे में बात करते हुए मुझे स्वर्णचंपक कहा था। उनका तात्पर्य यह था कि संसार में और सभी मनुष्य अस्थिविद्या और शरीरतत्त्व के दृष्टांत स्वरूप है, केवल मैं ही सौंदर्य रूपी फूल के समान थी। स्वर्णचंपक के अंदर भी एक कंकाल है। मैं जब चलती थी, मेरे अंग-अंग में सौंदर्य का हिल्लोर उठता, जैसे एक हीरे को हिलाने से उसकी चमक ओर बढ़ जाती है। कभी-कभी मैं बहुत देर तक अपने हाथों को निरखती—पृथ्वी के समस्त पुरुषत्व को मधुर लगाम लगा सकते थे, यह दो हाथ। जब सुभद्रा अर्जुन को लेकर बड़े आत्मविश्वास के साथ अपना विजयरथ तीनों लोकों के मध्य से ले गयी तो उसकी बांहें भी ऐसी ही सुडौल, उसके करतल ऐसे ही आरक्त और उसकी उंगलियां लावण्यशिखा के समान थीं।

“पर मेरे जैसे निर्लज्ज, निरावरण, निरामरण, चिरवृद्ध कंकाल ने मेरे खिलाफ तुम्हारे पास जब झूठी गवाही दी, तब मैं निरुपाय, निरुत्तर थी। इसलिए दुनिया में मुझे तुम पर सबसे अधिक क्रोध आता है। जी करता है, अपना सोलह वर्ष का जीवंत यौवनताप से तपा हुआ आरक्तिम रूप एक बार तुम्हारी आंखों के सामने खड़ा कर दूं, जो तुम्हारी आंखों की नींद उड़ा ले, जो तुम्हारी अस्थिविद्या को निकाल फेंके।”

रवीन्द्र ने कहा, “अगर तुम्हारा बदन होता, तो छूकर कहता कि अब उस विद्या का लेश मात्र अंश मेरे मस्तिष्क में नहीं है। और तुम्हारा संसार मोहने वाला पूर्णयौवन रूप रात के अंधकार के पट पर खिल उठा है। और अधिक कहने की आवश्यकता नहीं है।”

“मेरी कोई संगिनी न थी। बड़े भैया ने प्रतिज्ञा की थी कि विवाह नहीं करेंगे। घर में मैं अकेली थी। बाग में पेड़ के नीचे मैं अकेली बैठकर सोचती, सारी दुनिया मुझसे प्यार करती है, सारे तारे मुझे देख रहे हैं, हवा बार-बार आह भरकर पास से निकल जाती है और जो घास मेरे पैर को

छू रही है, अगर उसमें चेतना होती तो वह फिर से अचेत हो जाती। संसार के सभी युवा पुरुष उस घास में समाकर मेरे चरणों में समा रहे हैं, मैं ऐसा सोचती। न जाने क्यों हृदय में हूक-सी उठती थी।

“बड़े भैया के दोस्त शशिशेखर जब मेडिकल कालेज में थी पास होकर आये तो वे ही हमारे घर के डाक्टर बने। मैंने उन्हें सर्वप्रथम आड़ में होकर देखा था। बड़े भैया अजीब आदमी थे—दुनिया को अच्छी तरह से आंख खोलकर देखते नहीं थे। वह शायद सोचते थे कि यहां बहुत भीड़ है, इसलिए कोने में पड़े रहते।

“शशिशेखर उनका मित्र था। इसलिए बाहर के नवयुवकों में मैं उन्हीं को हमेशा देखती। और तब मैं संध्या के समय पुष्पतरु के नीचे साम्राज्ञी का आसन ग्रहण करती, तो संसार की समस्त पुरुषजाति शशिशेखर का रूप लेकर मेरे चरणों में होती। सुनते हो ? कैसा लग रहा है ?”

रवीन्द्र बोला—“काश में शशिशेखर होता तो कितना अच्छा होता !”

“पहले पूरी बात सुनो।”

“बरसांत के दिन थे। मुझे बुखार था। डाक्टर देखने आये थे। वही पहली मुलाकात थी। मैंने खिड़की की ओर मुंह फेरा हुआ था, जिससे संध्या की लाली मुंह पर पड़े और चेहरा विवर्ण न लगे। डाक्टर ने कमरे में आकर मेरे चेहरे की तरफ देखा, तब मैंने भी कल्पना में डाक्टर बनकर अपनी ओर देखा। बिखरे बाल माथे पर आये थे और लज्जा से झुकी हुई अंखियों के बड़े-बड़े पल्लव कपोलों पर छाया विस्तार कर रहे थे। नम्र मृदुल स्वर में डाक्टर ने कहा—‘एक बार नब्ज देखना पड़ेगा।’ मैंने चादर में से अपने मुडौल हाथ निकाल दिये। देखा तो लगा कि अगर नीचे कांच की चूड़ियां पहनती तो और अच्छी लगती। इससे पहले मैंने किसी डाक्टर को रोगी की नब्ज देखने में इतना हिचकिचाते हुए नहीं देखा था। कांपती हुई उंगलियों से उन्होंने मेरी नब्ज देखी, वह मेरा बुखार समझ गये, उनके हृदय की नब्ज का थोड़ा आभास हुआ, विश्वास नहीं होता ?” “और दो-चार बार रोग और आरोग्य के बाद मैंने देखा, मेरी संध्याकाल की मानस सभा में पुरुषों की संख्या कम होते-होते एक रह गयी थी। पृथ्वी जनशून्य होने लगी। जगत में एक डाक्टर और एक रोगी अवशिष्ट रह गये—“मैं चुपके से संध्या के समय एक वसंती रंग की धोती पहनती, बाल संवारकर

जूड़े में मोतिये का गजरा लगाकर एक शीशा लेकर बाग में जा बैठती।

“क्यों, अपने आपको निखरकर तृप्ति नहीं होती थी क्या ? सच में नहीं होती थी, पर मैं तो स्वयं को नहीं देखती थी। मैं तब एक से दो हो जाती। डाक्टर होकर मुग्ध नयन से अपने को देखती, प्यार करती, पर अंदर ही अंदर एक आह संध्या की पवन की तरह उमड़ती।

“तब से मैं अकेली नहीं रही। जब चलती नत नेत्र से देखती, पैर की उंगलियां धरती पर कैसे पड़ती हैं और सोचती कि ये पदक्षेप हमारे नये डाक्टर को कैसे लेंगे। दोपहर को जब चारों ओर सन्नाटा होता था; बस कभी-कभी एक चील की आवाज को छोड़कर, और बाहर खिलौने वाला ‘खिलौने ले लो, चूड़ी ले लो, पुकारकर चला जाता; मैं एक सफेद चादर बिछाकर लेट जाती। एक बांह कोमल बिछौने पर रखकर सोचती, किसी ने उसे देखा, अपने दो हाथों से उसे उठा लिया और उसके आरक्षित करतल पर चुंबन छोड़ धीरे-धीरे चला गया। थोड़े ही दिनों में डाक्टर ने हमारे ही घर के नीचे अपनी क्लीनिक खोली। तब मैं कभी-कभी उनसे हंसी-मजाक में औषध के बारे में, विष के बारे में, आदमी जल्दी कैसे मरता है, यह सब पूछती ? उनका मुंह खुलता जाता। उनकी बातों को सुनकर मृत्यु बड़ी ही परिचित लगने लगी। मैंने प्रेम और मृत्यु, इन्हीं दो को सारी दुनिया पर छाये देखा। कुछ दिनों से देख रही थी, डाक्टर बाबू बड़े अनमने से थे और मेरे सामने बहुत अप्रतिम। एक दिन देखा, वह काफी बन-ठनकर आये, बड़े मैया की गाड़ी उधार ली। बोले—‘रात को कहीं जाना है।’ मुझसे रहा नहीं गया। बड़े मैया के पास जाकर कुछ इधर-उधर की बातों के बाद पूछा, “मैया, आज डाक्टर बाबू गाड़ी लेकर कहां जा रहे हैं ?”

“बड़े मैया ने बड़े संक्षेप में कहा, मरने।”

“उन्होंने फिर कहा, ‘विवाह करने।’

“मैंने कहा, ‘सच !’—कहकर बहुत हंसने लगी।

“थोड़े दिन बाद सुना कि शादी करके डाक्टर बारह हजार रुपये पायेंगे, पर मुझसे यह सब छिपाकर मुझे इस तरह अपमानित करने का तात्पर्य क्या था ? मैंने क्या उन्हें कहा था कि ऐसा करने से मेरा दिल टूट जायेगा। पुरुषों का तनिक विश्वास नहीं करना चाहिए। संसार में मैंने एक ही पुरुष देखा था और पल भर में सारा ज्ञान प्राप्त कर लिया।

“डाक्टर रोगी देखकर संध्या से पूर्व आया तो मैंने बहुत हंसते हुए कहा, ‘तो डाक्टर महाशय, आज आपका विवाह है ?’

“मेरी प्रफुल्लता देखकर डाक्टर केवल अप्रतिम ही नहीं, बहुत विवश हो गये।

“मैंने पूछा, ‘वाजे-वाजे कहां है ?’

“सुनकर उन्होंने छोटी-सी आह भरी और कहा, ‘विवाह क्या आनंद का अवसर है ?’

“सुनकर मैं वेचैन हो गयी। ऐसा तो मैंने कभी नहीं सुना था। मैंने कहा, ‘ऐसा नहीं होगा ! वाजे चाहिए रोशनी चाहिए।’

“बड़े भैया के पीछे मैं इस तरह पड़ गया कि वह तभी उत्सव के आयोजन में लग गये।

“मैं बात करती रही, दुल्हन आयेगी तो क्या करूंगी। पूछा, ‘डाक्टर महाशय, क्या तब भी आप रोगियों की नब्ज दवाते फिरेंगे ?’

“ही-ही-ही-ही। आदमी के मन में क्या है दिखाई नहीं पड़ता, पर मैं दावे से कह सकती हूं, यह बातें डाक्टर को तीर की तरह चुभ रही थीं।

“लग्न काफी रात को थी। संध्या के समय डाक्टर छत पर बैठकर बड़े भैया के साथ शराब पी रहे थे। दोनों को यह आदत थी। थोड़ी ही देर में चांद निकला।

“मैं आकर हंसती हुई बोली, ‘डाक्टर महाशय, भूल गये हैं क्या ! यात्रा का समय हो गया है।’

“यहां एक छोटी-सी जानकारी दे देना आवश्यक है। इस बीच मैं चुपके से डाक्टर के यहां से थोड़ा-सा पाउडर ले आयी थी, और इसी का थोड़ा-सा भाग मैंने उसके ग्लास में डाल दिया था। उसी ने मुझे मिखाया था, आदमी क्या खाकर मर सकता है।

“डाक्टर ने अपना ग्लास खत्म किया और थोड़े भरिये हुए स्वर मेरी ओर मर्मांतक दृष्टिपात कर बोले, ‘फिर चलता हूं।’

“शहनाई बजने लगी। मैंने एक बनारसी साड़ी, जितने गहने संदूक में बंद थे, सबको निकालकर पहना। माँग में सिंदूर भरा। फिर उस बकुल वृक्ष के नीचे अपना बिछौना सजाया।

“रात बड़ी सुहावनी थी। चांदनी छाई हुई थी। सुप्त जगत की

क्लांति हरने वाली मंद-मंद पवन चल रही थी। जूही और मोतिया की सुगंध से वाग भरा हुआ था।

“शहनाई की आवाज जब दूर निकल गयी और चांदनी अंधकार बन गयी, यह तरु पल्लव और आकाश और अब तक नजर जाने वाली यह दुनिया जब माया की तरह मिटने लगी तो मैं आंख मूंदकर मुस्कायी।

“इच्छा थी कि लोग जब मुझे आकर देखेंगे, वह मुस्कान एक रंगीन नशे की तह होंठों पर लगी रहेगी। इच्छा थी, जब मैं अनंत रात्रि की सुहागरात में धीरे-धीरे प्रवेश करूं, तो यह मुस्कान भी साथ ले जाऊं। कहां वह सुहागरात। कहां मेरे विवाह का वेश। अपने अंदर से खट-खट की आवाज आयी तो देखा, तीन बालक मुझे लेकर अस्थिविद्या सीख रहे थे। हृदय में जहां दुःख-सुख घड़कते थे और यौवन की पंखुड़ियां, प्रतिदिन एक-एक करके प्रस्फुटित होती थीं, वहां बैत से मास्टर उन्हें हड्डियों के नाम सिखा रहे हैं। जिस अंतिम हंसी को मैं होंठ तक लायी थी क्या उसका कोई विह्वल तुमने देखा ?

रवीन्द्र हड़बड़ाकर उठ गया। उसे बड़ा डर लगा। तब से उसके दिमाग में कंकाल ही कंकाल बैठ गया। वह पागलों सी हरकतें करने लगा।

एक आदमी ने उससे साईबाबा की चर्चा की तो वह उनके पास आया।

उसने अपनी सारी मनोदशा बतलायी।

साईबाबा बोले, “हां, बेटे ! ऐसा हो जाता है। प्रत्येक सजीव और निर्जीव में जीवन रहता है। ब्रह्मतत्त्व होता है। चिंता न करो। तुम ठीक हो जाओगे।”

साईबाबा का सान्निध्य पाकर रवीन्द्र को बड़ी शांति मिली। उसे अपने भय से छुटकारा मिल गया। वह सकुशल रहने लगा।

तब साईबाबा को चित्र उसने अपने कमरे में लगा लिया। उस तस्वीर के दर्शन से उसे बड़ी शान्ति मिलती थी।

नवाब की नवाबी

शाम का धुंधल का जमीन पर उतरता आ रहा था। मस्जिद के कोने में साईबाबा अपनी धूनि के पास चुपचाप लेटे हुए थे, उनकी आंखें बन्द थीं और ऐसा लग रहा था मानो वह किसी गंभीर विचार में खोये हुए हैं कुछ देर के बाद काजी सिद्धिकी उनके पास आया और चुपचाप खड़ा हो गया पहले तो उसे कुछ बोलने का साहस न हुआ, पर अधिक देर वह मौन न रह सका, उसने धीरे से कहा—साईबाबा...?”

हाजी की आवाज सुनते ही साईबाबा ने अपनी आंखें खोल दीं और उसकी ओर देखा।

हाजी ने धीरे से कहा—“साईबाबा नवाब साहब आए हुए हैं और आप पर बहुत नाराज है।”

साईबाबा ने आश्चर्य से हाजी की ओर देखा फिर कहा—“भला नवाब साहब मुझ पर क्यों नाराज होंगे? मैंने तो उनका घोड़ा खोजकर उनको दिया था।”

हाजी ने धीरे से कहा—उन साहब की बात मैं नहीं कर रहा हूं यह बात जो उनके वालिद की है।

साईबाबा के माथे पर बल पड़ गये। उन्होंने मुस्कराकर कहा—“अच्छा-अच्छा आप बड़े नवाब साहब की बात कर रहे हैं।”

‘हां’ हाजी ने कहा—“मेरा मतलब उनसे ही है। उन्होंने आपको याद किया है।”

साईबाबा खिलखिलाकर हंस पड़े और बोले—“तुमने क्या जवाब दिया।”

हाजी ने कहा—“मैंने उनसे कह दिया है कि यह बात आपसे कह दूंगा।”

साईबाबा ने अपनी भौहों पर बल डालते हुए कहा—“तुमको मालूम है आज तक मैं कभी किसी नवाब के दरवाजे पर नहीं गया। तुम्हें नवाब साहब से कह देना चाहिए था कि खुद मेरे पास आयें।”

हाजी ने साईबाबा की बात पर कोई जवाब न दिया। साईबाबा ने कहा उनसे जाकर कह दो वह खुद मुझसे आकर मिल लें।

हाजी ने डरते हुए कहा—‘लेकिन वह इससे तो और नाराज हो जाएंगे आप नहीं जानते कि वह बहुत खूंखार आदमी हैं।’

साईबाबा ने गंभीर स्वर में कहा—जैसा मैं तुमसे कह रहा हूं वैसा करो।

हाजी साईबाबा की बात सुनकर सिर झुकाए चुपचाप चला गया। अगले दिन एक बहुत तेज तर्रार घोड़े पर बैठे हुए नवाब साहब द्वारिका माई मस्जिद के सामने आए। उनके हाथ में नवाबी हंटर था, जो उन दिनों नवाबों की शान शौकत समझा जाता था, और जिसके बल पर वह चाहे जिसकी चमड़ी उधेड़ दिया करते थे, जिसकी कोई सुनवाई नहीं होती थी, उनके साथ कुछ लठैत भी थे, जो समय आने पर नवाब साहब की मदद के लिए हमेशा तैयार रहते थे। अपने शानदार घोड़े से उतरने के बाद नवाब से अपना हंटर लहराया और कड़कती हुई आवाज में बोले—“कहां है साईबाबा का बच्चा अपने को बादशाह समझता है। मेरे बुलाने पर भी नहीं आया।”

साईबाबा की धूनी के पास बैठे हुए जमा शिष्य घबरा गए, नवाब साहब का उग्र रूप देखकर वह भय से कांप गए।

नवाब साहब घड़घड़ाते हुए मस्जिद में आ गए।

साईबाबा पर उसका कुछ भी प्रभाव न पड़ा वह अविचल, भाव से चुपचाप बैठे रह गए। नवाब साहब ने साईबाबा के पास आकर क्रोध से कहा—‘तेरी इतनी हिम्मत’।

साईबाबा हंस पड़े।

नवाब साहब ने ठीक उनके सामने आकर हंटर घुमाया और कहा—“तू अपने आपको क्या कहता है। बता तू हिन्दू या मुसलमान ?”

साईबाबा ने पूछा—“आप मुझे क्या समझते हैं।”

“मैं तेरे से पूछ रहा हूं।”

“तो मेरा जवाब है मैं न हिन्दू हूं न मुसलमान।”

“इसका मतलब है कि तू इंसान नहीं कुत्ता है। जिसका कोई मजहब नहीं होता वह कुत्ता ही कहलाता है।”

नवाब साहब का इतना कहना था कि साईबाबा के पांचों कुत्ते भौं-भौं कर चारों तरफ से उन पर टूट पड़े। नवाब साहब ने अपना हंटर चलाना

शुरू कर दिया, पर जब तक एक-दो कुत्तों ने उनको बेतरह काट लिया। यह देखकर उनके लठैत कुत्तों पर टूट पड़ने के लिए दौड़े, पर तभी वह सब बेतरह चीखने लगे, क्योंकि नवाब साहब का हंटर उनके हाथों से निकलकर अपने आप उन लठैतों की ही चमड़ी बेतरह उधेड़ने लगा।

यह देखकर नवाब साहब हक्काबक्का रह गए और तभी साईबाबा के कुत्ते भी उन पर टूट पड़े।

नवाब साहब के होश उड़ गए और वह घबराकर साईबाबा के पैरों पर गिर पड़े।

“मुझे बचाओ।”

साईबाबा ने हंसकर कहा—“तुम जैसे इंसान को भला कैसे बचा या जा सकता है।”

“नहीं-नहीं साईबाबा। मुझसे गलती हो गई और मुझे माफ करो।”

साईबाबा ने अपने हाथ का इशारा किया और उनके इशारा करते ही कुत्ते तथा हंटर की हरकतें बन्द हो गईं।

साईबाबा ने कहा—“नवाब साहब इंसान बनना ही सबसे बड़ा धर्म है और यही सबसे बड़ी परीक्षा है। मैं लोगों को हिन्दू या मुसलमान, ईसाई नहीं बनाना चाहता, सिर्फ उनको इंसान बनाना चाहता हूँ।”

नवाब साहब साईबाबा के सामने सिर झुकाए बैठे रह गए, उनके लठैतों का सिर भी श्रद्धा से झुका हुआ था।

साईबाबा के तमाम शिष्य आश्चर्य से यह सारा दृश्य देखते रह गए।

अगले दिन चारों ओर इस घटना की चर्चा फैल गई।

नवाब साहब भी साईबाबा के शिष्य बन गए। समय के साथ-साथ साईबाबा का शरीर भी ढलता जा रहा था। उन्होंने अपने क्रिया-कलापों के द्वारा छोटे से गांव शिरडी को मशहूर कर दिया था। वह छोटा सा गांव शिरडी बाहर से आने वाले सैकड़ों लोगों के लिए तीर्थ बन गया था। शिरडी का कायाकल्प भी हो गया था। आसपास धर्मशाला, अनाथालय आदि बन गए थे। सड़कें भी चौड़ी और मजबूत हो गई थीं। शिरडी में जीवन शान्त और सुखमय हो गया था। शिरडी का प्रत्येक व्यक्ति बड़े सुख और शांति के साथ रह रहा था। इतना सब होने के बाद भी साईबाबा में कोई परिवर्तन न आया था। वह उसी तरह फटे हाल रहते थे। सिर पर वही फटा

अंगोछा बंधा रहता था। बदन पर मामूली सी घोंती और फटा सा कुर्ता हमेशा पड़ा रहता था।

कभी वह पैसों को हाथ न लगाते थे। उनके श्रद्धालु जो कुछ उनको दे जाया करते थे, वह सब शिष्यों की देखरेख में ही रहता था। बाबा कभी भी कोई हिसाब-किताब न रखते थे।

वही मांगकर दो रोटी खाना उनका स्वभाव बन गया वह हमेशा रोटियां हाथ पर रखकर खाया करते थे। उनको देखकर कोई यह नहीं कह सकता था कि वह एक पहुंचे हुए महात्मा हैं। हमेशा उनके चेहरे पर बच्चों के समान भोली निश्चला मुस्कराहट खेलती रहती थी।

सदा वह ईंट को ही अपना सिरहाना बनाकर सोया करते थे। जमीन ही उनका बिस्तर थी और आसमान उनका चादर।

शिरडी के इस संत की प्रसिद्धि दूर-दूर तक फैल गई थी। इस कारण रोज सैकड़ों व्यक्ति दूर-दूर से उनके दर्शन के लिए शिरडी आने लगे थे।

द्वारिका मस्जिद में हमेशा मेला सा लगा रहता था। साईबाबा अपनी धूनी के पास पड़े रहते थे। कभी प्रसन्न हुए, तो उन्होंने किसी की भभूति दे दी या अपने आसन से निकालकर एक दो रुपए पकड़ा दिये, जिसको भी इतना कुछ मिल जाता था, मानो उसका जीवन बन जाता था।

साईबाबा मांगने पर किसी को कुछ न देते थे। किसी को भभूत या रुपया देना उनकी अपनी मर्जी पर निर्भर होता था।

बड़े-बड़े सेठ अक्सर खाली हाथ लौट जाते थे जबकि असहाय और गरीब लोगों पर उनकी कृपा हो जाया करती थी।

साईबाबा कब क्या कर बैठें ? इसका किसी को कोई अनुमान न रहता था। वह मनमौजी थे। उनके बारे में बहुत से किस्से मशहूर थे। प्रायः लोग बढ़ा-चढ़ाकर इन किस्सों का वर्णन किया करते थे।

साईबाबा को इन सब बातों से कोई मतलब नहीं रहता था। वह न तो किसी बात का खंडन करते थे और न समर्थन। चुपचाप अपनी जगह पर बठे रहा करते थे। उनको किसी से जैसे कोई मतलब न रहता था। बस सूखी दो रोटियां खाना ही उनका काम रहता था।

साईबाबा के भक्त सदा जमा रहते थे। वह अपने भक्तों की बातों को बड़े धैर्य और प्रेम के साथ सुना करते थे। प्रत्येक स्त्री को चाहे वह

जवान हो या बूढ़ी हमेशा मां कहकर पुकारते थे। छोटी लड़कियों को वह सदा बेटी का संबोधन देते थे।

अपने प्रवचन में अक्सर वह कहा करते थे—

कोई समय था जब मनुष्य बेसहारा था, उसके पास बहुत कम साधन थे। विज्ञान ने इतनी उन्नति नहीं की थी। आज मनुष्य प्रकृति पर विजय प्राप्त कर चुका है उसके पास हर तरह के साधन हैं। पहले जिन कार्यों में महीनों लग जाते थे, आज बटन दबाने से ही वह कार्य हो जाते हैं। नये-नये आविष्कारों, नयी-नयी मशीनों का निर्माण हो गया है। मनुष्य प्रकृति पर विजय प्राप्त करता जा रहा है। आज से शताब्दियों पहले सिकन्दर ने लगभग सारे संसार पर विजय प्राप्त की थी। उसने अपने रास्ते में पड़ने वाले प्रत्येक राज्य पर अपना अधिकार कर लिया था और अनेक राजाओं महा-राजाओं को अपना गुलाम बना लिया था। अपने देश से चलने से पहले सिकन्दर ने अपने गुरु अरस्तू से पूछा था कि उनके लिए क्या तोहफा लेकर आये। अरस्तू ने भारत से केवल एक साधु लाने को कहा था। सिकन्दर ने भारत पर विजय प्राप्त कर ली, तो अपने गुरु की बात याद आई। पास ही एक सन्त रहते थे। सिकन्दर ने उस सन्त को बुलाने के लिए अपने दूत को भेजा। सन्त ने आने से इन्कार कर दिया। सिकन्दर को बहुत क्रोध आया। स्वयं उस सन्त के पास गया। बोला—“क्या तुम जानते नहीं कि मैं कौन हूँ? तुमने मेरे सामने आने से इन्कार कैसे किया? मैं चाहूँ तो तुम्हें अभी तलवार के घाट उतार सकता हूँ।”

वह सन्त जरा भी न घबराया। बोला—“तुम मुझे मार सकते हो, पर यह शरीर मैं नहीं हूँ। यह तो आत्मा का अस्थायी बसेरा है और आत्मा कभी नहीं मरती है। उसे तुम कभी नहीं मार सकते हो।”

संत का उत्तर सुनकर सिकन्दर का सिर झुक गया। बड़े ही विनम्र स्वर में बोला—“मैंने दुनिया को जीता, पर आपने मुझे जीत लिया है।”

अतएव आज के मनुष्य की यह विजय भी सिकन्दर की जीत की तरह ही है। भौतिक पदार्थों को प्राप्त कर लेना ही जीत नहीं होती है। मनुष्य को कोई शक्ति के बल पर नहीं हराता। उसके अन्दर ही बैठे काम, क्रोध, लोभ, लालसा, झूठ, बेईमानी, दुराचार शत्रु हैं। मनुष्य चाहे कितने बड़े आविष्कार करे, कितनी प्रगति, पर यह शत्रु उसकी जीत को हार में बदल

देते हैं। यदि किसी चीज को प्राप्त कर उसकी प्यास बुझने की बजाय और बढ़ जाये तो उसे हम विजय कैसे कह सकते हैं ! क्या सिकन्दर की प्यास बुझी ? नेपोलियन को सन्तुष्टि मिली ? हिटलर को सन्तोष मिला ? सब अपनी लालसा की प्यास में ही डूब गए।

मेरे शिष्यों ! क्या कोई ऐसा रास्ता बता सकते हो कि जिस पर चल कर मनुष्य अपने इन शत्रुओं पर विजय प्राप्त कर सके ?

ऐसा केवल एक ही रास्ता है, वह है इंसान बनने का। तुम केवल सच्चे इंसान बनो। सच्चा इंसान सब धर्मों को मानने वाला होता है। वह किसी एक धर्म का नहीं होता है। इसीलिए मैं हिन्दू हूं, मुसलमान हूं, ईसाई हूं। मैं कुछ नहीं हूं, केवल इंसान हूं।

सत्य के विषय में उनका कहना था कि—

सत्य मनुष्यता का दूसरा आधार है। सत्य कभी ज्यादा देर तक छिप नहीं सकता। सत्य को चाहे हिमालय पहाड़ के नीचे भी दबा दिया जाय, वह ऊपर उभर ही आता है। सत्य का स्वभाव प्रकाश के समान है और प्रकाश को कोई छिपा नहीं सकता। चाहे कितना ही गहरा अन्धकार हो, प्रकाश की पतली-सी रेखा उसे चीर देती है। अंधेरा चाहे कितना गहरा क्यों न हो, वह प्रकाश के सामने नहीं टिक सकता। जीत प्रकाश की होती है। सत्य को कभी भी ज्यादा देर तक नहीं छिपाया जा सकता है। आज का हमारा जीवन झूठ पर थमा है। हमारी कथनी और करनी में बहुत अन्तर है। हम जो कहते हैं, वह करते नहीं। कहते कुछ हैं। करते कुछ हैं। यह सत्य नहीं है। सत्य यह है कि, जो हमारे मन में, हमारी जुवान पर हो वही हम करे। आज का जीवन इससे अलग चल रहा है। हम सोचते कुछ करते कुछ और हैं। हमारे जीवन की गाड़ी झूठ के पहियों पर तेजी से चल रही है। हम सारे संसार को उपदेश देते फिरते हैं, स्वयं के जीवन में झांक कर हम देखें तो हमारा सिर अपने आप पर ही शर्म से झुक जायेगा।

भ्रष्ट तरीके अपनाने की हमारी पहले से ही ज्यादा आदत है। जो व्यक्ति अपनी जिन्दगी में ईमानदार नहीं होते, वह सामाजिक जीवन को भी गन्दा कर देते हैं। यह असत्य ज्यादा देर तक नहीं टिक सकता। वैसे यह देखने से आया है कि संसार में सत्यवादी कष्ट भोगते हैं। भ्रष्ट असत्यवादी मौज मारते हैं। यह सिद्ध हो चुका है कि असत्य पानी के बुलबुले के

समान है, जो कुछ क्षण रहकर फिर गायब हो जाता है। केवल सत्य ही सदा टिका रहता है। संसार में आपका खोटा सिक्का कब तक चल सकता है ! लोग तभी तक उस खोटे सिक्के को स्वीकार करते हैं, जब तक उसके बारे में विश्वास रहता है कि वह खरा है। जब पता चले कि सिक्का खोटा है, तो कोई भी उसे लेने को तैयार नहीं होगा, वह सब जगह ठुकराया जायेगा। इसी तरह झूठ भी तभी तक चलता है, जब तक वह सच्चाई की आड़ में रहता है। जब झूठ का पता चल जाये, तो वह ताश के महल की तरह ढह जाता है। इसमें कोई शक नहीं है कि आज चारों तरफ झूठ फैला है। चारों तरफ झूठ का बोलबाला है। झूठे लोगों की ही पूजा होती है। झूठ बोलकर ही लोग लाखों कमा रहे हैं। समाज ने असत्य को स्वीकार नहीं किया है और सारा समाज असत्य से सत्य की खोज में लगा हुआ है। इसी कारण लाखों कमाने वाला भी समाज का मान नहीं पाता है।

‘सत्य’ हमारा सुदृढ़ आधार स्तम्भ है। अहिंसा एक व्रत है, वैसे ही सत्य भी सृष्टि का सिद्धान्त है। सिद्धान्त की परीक्षा इसी से हो सकती है कि अगर उसे हर समाज पर लागू किया जाए तो वह टिके। यदि झूठ नाम को दिया जाए, तो हर व्यक्ति झूठ ही बोलने लगे, तो यह संसार टिक नहीं सकता, जड़ें हिलकर रह जायेंगी। सत्य हमेशा टिकाऊ होता है। कहीं थोड़ी देर के लिए असत्य टिकता भी है, तो वह इसीलिए कि तब असत्य ने सत्य का धोखा दे रखा होता है। इसलिए जो असत्य हमें दिखाई देता है, वह सत्य का ही चलन है।

इसी प्रकार मनुष्य के कर्गों के विषय में वह कहते थे कि—

चोरी करना और चोरी न करने में क्या अंतर है, अर्थात् जो जितना है, जैसा है, जिसका है, उसी अवस्था में रहने देना। आज हमारी संस्कृति का आधार चोरी बना हुआ है। यद्यपि चोरी को सब बुरा कहते हैं और चोरी करने वाले को समाज में कोई स्थान नहीं मिलता है फिर भी यदि गहराई से देखा जाए तो हम सब चोर हैं। चोरी क्या है ? जो वस्तु दूसरे की है, उसे छल-कपट से हथिया लेना चोरी है। आज चोरी को घम माना जाता है और जो जितना बड़ा चोर होता है, वह उतना बड़ा पुरुष माना जाता है। आज के डाक्टर का उद्देश्य मरीजों को रोग से मुक्त करा देना नहीं, वरन् उसकी जेब को साफ करना है। एक वकील की बात याद होगी,

जिसने अपने वकील बेटे की इस बात के लिए डांटा था कि जिस मामले का उसने स्वयं बीस साल तक फैसला नहीं होने दिया था, उसे उसने ने एक महीने में क्यों तय करा दिया ? वह वकील पिछले बीस वर्षों से अपने उस मुक्किल की जेब साफ करता आ रहा था और उसी से उन्होंने अपने बेटे को वकालत भी पढ़ाई थी। अपने इस बेटे को नालायक मानते थे जिसने एक ही महीने में केस का फैसला कर कमाई का एक अच्छा जरिया बन्द कर दिया था। यदि कोई ईमानदार व्यक्ति एक बार पुलिस के पल्ले पड़ जाये तो वह कभी नहीं निकल सकता है। डाक्टर बढ़ रहे हैं तो बीमारियां उससे भी ज्यादा। मनुष्यता का आधार है सत्कर्म। जिस प्रकार अहिंसा और सत्य समाज की नींव को टिकाये हुये हैं, उसी प्रकार सत्कर्म भी आधार स्तम्भ है। यदि हम किसी दूसरे की सम्पत्ति पर नजर रखें, तो कोई दूसरा हमारी सम्पत्ति पर नजर रखेगा। भला कौन टिका रह सकता है, चोरी या डाका सार्वभौम धर्म नहीं बनाये जा सकते। कर्म ही सार्वभौम धर्म कहा जा सकता है। यदि सब कोई कर्म का जीवन बितायें, तो समाज ठीक ढंग से चलता है, यदि सब कोई चोरी, छीना-झपटी का रास्ता पकड़ें, तो भला यह समाज, यह दुनिया कितने दिनों चल सकती है।

कहानी है कि चन्द्रगुप्त के समय में ग्रीस का राजदूत मैगस्थनीज आया था। उसने लिखा था कि भारत में कोई अपने मकान में ताला नहीं लगाता, चोरी का कोई डर नहीं। भारत की संस्कृति इस शिखर पर इसलिये पहुंची थी कि क्योंकि यहां का देवता पैसा नहीं था, आज के युग का देवता पैसा है। आज हम जो कुछ भी करते हैं केवल पैसे की खातिर। पैसा आज हम एक की कमजोरी बनकर रह गया है। आज समाज की जो हालत हो गई है, जिस उलझन में हम हैं, उससे निकालने के लिए हमारा दृष्टिकोण हमें बदलना होगा। वैदिक संस्कृति के अनुसार पैसा एक आघन है, रास्ता है, पर मंजिल नहीं है।

जहां तक ब्रह्मचर्य का प्रश्न है साईबाबा का विचार था कि—

‘ब्रह्मचर्य’ शब्द ब्रह्म और चर्य को मिलाकर बना है—ब्रह्म बड़ा या विशाल और चर्य का अर्थ है विचरण—ब्रह्मचर्य का अर्थ है—ईश्वर में विचरण करना। यदि हम कभी एकान्त में बैठकर अपने अन्दर झांकें तो हम यह महसूस करेंगे कि हम बहुत ही बौने होकर रह गये हैं। हम स्वार्थी हो

गये हैं, हमारी सोच भी सीमित होकर रह गई है। किसी स्वार्थी व्यक्ति को देखकर हम कहते हैं—बड़ा ओछा कमीना है। जहाँ तक इंसान का सम्बन्ध है, ओछेपन और कमीनपन पर न उतरना, अपने को उदार बनाना—यही ब्रह्मचर्य है। ब्रह्मचर्य का दूसरा अर्थ भी है—इन्द्रियों का संयम करना। जो व्यक्ति महान बनना चाहता है, ईश्वर में विचरण करना चाहता है, उसके लिए आवश्यक है कि इन्द्रियों को विषयों में लिप्त न कर उनके वश में न हो, उन्हें ही अपने वश में करे। कामवासना पर नियन्त्रण रखना ब्रह्मचर्य का रूप है। आज का समाज वासना में डूबा है। दुराचार व्यभिचार है।

रामायण में वर्णन जाता है कि जब राम सीता को ढूँढ़ते-ढूँढ़ते सुग्रीव के पास पहुँचे तब सुग्रीव ने उन्हें कुछ जेवर दिखाए, जो सीता ने रावण द्वारा अपहरण के समय जमीन पर फेंके थे। राम ने लक्ष्मण को जेवर दिखाये और पूछा कि क्या ये सीता के जेवर हैं? लक्ष्मण ने कहा—मैं सीता माता के सिर, कान आदि के जेवर नहीं पहचानता हूँ क्योंकि मैं नित्य उनकी चरण-वन्दना ही किया करता था। नाहम् जानामि कुंडले... कहा था।

इस संसार को भोगने के लिए हम आये हैं, भागने के लिए नहीं। मालिक बनकर आए हैं, मुकाम बनकर नहीं। इसी भावना को ब्रह्मचर्य का नाम दिया गया है।

अपरिग्रह के विषय में वह अपने शिष्यों से कहते थे कि—

‘अपरिग्रह’ हमारी संस्कृति का मजबूत आधार स्तम्भ है। अपरिग्रह का मतलब है त्याग की भावना। संग्रह करना मानव स्वभाव है। हम हर वस्तु को, चाहे वह हमारे काम की हो या न हो, रखे रहना चाहते हैं। हम अपनी इच्छा से किसी वस्तु को छोड़ना नहीं चाहते। आपने ऐसे अनेक व्यक्ति देखे होंगे, जो सड़क पर पड़ी बेकार से बेकार वस्तु को भी उठाकर तुरन्त अपने थैले में रखते हैं। वैसे तो अपने जीवन को गुज़ारने के लिए मनुष्य को अनेक चीजों की जरूरत है अतएव उन चीजों को प्राप्त करना कोई बुरा भी नहीं है, लेकिन बिना जरूरत चीजों को इकट्ठा करना और जरूरत से ज्यादा इकट्ठा करना भी अच्छा नहीं है।

मनुष्य अपनी जरूरतों को कम से कम रखे और जितनी जरूरत हो उतने ही सामान इकट्ठा करे। लालसा की तरह ही आवश्यकताएँ भी

बढ़ती रहती हैं, लेकिन यदि मनुष्य चाहे तो वह बहुत-सी ऐसी फिजूल आवश्यकताओं की छोड़ सकता है, उन्हें सीमित कर सकता है। आज के समाज में जमाखोरी को अपराध माना जाता है और इसी जमाखोरी को रोकने के लिए कानून बना है। अनेक जमाखोरों को कड़ी सजा भी मिलती है। जीवन का नियम भोग करना नहीं है। जीवन का नियम छोड़ना है, त्यागना है। इसलिए ही त्याग, जीवन का नियम है। हम यह भूल जाते हैं कि जब हम इस संसार में आये थे, तो खाली हाथ और जब यहाँ से जायेंगे तो भी खाली हाथ। हर व्यक्ति को सब कुछ इसी संसार में छोड़ कर ही जाना पड़ता।

महानिर्वाण

समय बीतता गया। साईबाबा की प्रसिद्धि बढ़ती गयी और देखते-देखते ईस्वी सन् १९१८ आ गया। जनवरी बीती। सितम्बर का महीना आ गया था। दशहरे में कुछ ही दिन बाकी थे। एक लड़का मस्जिद में झाड़ू लगा रहा था। झाड़ू लगाने के बाद उसने वही ईंट उठाई। फिर बाबा के आसन की सफाई करने लगा। वह यही विशेष ईंट थी, जिसे बाबा हमेशा अपने साथ रखा करते थे, हाथ टिकाकर बैठा करते थे। उसी पर सिर टिकाकर सोया भी करते थे। अचानक वह ईंट उस बालक के हाथ से गिर पड़ी और टुकड़े हो गए। मस्जिद में उपस्थित भक्त गण स्तब्ध रह गये। उन्हें ईंट का टूटना अपशकुन सा लगा। साईबाबा ने उस टूटी ईंट को देखा। कुछ देर उसे एकटक देखते रहे और फिर मुस्कराकर बोले, “अब इस ईंट की कोई जरूरत नहीं। यह मेरी जीवन-संगिनी थी। अच्छा हुआ, एक कहानी खत्म हो गई।”

साईबाबा ने जिस गंभीरता और शान्त स्वर से इस बात को कहा था, उसे सुनकर उपस्थित सभी शिष्यों के चेहरों का रंग उड़ गया। मन आशंका से भर गये।

तभी २८ सितम्बर से बाबा को मामूली सा बुखार आ गया। दो-तीन दिन के लिए भोजन त्याग दिया।

“बाबा आपने खाना-पीना छोड़ दिया। आपका शरीर दिन-पर-दिन दुर्बल होता जा रहा है।”—भक्तों ने कहा।

“तुम चिन्ता न करो।—“बाबा ने भक्तों को आश्वस्त किया।

१५ अक्टूबर दोपहर का समय था। अचानक साईबाबा ने कहा, “आज तो बड़े जोर की भूख मालूम पड़ रही है।”

साईबाबा का खाना आ गया, पर तभी एक कुत्ता आ गया। बाबा ने रोटियां कुत्ते के सामने डाल दीं। कुत्ता सभी रोटी लेकर चला गया।

“बाबा, आपने खाना नहीं खाया।”

“कुत्ते ने पेट भर रोटी खा ली। मेरी आत्मा तृप्त हो गई।”—साई बाबा मुस्कराते हुए बोले।

बाबा की हालत लगातार बिगड़ती जा रही थी।

दोपहर के एक बजे का समय था। बाबा ने अपने पास बैठे भक्तों से कहा,—“तुम लोग जाकर खाना खा लो। थोड़ी देर के लिए मुझे अकेला छोड़ दो।”

भक्त चुपचाप उठकर चले गए।

साईबाबा पत्थर की चौकी पर बैठे थे। वह शान्त, बिना हिले-डुले बैठे थे। आंखें मुंदी हुई थीं। अचानक ठीक ढाई बजे वह चौकी से उठे अपनी घूनी के पास आ कर लेट गये। उन्होंने एक नजर अपने आस-पास खड़े अपने शिष्यों पर डाली, आशीर्वाद के लिए दोनों हाथ ऊपर उठाये और फिर हमेशा-हमेशा के लिए आंखें मूंद लीं। स्नेह सद्भाव, वात्सल्य और करुणा का प्रकाश बिखेरने वाला दीप बुझ गया। हिन्दू-मुस्लिम एकता का समर्थक चला गया। साईबाबा की आत्मा ब्रह्म-लीन हो गई। शिरडी में हाहाकार मच गया।

हजारों नरनारी दर्शन के लिये टूट पड़े।

उनका अंतिम संस्कार हिन्दू मुसलमान विधि से कर दिया गया। उनकी समाधि बन गयी। आज भी शिरडी में वह है और हजारों भक्त आज भी वहां जाकर बराबर अपनी श्रद्धा के फूल चढ़ाते हैं।

बोलो ! साईबाबा की जय !!!

श्री साई बाबा

भजन-संग्रह

साई बाबा चरित-गुणगान

पहले साई के चरणों में, अपना शीश नवाऊं मैं ।
कैसे शिरडी साई आए, सारा हाल सुनाऊं मैं ॥
कौन हैं माता, पिता कौन हैं; यह न किसी ने भी जाना ।
कहां जनम साई ने धारा, प्रश्न पहेली रहा बना ॥
कोई कहे अयोध्या के, ये रामचन्द्र भगवान हैं ।
कोई कहता साई बाबा, पवन-पुत्र हनुमान हैं ॥
कोई कहता मंगल मूर्ति, श्री गजानन हैं साई ।
कोई कहता गोकुल-मोहन देवकी नन्दन हैं साई ॥
शंकर समझ भक्त कई तो, बाबा को भजते रहते ।
कोई कह अवतार दत्त का, पूजा साई की करते ॥
कुछ भी मानो उनको तुम, पर साई हैं सच्चे भगवान ।
बड़े दयालु, दीनबंधु; कितनों को दिया जीवन दान ॥
कई बरस पहले की घटना, तुम्हें सुनाऊंगा मैं बात ।
किसी भाग्यशाली की, शिरडी में आई थी बारात ॥
आया साथ उसी के था, बालक एक बहुत सुन्दर ।
आया, आकर वहीं बस गया, पावन शिरडी किया नगर ॥
कई दिनों तक रहा भटकता, भिक्षा मांगी उसने दर-दर ।
और दिखाई ऐसी लीला, जग में जो हो गई अमर ॥
जैसे-जैसे उमर बढ़ी, बढ़ती ही वैसे गई शान ।
घर-घर होने लगा नगर में, साई बाबा का गुण गान ॥
दिग् दिगन्त में लगा गुंजने, फिर तो साईजी का नाम ।
दीन-दुखी की रक्षा करना, यही रहा बाबा का काम ॥
बाबा के चरणों में जाकर, जो कहता मैं हूं निर्धन ।
दया उसी पर होती उनकी, खुल जाते दुःख के बन्धन ॥

कभी किसी ने मांगी भिक्षा, दो बाबा मुझको सन्तान ।
 एवं अस्तु तब कहकर साईं, देते थे उसको वरदान ॥
 स्वयं दुःखी बाबा हो जाते, दीन-दुखीजन का लख हाल ।
 अन्तःकरण श्री साईं का, सागर जैसा रहा विशाल ॥
 भगत एक मद्रासी आया, घरका बहुत बड़ा धनवान ।
 माल खजाना बेहद उसका, केवल नहीं रही सन्तान ॥
 लगा मनाने साईं नाथ को, बाबा मुझ पर दया करो ।
 झंझा से झंकृत नैया को, तुम्हीं मेरी पार करो ॥
 कुलदीपक के बिना अंधेरा, छाया हुआ है घर में मेरे ।
 इसीलिए आया हूं बाबा, हो कर शरणागत तेरे ॥
 कुलदीपक के रे अभाव में, व्यर्थ है दौलत की माया ।
 आज भिखारी बन कर बाबा, शरण तुम्हारी मैं आया ॥
 दे दो मुझको पुत्र दान, मैं ऋणी रहूंगा जीवन भर ।
 और किसी की आश न मुझको, सिर्फ भरोसा है तुमपर ॥
 अनुनय-विनय बहुत की उसने, चरणों में धर कर शीश ।
 तब प्रसन्न होकर बाबा ने, दिया भक्त को यह आशीष ॥
 'अल्ला भला करेगा,' पुत्र जन्म हो तेरे घर ।
 कृपा रहेगी तुम पर उसकी और तेरे उस बालक पर ॥
 अब तक नहीं किसी ने पाया, साईं की कृपा का पार ।
 पुत्र रत्न दे मद्रासी को, धन्य किया उसका संसार ॥
 तन-मन से जो भजे उसी का, जग में होता है उद्धार ।
 सांच को आंच नहीं है कोई, सदा भूठ की होती हार ॥
 मैं हूं सदा सहारे उसके, सदा रहूंगा उसका दास ।
 साईं जैसा प्रभु मिला है, इतनी ही कम है क्या आस ॥
 मेरा भी दिन था इक ऐसा, मिलती नहीं मुझे थी रोटी ।
 तन पर कपड़ा दूर रहा था, शेष नहीं नन्हीं सी लंगोटी ॥
 सरिता सन्मुख होने पर भी, मैं प्यासा का प्यासा था ।
 दुर्दिन मेरा मेरे ऊपर, दावागनी बरसाता था ॥
 घरती के अतिरिक्त जगत में, मेरा कुछ अवलम्बन न था ।
 बना भिखारी मैं दुनिया में, दर-दर ठोकर खाता था ॥

ऐसे में एक मित्र मिला जो, परम भक्त साईं का था ।
 जंजालों से मुक्त, मगर इस; जगती में वह भी मुझ सा था ॥
 बाबा के दर्शन के खातिर, मिल दोनों ने किया विचार ।
 साईं जैसी दया मूर्ति के, दर्शन को हो गए तैयार ॥
 पावन शिरडी नगरी में जाकर, देखी मतवाली मूरति ।
 धन्य जनम हो गया कि हमने, जब देखी साईं की सूरति ॥
 जबसे किए हैं दर्शन हमने, दुःख सारा काफूर हो गया ।
 संकट सारे मिटे और, विपदाओंका हो अन्त गया ॥
 मान और सम्मान मिला, भिक्षा में हमको बाबा से ।
 प्रतिबिम्बित हो उठे जगतमें, हम साईं की आभा से ॥
 बाबा ने सम्मान दिया है, मान दिया इस जीवन में ।
 इसका ही सम्बल ले मैं, हंसता जाऊंगा जीवन में ॥
 साईं की लीला का मेरे मन पर ऐसा असर हुआ ।
 लगता, जगती के कण-कण में; जैसे हो वह भरा हुआ ॥
 'काशीराम' बाबा का भक्त, इस शिरडी में रहता था ।
 मैं साईं का, साईं मेरा, वह दुनिया से कहता था ॥
 सीकर स्वयं वस्त्र बेचता, ग्राम-नगर बाजारों में ।
 झंकृति उसकी हृद तन्त्री थी, साईं की झन्कारों से ॥
 स्तब्ध निशा थी, थे सोये, रजनी अंचल में चांद सितारे ।
 नहीं सूझता रहा हाथ का, हाथ तिमिर के मारे ॥
 वस्त्र बेचकर लौट रहा था, हाय ! हाट से काशी ।
 विचित्र बड़ा संयोग कि उस दिन, आता था वह एकाकी ॥
 घेर राह में खड़े हो गए; उसे कुटिल अन्यायी ।
 मारो काटो लूटो इसकी ही ध्वनी पड़ी सुनाई ॥
 लूट पीट कर उसे वहां से, कुटिल गये चम्पत हो ।
 आघातों से मर्माहत हो, उसने दी थी संज्ञा खो ॥
 बहुत देर तक पड़ा रहा वह, वहीं उसी हालत में ।
 जाने कब कुछ होश हो उठा, उसको किसी पलक में ॥
 अनजाने ही उसके मुंह से, निकल पड़ा था साईं ।
 जिसकी प्रतिध्वनि शिरडी में, बाबा को पड़ी सुनाई ॥

क्षुब्ध उठा हो मानस उनका, बाबा गए विकल हो ।
 लगता जैसे घटना सारी, घटी उन्हीं के सम्मुख हो ॥
 उन्मादी से इधर उधर तब, बाबा लगे भटकने ।
 सम्मुख चीजें जो भी आई, उनको लगे पटकने ॥
 और धधकते अंगारों में, बाबा ने कर डाला ।
 हुए सशंकित सभी वहां; लख ताण्डव नृत्य निराला ॥
 समझ गए सब लोग कि कोई भक्त पड़ा संकट में ।
 क्षुब्ध खड़े थे सभी वहां पर, पड़े हुए विस्मय में ॥
 उसे बचाने के ही खातिर, बाबा आज विकल में ।
 उसकी ही पीड़ा से पीड़ित, उनका अन्तस्तल है ॥
 इतने में ही विधि ने अपनी विचित्रता दिखलाई ।
 लख कर जिसको जनता की, श्रद्धा सरिता लहराई ॥
 लेकर संज्ञाहीन भक्त को, गाड़ी एक वहां आई ।
 सम्मुख अपने देख भक्त को, साई की आंखें भर आई ॥
 शान्त, धीर, गम्भीर सिन्धु सा, बाबा का अन्तस्तल ।
 आज न जाने क्यों रह-रह कर, हो जाता था चंचल ॥
 आज दया की मूर्ति स्वयं था, बना हुआ उपचारी ।
 और भक्त के लिए आज था, देव बना प्रतिहारी ॥
 आज भक्ति की विषम परीक्षा में, सफल हुआ था काशी ।
 उसके ही दर्शन के खातिर थे उमड़े नगर-निवासी ॥
 जव भी और जहां भी कोई, भक्त पड़े संकट में ।
 उसकी रक्षा करने बाबा जाते हैं पलभर में ॥
 युग-युग का है सत्य यह, नहीं कोई नई कहानी ।
 आपतग्रस्त भक्त जब होता, जाते खुद अन्तर्यामी ॥
 भेद-भाव से परे पुजारी, माता के थे साई ।
 जितने प्यारे हिन्दू-मुस्लिम, उतने ही थे सिक्ख ईसाई ॥
 भेद-भाव मन्दिर-मस्जिद का तोड़-फोड़ बाबा ने डाला ।
 राम रहीम सभी उनके थे, कृष्ण करीम अल्लाताला ॥
 घण्टे की प्रतिध्वनि से गूंजा, मस्जिद का कोना कोना ।
 मिले परस्पर हिन्दू मुस्लिम, प्यार बढ़ा दिन-दिन दूना ॥

तू तू कितना सुंदर, परिचय इस काया ने दिया ।
 ओर नीम कडुवाहट में भी, मीठापन बाबा ने भर दी ॥
 सबको स्नेह दिया साई ने, सबको समतल प्यार किया ।
 जो कुछ जिसने भी चाहा, बाबा ने उसको वही दिया ॥
 ऐसे स्नेह शील भाजन का, नाम सदा जो जपा करे ।
 पर्वत जैसा दुःख न क्यों हो, पल भर में वह दूर टरे ॥
 साई जैसा दाता हमने, अरे नहीं देखा कोई ।
 जिसके केवल दर्शन से ही, सारी विपदा दूर होई ॥
 तन में साई, मन से साई, साई-साई भजा करो ।
 अपने तन की सुधि-बुधि खोकर, सुधि उसकी तुम किया करो ॥
 जब तू अपनी सुधियां तजकर, बाबा की सुधि किया करेगा ।
 ओर रात-दिन बाबा, बाबा, बाबा ही तू रटा करेगा ॥
 तो बाबा को अरे ! विवश हो, सुधि तेरी लेनी ही होगी ।
 तेरी हर इच्छा बाबा को, पूरी ही करनी होगी ॥
 जंगल जंगल भटक न पागल, और ढूंढने बाबा को ।
 एक जगह केवल शिरडी में, तू पायगा बाबा को ॥
 धन्य जगत में प्राणी हैं वह, जिसने बाबा को पाया ।
 दुःख में सुख में कोई प्रहर हो, साई का ही गुण गाया ॥
 गिरें संकटों के पर्वत, चाहे बिजली ही टूट पड़े ।
 साई का ले नाम सदा तुम, सन्मुख सब के रहो अड़े ॥
 उस बूढ़े की सुन करामात, तुम हो जाओगे हैरान ।
 दंग रह गए सुन कर जिसको, जाने कितने चतुर सुजान ॥
 एक बार शिरडी में साधू, ढोंगी था कोई आया ।
 भोली-भाली नगर-- निवासी, जनता को था भ्रमाया ॥
 जड़ी-बूटियां उन्हें दिखा कर, करने लगा वहां भाषण ।
 कहने लगा सुनो श्रोतागण, घर मेरा है वृन्दावन ॥
 औषधि मेरे पास एक है और अजब है इसमें शक्ति ।
 इसके सेवन करने से ही, हो जाती दुःख से मुक्ति ॥
 अगर मुक्त होना चाहो तुम, संकट से बीमारी से ।
 तो है मेरा नम्र निवेदन, हर नर से औ हर नारी से ॥

लो खरीद तुम इसको इसकी सेवन विधियां है न्यारी ।
 यद्यपि तुच्छ वस्तु है यह, गुण उसके हैं अतिशय भारी ॥
 जो है संतति हीन यहां यदि, मेरी औषधि को खाये ।
 पुत्र-रत्न हो प्राप्त, अरे और व मुंह मागा फल पाये ॥
 औषध मेरी जो न खरीदे, जीवन भर पछतायेगा ।
 मुझ जैसा प्राणी शायद ही, अरे यहां आ पायेगा ॥
 दुनिया दो दिन का मेला है, मौज शोक तुम भी कर लो ।
 गर इससे मिलता है, सब कुछ, तुम भी इसको ले लो ॥
 हैरानी बढ़ती जनता की; लख इसकी कारस्तानी ।
 प्रमुदिन वह भी मन-ही मन था, लख लोगों की नादानी ॥
 खबर सुनाने बाबा को यह, गया दौड़कर सेवक एक ।
 सुनकर भूकुटी तनी और विस्मरण हो गया सभी-विवेक ॥
 हुक्म दिया सेवक को, सत्वर पकड़ दुष्ट को लाओ ।
 या शिरडी की सीमा से, कपटी को दूर भगाओ ॥
 मेरे रहते भोली-भाली, शिरडी की जनता को ।
 कौन नीच ऐसा जो, साहस करता है छलने को ॥
 पगभर में ही ऐसे ढोंगी, कपटी नीच लुटेरे को ।
 महानाश के महा गर्त में पहुंचा दूं जीवन भर को ।
 शनिक मिला आभास मदारी; क्रूर, कुटिल, अन्यायी को ।
 काल रचता है जब सिर पर, गुस्सा आया साईं को ॥
 पलभर में सब खेल बन्द कर; भागा सिर पर रखकर पेर ।
 सोच रहा था मन ही मन, भगवान नहीं है क्या अब खैर ॥
 सच है साईं जैसा दानी, मिल न सकेगा जग में ।
 अंश ईश का साईं बाबा, उन्हें न कुछ भी मुश्किल जग में ॥
 स्नेह, शील, सौजन्य आदि का, आभूषण धारण कर ।
 बढ़ता इस दुनिया ने जो भी, मानव-सेवा के पथ पर ॥
 वही जीत लेता है जगती के जन जन का अन्तस्थल ।
 उनकी एक उदासी ही जग, को कर देती है विव्हल ॥
 जब-जब जग में भार पाप का, बढ़ बढ़ जाता है ।
 उसे मिटाने के ही खातिर, अवतारी कोई आता है ॥

पाप और अन्याय सभी कुछ, इस जगती का हर के ।
 दूर भगा देता दुनिया के दानव को क्षण भर के ॥
 स्नेह सुधा की धार बरसने, लगती है दुनिया में ।
 गले परस्पर मिलने लगते, जन-जन है आपस में ॥
 ऐसे ही अवतारी साईं, मृत्युलोक में आकर ।
 समता का यह पाठ पढ़ाया, सबको अपना आप मिटाकर ॥
 नाम द्वारका मस्जिद का, रक्खा शिरडी में साईं ने ।
 तोप, पाय, सन्ताप मिटाया, जो कुछ आया साईं ने ॥
 सदा याद में मस्त राम की, बैठे रहते थे साईं ।
 पहर सदा ही राख नाम का, भजते रहते थे साईं ॥
 सूखी-रूखी ताजी ब्रासी, चाहे या हो पकवान ।
 सदा प्यार के भूखे साईं के खातिर थे सभी सामान ॥
 स्नेह और श्रद्धा से अपनी, जन जो कुछ दे जाते थे ।
 बड़े चाव से उस भोजन को, बाबा पावन करते थे ॥
 कभी-कभी मन बहलाने को, बाबा बाग में जाते थे ।
 प्रमुदित मन में निरख प्रकृति, छटा को देखा कहते थे ॥
 रंग-विरंगे पुष्प बाग के, मन्द-मन्द हिल डुल करके ।
 बीहड़ वीराने मन में भी स्नेह सलिल भर जाते थे ॥
 ऐसी सुमुधुर बेला में भी, दुःख आपत, विपदा के मारे ।
 अपने मन की व्यथा सुनाने, जन रहते बाबा को घेरे ॥
 सुनकर जिसकी करुण कथा को, नयन कमल भर आते थे ।
 दे विभूति हर व्यथा, शान्ति; उनके उर में भर देते थे ।
 जाने क्या अद्भुत, शक्ति; उस विभूति में होती थी ।
 जो धारण करते मस्तक पर, दुःख सारा हर लेती थी ।
 घन्य मनुज वे साक्षात् दर्शन, जो बाबा साईं के पाये ।
 घन्य कमल कर उनके जिनसे, चरण-कमल वे परसाये ॥
 काश निर्मय तुमको भी, साक्षात् साईं मिल जाता ।
 बरसों से उजड़ा चमन अपना, फिर से आज खिल जाता ॥
 गर पकड़ता मैं चरण श्री के, नही छोड़ता उम्र भर ।
 मना लेता मैं जरूर उनको, गर रुठते साईं मुझ पर ॥

आरती साईं बाबा की

आरती श्रीसाईं गुरुवर की, परमानन्द सदा सुरवर की ।
जाकी कृपा विपुल सुखकारी, दुःख, शोक, संकट, भयहारी ।
शिरडी में अवतार रचाया, चमत्कार से तत्त्व दिखाया ।
कितने भक्त चरण पर आये, वे सुखशांति निरंतर पाये ।
भाव धरै जो मनमें जैसा पावत अनुभव वो ही वैसा ।
गुरु की उदी लगावे तन को, समाधान लाभत उस मन को ।
साईं नाम सदा जो गावे, सो फल जग में शाश्वत पावे ।
गुरुवासर करि पूजा-सेवा, उस पर कृपा करत गुरुदेवा ।
राम, कृष्ण, हनुमान रूप में, दे दर्शन, जानत जो मन में ।
विविध धर्मके सेवक आते, दर्शन इच्छित फल पाते ।
जै बोलो साईं बाबा की, जै बोलो अवधूत गुरु की ।
साईंदास आरति को गायै, घर में बसि सुख, मंगल पावे ।

आरती

जय बाबा साईं, गुरु तू जय बाबा साईं ।
प्रेम आरति करिए, गुण तारा गाईं ।
तू माता तू पिता, गुरु तू प्राण सखा बंधु ।
तू चेतन की धारा, तू करुणासिन्धु ।
त्रिगुणात्मक मूर्ति, गुरु तू त्रिगुणात्मक मूर्ति ।
अनन्त मां तू व्यापक, दिव्य अमर ज्योति ।
तुम अक्षर घामी, गुरु तुम अक्षर घामी ।
पूरण ब्रह्म सनातन, तू अन्तरयामी ।
भक्तजनों के काजे, जन्म लियो जग में ।
नाम सुमरता तारु, दुःख हरो पल हक में ।
कुम कुम अक्षत पुष्प बधावा प्रणाम नित करिए ।
आओ सब माई, भजंता भवतरिए ॥ जया ॥

आरती

जय श्री साईं बाबा जय जय जय श्री साईं नाथा,
 मन वांछित फल पावे जो द्वारे आता ।
 तू ईसा तू अल्लाह राम प्रभु मेरे,
 कृष्ण दत्तात्रेय नानक नाम सभी तेरे ।
 तू करता, दुःख हरता, अंग संग तू सबके,
 रहम नजर कर साईं द्वार पड़े कब के ।
 मात पिता तू साईं बन्धु तू भ्राता,
 हिन्दू सिक्ख ईसाई मुस्लिम से नाता ।
 शिरडी में सब तीर्थ जो खोजे पाये,
 पावे सकल पदार्थ जो साईं ध्याये ।
 तुम सुख के हो सागर तुम रक्षक मेरे,
 अपनी शरण में ले लो हम बालक तेरे ।
 पालनहार तू दाता, तू सबका स्वामी,
 तन मन तेरे अर्पित हे अन्तर्यामी ।
 भक्तों का रखवाला संतों का प्यारा,
 दासजनों का सहारा तू अपरम्पारा ।
 मेहरवान मन मोहन तू शक्तिशाली,
 तेरी महिमा साईं है सबसे निराली ।
 मव में ज्योति जलाए आरती जो गाये,
 आनन्दमय हो जीवन सुख शांति पाये ।

जिसकी जबां पर हरदम रहता है नाम साईं का

जिसकी जबां पे हरदम रहता है नाम साईं का
 साईं सम्हाले बोझ उसके सारे जीवन का

बाबा सम्हाले बोझ उसके सारे जीवन का
 गये जनम के कर्मों का कुछ हिसाब तो होगा
 लगता है उनमें से कोई अच्छा भी होगा ।
 इसीलिए तो स्वेग साथ मिला है साई के चरणों का
 साई सम्हाले बोझ...

मतलब की ये दुनिया सारी,
 ये चिल्लाये क्यों ?
 सुख को बांट लो आपस में तू,
 यह कहना साई का ।
 साई सम्हाले बोझ उसके सारे जीवन का

श्री साई नाम सुमरन सुखदाई

श्री साईनाम सुमरन सुखदायी,
 साईनाम के दो अक्षर में, सब सुख शांति समाई ।
 श्री साई...

हिंदू, मुस्लिम, सिख ईसाई,
 सबको बाबा आस तुम्हारी ।
 आशीश देकर पावन कर दो,
 बड़ी है नाम की आस तुम्हारी ।

श्री साई नाम...

हरदम तुम हो मेरे ही साथी,
 दीन-हीन के एक ही नाथा ।
 साई नाथ की कृपा हो गई,
 पावन हो गई काया मेरी ।

साई नाम सुख...

गोपाल कहे क्या कमाल तेरी,
 पानी में तू जोत जलाया ।
 नाम न भूले तेरा कोई ।
 शिरडी वाले साई बाबा ।

साई नाम...

तू साई नाम जप ले प्राणी

तू साई नाम जप ले प्राणी, तेरी दो दिन की जिन्दगानी ।
 यह दुनिया है बहता पानी, तेरी दो दिन की जिन्दगानी ॥
 झूठी काया, झूठी माया, इनसे क्यों है नेह लगाया ।
 दुनिया है फानी, तेरी दो दिन की जिन्दगानी
 माता पिता यह बहन यह भ्राता,
 जीते जी इन से है तेरा नाता ।
 मौत है इक दिन आनी,
 तेरी दो दिन की जिन्दगानी ॥
 इस दुनिया में क्यों हैं तू आया,
 क्यों यह भेद है समझ ना पाया ।
 यह जिंदगी तेरी आनी जानी,
 और तेरी दो दिन की जिन्दगानी ॥
 जैसा यहां करेगा तू, वैसा वहां भरेगा तू ।
 कह गए हैं सब ग्यानी, तेरी दो दिन की जिन्दगानी ॥
 है अगर तुझे अमर हो जाना, साई राम को तुम अपनाता ।
 भज मन साई कहानी, तेरी दो दिन की है जिन्दगानी ॥

साईनाथ तेरे हजारों हाथ

तू ही फकीर, तू ही है राजा, तू ही है साईं, तू ही है बाबा
 साईनाथ तेरे हजारों हाथ, साईनाथ तेरे हजारों हाथ ।
 जिस जिसने-तेरा नाम लिया, तू हो लिया उसके साथ
 इत देखू तो तू लागे कन्हैया उत देखू तो दुर्गा मय्या ।
 नानक की मुस्कान है तुझ में, शाने मुहम्मद भी है मुख पर ॥
 राम नाम की है तू माला, गौतमवाला तुझ में उजाला ।
 नीम तेरी है मीठी छाया, बदले हर चोले की काया
 तेरा दर है दया का सागर, सब मजहब भरते हैं सागर ।
 पावन पारस तेरी आग, तेरा पत्थर कण कण राग ॥
 तेरा मंदिर सबका मदीना, जो भी आए सीखे जीना ।
 तू चाहे तों टल जाए घात, तू ही भोला तू ही नाथ ॥

ओ प्रभु तुम भक्तन के हितकारी

ओ प्रभु तुम भक्तन के हितकारी
 हिरण्यकशपु ने चाबुक मारी, प्रह्लाद भक्त ने नाम उच्चारि
 नरसिंह होकर देह पछाड़ी, भक्तन के रखवाले ॥
 मातृ वचन हिरदय में घरहो, बालक ध्रुव जब वन बनतप कीनो
 गरुड़ चढ़े प्रभु दरशन दीनो, ले बैकुण्ठ उतारी ॥
 द्रोगदी की लाज बध्नाई, गौतम नारी की विपदा टारी ।
 शक्ती की तुम महिमा गाई, भक्तन के सुखकारी ॥
 जो जन नाम तुम्हारा गाये, सो ही निश्चय पद पावै ।
 ब्रह्मानन्द गाके सुनाये, कीजियो भव जल पारी ॥

साईं नाथ तुम्हारे दरशन से

साईंनाथ तुम्हारे दरशन से,
दिल का मैल निकल ही गया ।
गुरुदेव तुम्हारे दरशन से,
मेरे मन का मैल निकल ही गया
सतसंग तुम्हारा अमृत है,
चाहे मस्त हुआ दिल जो मृत है ।
नहीं काल बहा सके जीव को,
यह जनम मरण दुख दूर हुआ ॥

साईं के दरस बिन

साईं के दरस बिन तरसें अखियां
जग से सभी उदासी अखियां
साईं के दरस बिन तरसे अखियां ।
आन बसो प्रभु व्याकुल मन में
भरो चेतना साईं जन-जन में
माया ममता ने घेरा डाला
दूर करो इसे साईं सांवरिया
दीजो दर्शन साईं सांवरिया
साईं के दरस बिन तरसे अखियां ।

साईनाथ दया करना

साईनाथ दया करना इतनी,
नित नाम तुम्हारा याद करूं।
बिठा के तुम्हें मन मन्थर में,
दिव्य रूप मैं तुम्हारा निहारा करूं।
भर के नेत्र पात्रों में प्रेम का जल,
पद पंकज नाथ पखारा करूं।
मृदु मंजुल भावों की माना बना,
तेरी पूजा के साज संवारा करूं।

साईनाथ दया करना...

बनूं प्रेम पुजारी में तेरा प्रभु
तेरी आरती भव्य उतारा करूं।
तेरे नाम की माला हे साई,
मन-ही-मन मैं फिराद करूं।

साईनाथ दया करना...

तुम आओ न आओ यहां साई
दिन रात मैं तुझे बुलाया करूं।
जिस पथ पर पांव धरे तुमने,
पलक उस पथ पै बिछाया करूं।

साईनाथ दया करना...

तेरे चाहने वाले को चाहा करूं,
कुछ और न साई पास मेरे।
नित प्रेम प्रसाद चढ़ाया करूं॥

साईनाथ दया करना...

साईं श्याम

शिरडी वाले हो साईं श्याम ।
शिरडी वाले साईं राम ।
अल्ला साईं, गोला साईं...
अंधियारों में भटक रहा हूं ।
डगर न पाऊं घबराता हूं ।
राह दिखा दो खो न जाऊं ।
दया करो साईं, कृपा करो ॥
तू तो है प्रभु दीन दयाला ।
इस जग का तू पालन हारा ।
सबकी बिगड़ी बनाने वाला ।
मदद करो साईं मदद करो ॥
मदद करो साईं मदद करो
नैय्या मेरी टूटी हुई है ।
बीच भंवर में डोल रही है ।
साहिल मुझसे बिछड़ गया है ।
रहम करो साईं, रहम करो ॥

भजन

शिरडी निवासा, साईं राम बोलिये ।
साईं के हजार नाम बार-बार बोलिये ।
साईं राम बोलिये,
राम ही राम बोलिये
हरे राम बोलिये,
जय जय राम बोलिये ।

शिरडी निवासी, साईं राम बोलिये ।

साईं के हजार नाम, बार-बार बोलिये ॥

राधे श्याम बोलिये,

गोपाल राम बोलिये,

गोविन्द हरि बोलिये,

सीता राम बोलिये,

शिरडी निवासी साईं राम बोलिये ।

साईं के हजार नाम, बार-बार बोलिये ॥

साईं के गुण गाये जा

साईं के गुण गाओ मनुवा

साईं के गुण...

सच्चे दिल से उसके चरणों पर

तू शीश नवा...

जिसकी आज्ञा पालन करते

सूरज, चांद, सितारे,

तीन लोक में युग-युग

जिसकी आरती करते सारे

तज अभिमान लिपट चरणों से

अपनी बात मना...

अपने साईं के लाखों चाकर

पूजा करें दिन, रात,

सबकी आशा पूरी करता

मैं उसकी करामात,

मांगना है जो मांग ले

साईं से कैसा पर्दा...

सर्व कला सम्पूर्ण साईं
 जल से दिए जलाए,
 कड़वी नीम को मेरा बाबा
 मीठी कर दिखलाए,
 चमत्कार हैं लाखों जिसके
 उसकी शरण में आ...
 आनन्द की अब बात है जाती
 पूरी करो अरदास
 तृप्त करो इतना कि
 कोई रह न जाए प्यास
 हम गरीबों को भी एक दिन
 बाबा गले लगा...

भजन

मोहब्बत के दाता, जमाने के आली,
 मेरे साईं बाबा की महिमा निराली ।
 तेरे घर में हैं दीप, पानी से जलते,
 हजारों ने अपनी, बिगड़ी बना ली,
 मेरे साईंबाबा की महिमा निराली । मोहब्बत...
 हुई नीम मीठी जो तेरी नजर हैं ।
 तेरे कच्चे तागे पै आबाद पर है,
 मिले दिल के मकसद जो, आया सवाली । मेरे साईं...
 जमाने के लूटे, गंमों के सताए,
 तेरे दर पे आए, तेरे दर पे आए,
 दुआ कर दुआ कर, गरीबों के बाली,
 मेरे साईंबाबा की महिमा निराली । मोहब्बत के...

भक्ति गीत

शिरडी के साईं बाबा, तेरी दुहाई बाबा,
तेरी शरण हम आ गए, ओ साईं हम तो जन्म जनम के
सुख पा गए।

ना कोई ऊंचा, ना कोई नीचा, तेरे इस दरबार में,
जो भी चाए सब कुछ पाए, निर्मल प्यार में।
ओ मन मोहक मूरत वाले, तुम सबसे हो निराले,
दीन हे दयालु हम आ गए। ओ साईं हम तो...।
ना मांगें हम हीरे मोती, मा चांदी ना सोना
हमें तुम्हारी कृपा चाहिए, और हृदय का कोना,
हम को हाथ दया का देना अपनी छाया में लेना,
लीला तुम्हारी हम जानू गए। ओ साईं हम तो

भजन

जय परमात्मा जय, जय निराकार जय।
जय ओंकार जय, जय ज्योतिस्वरूप जय।
जय प्रपंचाकार जय, जय सत्यस्वरूप जय।
जय साक्षीभूत जय, जय प्रेमस्वरूप जय।
जय अन्तर्यामी जय, जय सच्चिदानन्द जय।

भक्ति गीत

ओ शिरडी के साईं बाबा हमरे गुसाईं बाबा,
आये हम तेरे दरबार में। ओ साईं...

चाहे अमीर हो, चाहे गरीब हो,
 सब ही समाये तेरे प्यार में। ओ साईं...
 दूर-दूर से तेरे दर्शन करने आते नर-नारी,
 कलियुग के अवतारी बाबा, तुम हो बड़े चमत्कारी
 पत्थर का सिंहासन तेरा, आसन बड़ा निराला,
 तेरे द्वार पर छूआछूत का कभी न लगता ताला।
 तू है दयालु दाता, सब जग तेरा गुन गाता,
 तुम सा न कोई संसार में। ओ साईं...
 हिन्दू, मुस्लिम, सिख, ईसाई, सबसे है तेरा नाता,
 तेरे द्वार पर आकर कोई, खाली हाथ नहीं जाता।
 दीन की रक्षा करने, धूनी तरी जलती,
 तेरी दुआयें जिनके साथ हों उनकी बलायें टलतीं।
 तेरी शरण जो आता, जिसका है तू अपनाता,
 नैय्या न डूबे मंझधार में। ओ साईं...
 निर्धन को धन, निर्बल को बलवान तू ही करने वाला,
 अन्धों में आंखें, गूंगों में जवान तू ही भरने वाला।
 लंगड़े लूले तेरी आस कर पास तेरे जब आते,
 तेरी दुआ से ऐसे रोग क्या महा रोग मिट जाते।
 कांटे भी तुझको प्यार, फूलों के तुम रखवारे,
 सब ही गुंथे है तेरे हार में।

गुरु चरण प्रीत मोरी लागी रे

गुरु चरण प्रीत मोरी लागी रे।
 सोता थी में जनम-जनम से,
 गुरु शब्द से जागी रे। गुरु चरण...

हाट बाजार फिहं मतवाला,
 लोक लाज सब खोई रे। गुरु चरण...
 कोऽहम कोऽहम पूछत रागी,
 सोऽहम कहत बिरागी रे।
 ना मैं रागी, ना मैं बिरागी,
 रंग राग से भागी रे।
 गुरु चरण प्रीत मोहे लागी रे।

हरिद्वार मथुरा काशी

हरिद्वार मथुरा काशी शिरडी में तीरथ सारे हैं।
 साईं बाबा के चरणों में चारों धाम हमारे हैं ॥४॥
 सब सतों में महासन्त साईं दुनिया से न्यारे हैं।
 नर-नारी, बालक बूढ़े सबही को साईं प्यार है
 यूँ रख हो या अज्ञानी, पण्डित हो या बिद्वान।
 एक नजर से देखे साईं, सबको देते हैं वरदान।
 कौन बिगाड़ सकता उसको जिसके साईं रखवाले हैं।
 साईं बाबा के...

महाराष्ट्र की पावन भूमि इसको कोटि प्रणाम है।
 इसकी माटी के कण-कण में लिखा तुम्हारा ही नाम है।
 तेरे मंदिर में आये तो, दुनिया से क्या काम है।
 शिरडी हमारा वृन्दावन है शिरडी गोकुल धाम है।
 साईं हमारे कृष्ण कन्हैया, साईं हमारे राम हैं ॥
 साईं बाबा के...

सुर की गत मैं क्या जानूँ

सुर की गत मैं क्या जानूँ ? एक भजन एक जानूँ ।
अर्थ भजन का भी गहरा, उसको भी मैं क्या जानूँ ?
प्रभु प्रभु प्रभु करना जानूँ, साई साई साई करना जानूँ,
बाबा बाबा करना जानूँ, नैना जल भरे ना जानूँ ॥घृ॥
गुण गाये प्रभु आंख न खोले, गुण गाये साई आंख न खोले
गुण गाये बाबा आंख न खोले, फिर क्यों तुम गुण गाते हो ।
मैं भोला मैं प्रेम दीवाना इतनी बातें क्या जानूँ ।
प्रभु प्रभु प्रभु करना जानूँ नैना जल भरे ना जानूँ ॥

अब सौंप दिया इस जीवन को

अब सौंप दिया इस जीवन का, सब भार तुम्हारे हाथों में,
साईनाथ तुम्हारे चरणों में
है जीत तुम्हारे हाथों में, और हार तुम्हारे ही हाथों में,
साईनाथ तुम्हारे चरणों में
मेरा निश्चय बस एक यही, एक बार तुझे पा जाऊँ में,
अरपित कर दूँ दुनिया भर का, सब प्यार तुम्हारे हाथों में
साईनाथ तुम्हारे चरणों में
मैं जग में रहूँ तो ऐसे रहूँ, जैसे जल में कमल का फूल रहे
मेरे अवगुण दोष समर्पित हों, करतार तुम्हारे हाथों में
साईनाथ तुम्हारे चरणों में
यदि मानव का मुझे जन्म मिले, तब-तब चरणों का पुजारी बनूँ
इस पूजक की एक-एक रग का हो तार तुम्हारे हाथों में
साईनाथ तुम्हारे चरणों में
मुझमें तुझमें बस भेद यही, मैं नर हूँ तुम नारायण हो,
मैं हूँ संसार के हाथों में, संसार तुम्हारे हाथों में
साईनाथ तुम्हारे चरणों में

साई नाम की धून लगाते चलो

साई नाम की धून लगाते चलो,
प्रेम के आंसू बहाते चलो ।
आन पड़े जब कष्ट कभी,
मन में साई को बसाते चलो ॥
नाम साई का मंगलकारी जानत है जग सारा ।
पाप कटेगा साई नाम से जीने का है सहारा ।
श्रद्धा प्रभु बढ़ाते चलो, श्रद्धा सबुरी चढ़ाते चलो ।
प्रेम के आंसू बहाते चलो ॥
डूब रहा जो बीच भंवर में उसे बाबा है रखवाला ।
भव सागर से जीवन नैया पार लगावन वाला ।
आशा दीप जलाते चलो ।
प्रेम के आंसू बहाते चलो ॥
साई बिना जग में कोई न अपना झूठी है जग माया ।
योगेश्वर साई नाम सुमिरले जग में क्यों भर माया ।
ज्ञान की ज्योति जगाते चलो ।
प्रेम के आंसू बहाते चलो ॥

उसके ऊपर

उसके ऊपर पड़ नहीं सकती दुखों की परछाई,
जिसकी रक्षा खुद करते हैं शिरडी वाले साई ।
सूरज के प्रकाश से जैसे हो जाता है सबेरा,
ऐसे ही साई कृपा में गम का मिटे अंधेरा ।
हो जाती है दूर निराशा मिटते सभी झमेले,
साई के चरणों में लगते आशाओं के मेले ।

चाहे कितनी मुश्किल आयें होना नहीं उदास,
साई बाबा भक्तों की पूरी करते अरदास।
श्रद्धा से और प्रेम से जो भी नाम साई का लेते,
पर्वत उनको शीश झुकाते, सागर रस्ता देते।

हे साई शंकर

हे साई शंकर। हे भगवान कर दो जीवन का कल्याण।
तू प्रभु अन्तर्यामी है। तीन लोक के स्वामी है।
तेरी लीला शक्ति समान। कर दो...
तू तो प्रभु अविनाशी है। तू घट घट का वासी है।
तू सब के प्राणों का प्राण। कर दो...
जय में दुख बड़े पाये। शरण तुम्हारे हम आये।
हर लो हर लो हुख महान। कर दो...
अवगुण मेरे चित न करो। नैय्या मेरी पार करो।
हम सब धरें तुम्हारे ध्यान। कर दो...
विनती मेरी सुन लीजे। प्रभु प्रिय भक्ति हमें दीजे।
हम सब बालक अंजान। कर दो...

सब रूठे पर साई न रूठे

सब रूठे पर साई न रूठे।
सब छूटे साई कृपा न छूटे॥
जहाँ जहाँ पर चरण साई के।
झुके वहीं पर शीश हमारे।

मेरी दौलत साईं भक्ति है।

यह सम्पत्ति कोई न लूटे

तोड़ के सब माया बन्धन को।

शरण में आया साईं चरण को।

साईं प्रेम में ये बंध जाऊं।

यह मेरा सौभाग्य न फूटे

मुझ पापी पर रहम नजर कर।

पतित को पावन राह दिखा कर।

भक्ति भाव की भिक्षा देकर।

जनम मरण का कष्ट मिटा दे।

मेरे मन मंदिर प्रभु साईं।

कहीं कभी हो जाए न खाली।

उधर हृदय से तुम आओ और।

इधर सांस की डोरी टुटे।

चरणों में तेरे रहे ध्यान

चरणों में तेरे रहे ध्यान।

साईं दो ऐसा वरदान

काम क्रोध माया से छुड़ाओ।

दुःख व्याधी से मुक्ति दिलाओ।

सुख, शांति, संतोष दे कान

भक्तों का रखवाला साईं।

संकट में दौड़े आये साईं।

मुझ पर भी थोड़ी कृपानिधान।

श्रद्धा सबुरी हमें सिखला दो।

प्रेम की मन में ज्योति जगा दो।

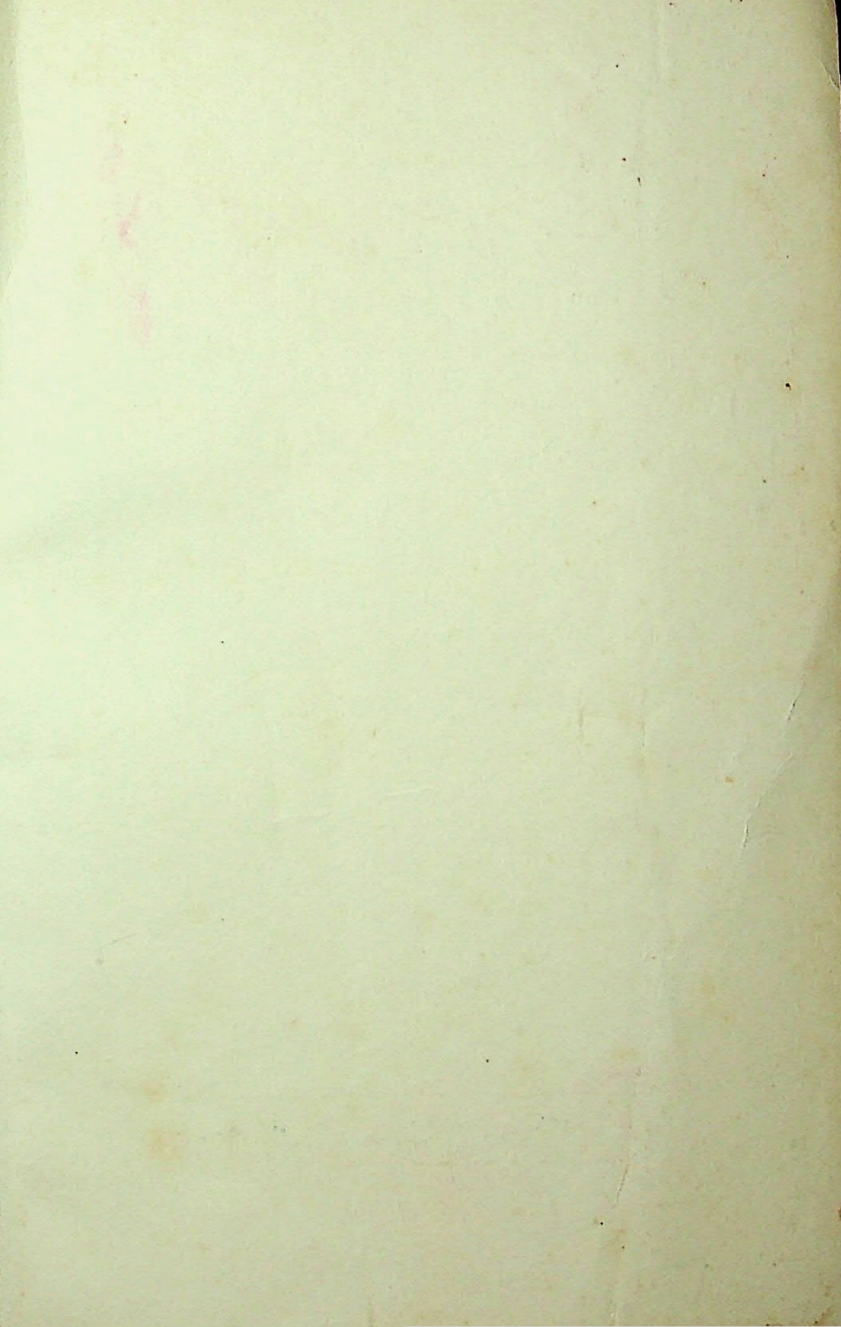
साईं साईं रटते निकले प्राण।

साई रहम नजर करना, बच्चों का पालन करना ॥
 जाना तुमने जगत सारा, सबही झूठ जमाना ॥ साई०
 मैं अंधा हूँ बंदा आपका, मुझको प्रभु दिखलाना ॥
 दास कहे अब क्या बोलूँ, थक गई मेरी रसना ॥

रहम नजर करो अब मोरे साई ।
 तुम बिन नहीं चैन जरा भी आयी ॥
 मैं अंधा हूँ बंदा तुम्हारा ॥
 मैं ना जानूँ, अल्लाइलाही ॥
 खाली जमाना मैंने गवाया ॥
 साथी आखर का किया न कोई ॥
 अपने मस्जिद झाड़ू गनू है ॥
 मालिक हमारे, तुम बाबा साई ॥

हुक्का, चिलिम

लेन जी महाराज हुक्का भर लायो ॥
 दीनके दयाल साई अरज सुनीयो ॥
 मनकी चिलिम भरिये तन का गुडाख् ॥
 ज्ञान अंगार सुलगायो ।
 निर्गुण हटा सगुणही नेचा ।
 प्रेमजल हम भरियो ।
 भाव भगत के तुमही प्यारे ।
 आनंद खूब रंग उडायो ।



शिरडी के साईं बाबा

शिरडी के महान संत साईबाबा को कौन नहीं जानता है । यह अनुपम चरित-पुस्तक आपको शिरडी के साईबाबा की सम्पूर्ण ज्ञांकी प्रस्तुत करती है । साईबाबा का यह चरित्र अत्यन्त आनन्ददायक और कल्याणकारी है । श्रद्धालु भक्तों के लिए यह एक वरदान है ।



साधना पॉकेट बुक्स